सद्धर्मी-विधर्मी गीताञ्जली

(गद्य-पद्यमय)

-आचार्य कनकनन्दी

: पुण्य-स्मरण :

शान्ति-क्रान्ति-एकान्त-निराडम्बर-बिना बोली के नन्दौड़ के एक परिवार में तृतीय चातुर्मास

स्वैच्छिक अर्थ सौजन्य (ज्ञानदानी)

ब्रा.ब्र. रोहित (आचार्य श्री कनक नन्दीजी से प्राय: दो वर्ष अध्ययन किया) (वर्तमान मुनि श्री वत्स नन्दी) की मुनि दीक्षा के अवसर पर गोद भराई की राशि से स्व प्रेरित ज्ञानदान

ग्रंथाङ्क-323 संस्करण -2019
प्रतियाँ - 500 मूल्य- 151 /- रु.

प्राप्ति स्थान एवं सम्पर्क सूत्र

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त
(1) धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा
चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001/मो. 082337 34502
(2) डॉ. नारायणलाल कछारा
सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

ACHARYA KANAKNANDIJI GURUDEV IS A GREAT INTELLECTUAL

Pokharna (Senior Scientist of ISRO)

Dear Hitansji

Jai Jinendra

Thanks lot for this email Kindly convey my charansparsh with vandan of tikhutto to Aacharya Bhawan. I had this darshan in 2013 but could not meet him later But I remember him daily as his picture is there with me I have very high regards for him. I know that he is a great intellectual and close to Tirthankaras.

Kindly inform him that we in Ahmedabad have started a Science and spirituality Research Institute for taking up such projects with more focus on Jainism. Kindly request him to give his blessings to us.

We would shortly purchase some of his books kindly send us phone number of the contact person who is regular contact with him so that we can talk to him also. Also send us the name of the publisher who can provided these books to us.

Best regards

Pokharna (Senior Scientist of ISRO)

वीतराग विज्ञान यथार्थ धर्म

वाग्वर अञ्चल के जैन अजैन में सद्भावना युक्त भीलूड़ा ग्राम में प्रवासरत प.पू. स्वाध्याय तपस्वी वैज्ञानिक श्रमणाचार्य श्री कनकनन्दी गुरुवर ससंघ निश्रा में आचार्य श्री के वैज्ञानिक शिष्यों ने विशेष आध्यात्मिक विज्ञान का बोध प्राप्त किया। प्रातःकालीन सत्र में आचार्य श्री ने क्वाण्टम, स्ट्रींग, प्रकाश सिद्धान्त, सप्तभंगी, ज्ञानचेतना आदि बहुआयामी विषयों का समीक्षात्मक बोध देते हुए कहा कि विज्ञान सत्य पथ पर होते हुए अभी पूर्ण सत्य को प्राप्त नहीं किया है। गुरुदेव ने शाश्वतिक सत्य का ज्ञान देते हुए कहा कि वीतराग विज्ञान ही यथार्थ धर्म है।

माध्याह्निक सत्र में उपस्थित ग्राम व अञ्चल के भक्त शिष्यों व वैज्ञानिक जनों ने भी गुरुदेव के प्रति श्रद्धा भक्ति भाव अभिव्यक्ति के माध्यम से गुरुदेव के आध्यात्मिक

गुणों की पूजा प्रशंसा अनुमोदना की। क्वांटम मैकेनिक्स के वैज्ञानिक डॉ. पी.एम. अग्रवाल ने कहा कि गुरुदेव श्रीसंघ की पवित्र लक्ष्य युक्त उत्तम साधना आदर्श है एवं आपके अभी के साहित्य से अध्यात्म की गहराई मिल रही है। कृषि वैज्ञानिक डॉ. एस.एल. गोदावत ने आचार्य श्री को शान्त, उदार, अद्वितीय सन्तप्रवर बताते हुए आस्ट्रेलिया के सिडनी शहर में समयसार के स्वाध्याय का संस्मरण सुनाते हुए प्रभावी स्वरचित आध्यात्मिक कविता सुनाई, जिसे सुनकर आचार्य श्री संघ व श्रोता भाव विभोर हुए। वैज्ञानिक डॉ. एन.एल. कछारा ने विश्व धर्म संसद के शिखर सम्मेलन का संस्मरण सुनाया। उनकी स्वरचित कृति "Living System in Jainism" का विमोचन भी आचार्य श्रीसंघ के कर कमलों से हुआ। आचार्य श्री सृजित साहित्य के ग्रंथालय के कार्यभार कर्त्ता भी छोटूलालजी चित्तौड़ा ने भी अपने भाव व्यक्त किए। अन्त में सभा को सम्बोधित करते हुए आचार्य श्री ने क्रान्तिकारी अध्यात्म बोध देते हुए कहा कि मैं स्वयं अमृत कलश हूँ सम्पूर्ण धर्म पञ्च परमेष्ठी स्वयं में स्थित है, शक्ति की अभिव्यक्ति होने पर शाश्वत सुख प्राप्त होता है। गुरुदेव ने बताया जो स्व-आत्मा को नहीं जानते ऐसे न्यायाधीश, दार्शनिक, वैज्ञानिक का भी आध्यात्मिक आयाम वृक्ष कीट पतंग जैसा ही है। गुरुदेव ने कहा कि स्व उद्धार से परउद्धार भी सहज होता है। उपस्थित भव्य जीवों को आशीर्वाद देते हुए कहा कि आपकी भावना-भक्ति-शक्ति उत्तरोत्तर वृद्धि हो, शाश्वत आनन्द प्राप्त हो ऐसी मंगल भावना करता हूँ।

श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

दूषित परिणाम ही यथार्थ से भाव हिंसा

- प्रो. डॉ. पारसलमल अग्रवाल

यह मेरा परम सौभाग्य है कि ऐसे सन्त का दर्शन मुझे मिल रहा है, जिन्होंने 39 वर्ष की पवित्र उत्तम साधना की हो। आज कई मुनिराजों के बारे में बहुत सारी बातें सुनने को मिलती है। किन्तु ऐसी पवित्र व उत्तम साधना, किसी प्रकार की कोई साधना में मलिनता नहीं।

कोई सपनों में भी नहीं सोच सकता कि आचार्य श्री कनकनन्दी श्रीसंघ में किसी प्रकार की मलिनता हो। मैं इन शब्दों के साथ आचार्य श्री को वन्दन करता हूँ

कि हमें बहुत इस तरह के शुभ अवसर दीक्षा दिवस मनाने के बार-बार मिलते रहें। मैं सोच रहा था कि इस अवसर पर मैं क्या समर्पित करूँ ? समयसार की बात करूँ या रत्नकरण्ड श्रावकाचार की या तत्त्वार्थ सूत्र की बात करूँ। मैं इसीलिए भी बात कहता हूँ कि गलती हो तो सुधार हो जाता, परन्तु मैं यहाँ की महिला समाज को देखकर मेरी यह भावना बनी कि कुछ ऐसी जानकारी मैं देऊँ कि हम सबके जीवन में तत्काल (Immidiat) लाभ हो। हम दशलक्षण पर्व में पूजा बोलते हैं और उत्तमक्षमा का दोहा बोलते हैं, अर्घ्य चढ़ाते हैं। बोलते हैं तब ऐसा लगता है कि यह सब बोलने के लिए है। हमें विश्वास नहीं होता कि-

गाली सुनि मन खेद न आनो, गुन को औगुन कहै अयानो।
कहि है अयानो वस्तु छीनै, बाँध मार बहुविधि करे।
घर तैं निकारै, तन विदारै, वैर जो न तहाँ धरै।।

हमें लगता है कि यह सब बात मन्दिर में पूजा करने की है, केवल बोलने की है। मैं आज इसमें कुछ जान डालना चाहता हूँ। एक बात और बताना चाहता हूँ कि पश्चिम में अमेरिका में मैं काफी रहा हूँ। अमेरिका में न केवल सांइटिस्ट बल्कि मनोवैज्ञानिक विद्वान् उनको भी पढ़ने का बहुत अवसर मिला। आज की तारीख में जो सबसे ज्यादा बिकने वाली किताब है उसका नाम है- You can heal your life. आचार्य श्री ने उस किताब पर लेखनी चलाई है कि आप अपने जीवन को चंगा कर सकते हो। उसका हिन्दी अनुवाद भी उपलब्ध है। हो सकता है कि आचार्य श्री के कमरे में भी वह किताब हो! (आचार्यश्री ने समर्थन में कहा कि यह किताब है व संघ में पढ़ाया भी हूँ।) उसका 24वाँ पृष्ठ खोलिए और उसमें एक लाइन है कि सभी रोग अक्षमा के कारण होते हैं। इस किताब की 3,0000000 (तीन करोड़ प्रतियाँ बिक गई। पश्चिमी देशों के जो लोग पढ़ते हैं वो कहते हैं कि सभी रोग अक्षमा के कारण होते हैं। और आगे लिखा है कि जब भी आप बीमार हो तो ये सोचिये कि किसको क्षमा करना बाकी है, जिस पर क्रोध हो। इस नुस्खे को आजमाना बहुत कठिन है। इस कठिनाई को हल करने के लिए अमेरिका में एक रिसर्च (Research) हुई है, और वहाँ की एक STANFORD यूनिवर्सिटी (University) है, वहाँ एक वैज्ञानिक ने रिसर्च (Research) करके जो बताया व पूरी किताब लिखी है।

आप जाइए अमेरिका में वहाँ 18,000 रू. (अठारह हजार) में चार लेक्चर (Lecture) देगा और वह आपको क्षमा सिखाएगा ताकि आपको उससे विभिन्न लाभ होता है। हो सकता है कि यहाँ पर भी आया और उदयपुर में अच्छी होटल में बुलाकर आपको लेक्चर (Lecture) देगा तो हम लोग उमड पडेंगे, परन्तु यहाँ पर आचार्य श्री कनकनन्दी गुरुवर को सुनने के लिए फुर्सत नहीं है। हमारा सबसे बड़ा प्रश्न है कि -

''घर तै निकारै, तन विदारै, वैर जो न तहाँ धरै'' । यह कैसे सम्भव है? हमारे तो गाली सुनने में ही खेद आता है तो क्षमा कैसे करेंगे ? उसका कहना है कि मैं 18,000/-(अठारह हजार) रू. की बात जैन धर्म से जानता हूँ, लिखता हूँ व बोलता हूँ। हमारे महावीर ने, हमारे आचार्यो ने बताया कि आप गृहस्थ हो, आप क्षमा का लेवल (Level) अलग है और इन मूर्तियों (साधुओं) का क्षमा लेवल अलग है। हिंसा चार तरह की होती है और ये मुनिराज चारों तरह की हिंसा से रहित होते हैं। गृहस्थ को केवल संकल्पी हिंसा नहीं होना चाहिए। बाकी आरम्भी हिंसा, उद्योगी हिंसा व विरोधी हिंसा कम से कम हो। उसे कम करना है। तो एक बार आपको यहाँ किसी ने गाली दी, चोर ने चोरी की, कोई पैसा नहीं दे रहा है, किसी ने कुछ भी हानि की हो तो आप विरोधी हिंसा कर सकते हैं। आप प्रतिकार करिये, गृहस्थ के रूप में जितना प्रेशर डालना हो डालें, आपको अदालत में जाना है, जा सकते हैं, चार जनों से कहलवा सकते हैं। परन्तु क्या नहीं करना है ? देख लूंगा उसको! गुस्सा नहीं करना संक्लेश नहीं करना, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, वैर नहीं करना। यदि यह करते हो तो आप संकल्पी हिंसा कर रहे हैं।

हमारे भगवान महावीर व आचार्य भगवन्त कहते हैं कि उसका नुकसान होगा या नही होगा, पर तू तेरी रक्षा के लिए, तेरे अच्छे के लिए खेद मत कर, ईर्ष्या मत कर। तुझे जो प्रतिकार आदि करना है वह विनम्रता पूर्वक सही तरीके से करना है। तो मूलतः जो 18,000 (अठारह हजार) रूपये देकर सीखता है कि गृहस्थ को, हम लोगों को Irritation यानी चिड़चिड़ाहट आदि भाव मन में नहीं आना चाहिए। तो ''घर तै निकारे, तन विदारै, वैर जो न तहाँ धरै''। इसका मतलब या कि अगर घर से निकाल दिया है तो आप सोचो कि घर कैसे वापस प्राप्त करना है। ''तन विदारै, वैर

जो न तहाँ धरै'' के बाद आप विचार कीजिए कि कैसे इसको समझाना है कि कैसे इसको पाठ पढ़ाना है। परन्तु आपको क्या करना है वो विषय है कि ''वैर जो न तहाँ धरे'', आप वैर मत करिए। इसका है कारण वैरत्व रखना ही संकल्पी हिंसा है। मेरी भावना है कि मैं कभी भी आचार्य श्री के सन्मुख अवश्य आचार्य अमृतचन्द्र सूरी को आमंत्रित करता हूँ। अमृतचन्द्र सूरी क्या कहते है ? ''सर्व सदैव नियतं भवति''। सब कुछ सदैव (हमेशा) नियतं निश्चित नियमों के अनुसार (भवति) होता है। आगे लिखते हैं, देखो अज्ञानी ऐसा मानता है। ये बात दूसरी है कि चोर ने अपने ही कर्मों के उदय से चोरी की तो क्या हम वसूल नहीं करेंगे ? तो हमें मालूम नहीं कि हमारे कर्म के उदय से की या नहीं की, पर चोर को तो अवश्य पाप लगेगा चाहे नुकसान हमारे कर्मों के उदय से हुआ हो, पर चोर ने जो बुरे भाव किए हैं, उसका पाप अवश्य लगेगा। जैसे-चाहे हम अपने कर्मों से स्वस्थ्य होते हैं किन्तु डॉक्टर ने बचाने की कोशिश की है तो उसका फायदा उसे मिलेगा।

आज गुरुदेव के कक्ष में मुझे रामचरित मानस देखने का अवसर मिला तो मुझे लगा कि आज का जो टॉपिक (Topic) है उससे सम्बन्धित कुछ पंक्तियाँ इसमें भी है। ऐसा नहीं हैं कि केवल जैन लोगों ने ही क्षमा का ठेका ले रखा है, ये बात सबके लिए लागू होती है। इसका बेस्ट उदाहरण गुरुदेव के पास रामचरित मानस में मैंने देखा। उसके पृष्ठ 345 पर चौपाई देख रहा था। अयोध्या काण्ड में लक्ष्मण का सम्वाद था कि सीता और राम कुश आसन पर सोए हुए हैं, रात्रि का समय है भीलों का राजा निषाद और लक्ष्मण दोनों बैठे हैं और नींद न आए इसके लिए वार्तालाप कर रहे थे। ये तो विद्वानों का वार्तालाप है और वैसे भी जो ये प्रसंग है वो मैंने रामचरित मानस में कई बार पढ़ा है और जो बेस्ट (सर्वोत्तम) प्रसंग है, इस पर आचार्य श्री पूरी किताब लिख रहे हैं। इस सम्बन्धी (क्षमा) आचार्य श्री की पूरी पुस्तक है, वे बोलते, लिखते व आचरण करते हैं। रामचरित मानस में वे दोनों चर्चा करते हैं- कैसी कैकेयी माता जिनके कारण इतने महान् व्यक्ति राम व जनक पुत्री सीता को आज ऐसे दिन देखने पड़ रहे हैं। और भी बहुत कुछ बोला-

कैकयनंदिनी मंदमति कठिन कुटिलपनु कीन्ह।
जेहि रघुनंदन जानकीहि सुख अवसर दुखु दीन्ह।।

लक्ष्मण कहते हैं- बोले लखन मधुर मृदु बानी, ग्यान बिराग भगति रससानी। हमेशा जो आध्यात्मिक पुरुष होता है उसके मुख से जो वाणी निकलती है, वह मधुर मृदु वाणी ज्ञान विराग भक्ति रस सानी होती है।

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता, निजकृत करम भोग सबु भ्राता।

है किसी की हिम्मत जो कह सके कि रामजी व सीताजी अपने ही कर्मों को भोग रहे हैं। आप कह दो तो वो लड़ने के लिए तैयार हो जाएंगे। उन्होंने ऐसा क्या पाप किया है, उन्होंने तो कभी पाप ही नहीं किया है। इसीलिए तुलसीदासजीने भी उस पाप को सबसे ऊपर लक्ष्मण जी से कहलवाया। तुलसीदास जी की तो कहने की हिम्मत नहीं थी।

काहू न कोउ सुख दुख कर दाता, निजकृत करम भोग सब भ्राता। और फिर इसके आगे जो लिखा है कि आपको लगेगा-

जोग बियोग भोग भल मंदा, हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा।
जनमु मरनु जहँ लगिजगजालू, संपत्ति बिपति करमु अरु कालु।।

मुद्दे की बात यह है कि मन-वचन काय से ऐसा विचार नहीं कीजिए रोष, काहूँ न देऊँ दोष'' ऐसा विचार कर भाई रोष मत करो, किसी को दोष मत दो। आगे वो कहते हैं-

''सखा सकल परमातम दे हूँ, मन-कृत वचन राम सनेहूँ''।

राम का मतलब भैया कौन? कोई विश्वास नहीं करेगा कि राम का मतलब कौन ? आगे तत्काल बाद लिखते हैं-

राम ब्रह्म परमारथ रूपा, अविगत अलख अनादि अनूपा।
सकल विकार रहित गतभेदा, कहि नित नेति निरूपहि वेदा।।

हमारे अन्दर जो आत्मा है, वह राम है। राम जिसे हम बोलते हैं उससे निकला राम जो कि ब्रह्म है, परमार्थ रूप है, अविगत, अचल, अनादि, अनूप, सकल विकार रहित और भेद रहित, जिसे नेति नेति के द्वारा भेद वर्णन करते हैं।

इसकी गाथा गुरुदेव से सुनोगे तो हो सकता है कि एक महीने में भी दो लाइनों की व्याख्या नहीं हो सकती।

मतलब यह है कि हमारे को जीवन के लिए न केवल कर्म सिद्धान्त को पाना

चाहिए परन्तु ये सब समझ में आना चाहिये कि ये सारे धन-दौलत, गाड़ी वगैरह ये सब पर्यायार्थिक नय से है। हमारे अन्दर का जो अमर आत्मा है, उस अमर आत्मा में हमारा ध्यान रहे। हमने गुरुदेव का पूजा-पाठ भक्ति सब किया। यह सब हम अमर आत्मा को पाने के लिए समायोजन करते हैं। और गुरुदेव का आशीर्वाद हमें सदा बना रहे इसी भावना के साथ...। (शब्द रचना-सौ. दीपिका शाह)

आचार्य कनकनन्दी जी गुरुदेव से प्राप्त ज्ञान से कर रहा हूँ स्व-सुधार, स्व उद्धार!

- श्रीपाल जैन, भीलूडा

परम पूज्य वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनन्दीजी गुरुदेव के चरणों में शत शत नमन, संघस्थ साधु-साध्वियों, व्रतियों एवं साधर्मियों को नमोडस्तु, वंदामि, इच्छामि, वंदना एवं जय जिनेन्द्र!

परम पुण्योदय से पिछले 68 दिनों से पूज्य गुरुदेव का पावन सानिध्य भीलूड़ा ग्रामवासियों को प्राप्त हो रहा है, यह यहाँ के निवासियों का असीम पुण्योदय है।! इस पावन काल में मुझे भी पूज्य गुरुवर के पावन सानिध्य में रहने का अवसर प्राप्त हुआ। इसे मैं अपने जीवन का गौरवशाली काल मानता हूँ। मुझे गौरव है कि मैं जैन कुल में पैदा होकर उत्तम देव-शास्त्र-गुरु की शरण को सतत प्राप्त कर रहा हूँ, इस काल में अपने जीवन के 56 वर्ष का काल बिताया, इस काल में कई साधुओं, साध्वियों, आचार्यों, सद्गुरुओं की शरण एवं सत्संग प्राप्त किया एवं धार्मिक ज्ञान, आध्यात्मिक ज्ञान, प्रवचन एवं सत्संग को प्राप्त किया परन्तु अब तक जो मैं समझा था वह पूर्णरूप से गलत था। इसको मैंने अपने भौतिक एवं दैहिक शरीर का माना एवं तदनुसार समझते हुए अपने जीवन में ईर्ष्या, द्वेष, घमण्ड, अहंकार को बढ़ाया एवं अपनी अज्ञानी बुद्धि को बढ़ावा देते हुए अपने आपको श्रेष्ठ, समृद्ध, सद्गुणी, आध्यात्मिक धार्मिक, सेवाभावी, विनम्र एवं विचारवान, अच्छा, वक्ता के रूप में मानने लगा मैंने इसे अपने तन का सुख ,वैभव, ऐश्वर्य, आनन्द माना। यह सब मेरा अहंकार था। इस अहंकार के वश मैंने सद्गुरुओं की शिक्षा को भी अपने भावों से समझा एवं जाना नहीं तथा अशुभ भावों द्वारा उनकी निन्दा की, गलत माना व गुरुवाणी को अहंकारी एवं

स्वयं की प्रशंसा मानकर विरोध किया ऐसा मिथ्याज्ञान एवं मिथ्याभाव मेरा बना।

परम पूज्य आचार्य कनकनन्दीजी गुरुदेव का दि. 14.12.2018 को हमारे गाँव में पुनः आगमन हुआ एवं मैं पूज्य गुरुदेव के पावन सानिध्य में प्रतिदिन पढ़ने के लिए जाने लगा। गुरुदेव द्वारा सबसे पहले शरीर एवं आत्मा के बारे में पढ़ाया गया तथा इस पढ़ाई (स्वाध्याय) के द्वारा आत्मा का स्वरूप ही स्व-स्वरूप है एवं शरीर भौतिक, पुद्गल है, यह नाशवान् है एवं आत्मा अजर-अमर है। इस आत्मा का शरीर के भीतर का स्वरूप है जिसे हम ''मैं'' के रूप में मानते हैं। जो भी क्रिया करते हैं वह **मैं** के लिए करनी है, शरीर के लिए नहीं। आप द्वारा लगातार बार-बार इसको समझाने पर आत्मा एवं शरीर के भेद का ज्ञान हुआ। आपके मैं के सम्बोधन को गलत मानकर आपकी जो निन्दा की उसके लिए मैं अनन्त अनन्त पाप का भागी बना एवं अनन्तानन्त भव तक नरक एवं निगोद के भागी बन गये। गुरुदेव के निरन्तर पढ़ाये जाने से मैं आगे के अनन्त भवों में दुर्गतियों में जाने एवं अनन्तानन्त भव के पापों से छूटकारा प्राप्त हो गया। गुरुवर के ऐसे ज्ञान उपकार के लिए मैं हृदय से गुरु चरणों में वन्दन एवं नमन करते हुए उपकार हेतु विनय भाव प्रकट करते हुए क्षमा प्रार्थना करता हूँ एवं गुरुवर से निवेदन-प्रार्थना करते हैं कि मैंने जो घोर पाप कमाया है उस पाप से मुक्ति प्राप्त करने के लिए तथा देव-शास्त्र गुरु का अविनय के लिए मुझे प्रायश्चित देकर शुद्धीकरण करे।

आप के पास पढ़ने के बाद मेरे जीवन में एक नयी प्रेरणा व दिशा का बोध हुआ। आज के बाद मैं अपने जीवन को संकल्पित करने की क्षमता पैदा करते हुए यह संकल्प करता हूँ कि पराई निन्दा ईर्ष्या-घृणा-द्वेष से सदैव दूर रहते हुए न करूंगा, न करने दूंगा, न करने वालों की सहमति करूँगा तथा मंदिर, धार्मिक स्थान, गुरुओं के साथ ऐसे कर्म या भाव रख कर अनन्तानन्त पाप से बचूँगा, दूर रहूँगा व अष्ट मद नहीं करूँगा। आवश्यक पाप एवं अनावश्यक पापों को समझने का प्रयास करते हुए अपने निजी जीवन में उतारने के लिए संकल्प करूँगा। पूज्य गुरुवर का यथा समय हमें योग्य मार्गदर्शन-आशीर्वाद नहीं मिलता तो मेरा यह श्रावक कुल का श्रेष्ठ अवतार भी उस निगोद एवं नारकीय जीवों से किसी भी प्रकार से भिन्न नहीं था। आज मैंने अपने जीवन में श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम ज्ञान को प्राप्त कर श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम उपलब्धि

को प्राप्त किया, यह मेरे पुण्य काल का उदय मानकर गुरु उपकार मानता हूँ, इस गुरु उपकार की हृदय से प्रशंसा एवं अनुमोदना करता हूँ तथा यह भी स्वीकार करता हूँ कि आपके अलौकिक, श्रेष्ठ ज्ञान के सामने किसी का भी टिक पाना बहुत कठिन है एवं आपकी दृढ़ इच्छाशक्ति प्रसन्न मुद्रा निर्मल भाव सदैव आपकी ओर मेरे को आकर्षित करते हैं तथा मेरे भीतर जो भी ऊर्जा व शक्तियाँ ज्ञान आ रहा है वह आपकी ही देन है। इन सबका आपके बिना मेरे अन्दर पैदा होना पूर्णतः असम्भव है।

मैं इस विषय विचार को यही पर पूरा नहीं करते हुए गुरुदेव के अध्यात्म व ज्ञान को सभी समान रूप से प्राप्त करें तथा सभी के जीवन की बुराईयाँ,, दुर्गुण ईर्ष्या-द्वेष समाप्त होकर हमारे समाज के जीवन में धार्मिक क्रान्ति उत्पन्न होवे। गुरुदेव का ज्ञान अलौकिक है जो संसारी प्राणी मात्र के लिए हितकारी अमृतमय है। आज गुरुवर के चरणों में समस्त प्राणियों के हित में भी यह भाव समर्पित करता हूँ। परमात्मा पद की सभी को प्राप्ति हो, आत्मा रूपी तत्त्व सभी के देह में विद्यमान है, वह चेतना प्राप्त हो और गुरु की शरण में आकर इस भव्य ज्ञान निधि को जानकर सुखमयी बनकर श्रावक कुल की सार्थकता को प्राप्त होवे, इन्हीं मंगल भावों के साथ पूज्य गुरुवर को नमन...वन्दन...आभार...'अभिनन्दन''...।

कनक गुरु की देशना का प्रभाव

चालः- इसी राह में... सहायक-मुनिश्री सुविज्ञसागर जी

रचयित्री- श्रमणि आ. सुवत्सलमती

कनक गुरु की देशना...बोध मिला मैं हूँ चेतना...
मैं हूँ आत्मा...परमातमा...शुद्धात्मा...निज आतमा...(स्थायी)
गुरु वाणी से हृदय खिला...मैं/(स्व, निज) से मेरा परिचय हुआ...
मैं तो चिदानन्द आतमा...आनन्द कन्द निजातमा...
मैं अजर-अमृत हूँ...शुद्धात्मा अभिराम हूँ...मैं हूँ आतमा...(1)
अनादिकाल की मूढ़ता...अज्ञानता को मैं जाना...
घोर अन्धकार में रमा...लख चौरासी योनि भ्रमा...
अनन्त विपरीत मैं रहा...इसका मुझे भान हुआ...
मैं हूँ आत्मा...(2)

मैं/(स्व) को परिचय प्राप्त कर...जीवन धन्य मेरा हुआ...
सद्गुरु कनकनन्दी मिले...पुण्य उदय सातिशय हुआ...
मैं को मैं के शुभ भाव से...मैं में ही पाना लक्ष्य है...
मैं हूँ आतमा...(3)

बड़े भाग्य से नरतन मिला...सुदृष्टि का कमल खिला...
ज्ञान चेतना का उदय हुआ...जीवन पाना सफल हुआ...
'सुवत्सल' भाव से अब...नित्य निजातम रमना...मैं हूँ आतमा...(4)

भीलूड़ा, दि. 12.2.2019

मम परम उपकारी-करुणाधारी श्री कनकनन्दी गुरुदेव

(चालः- आये हो मेरी जिन्दगी में...) (बा.ब्र. रोहित जैन)

आये हो मम जीवन में...उपकारी गुरु बनकेऽऽऽ (2)
आत्मज्ञान विज्ञान...मुझे बोध कराने...(स्थायी)
अर्थ-व्यञ्जन पर्याय...भाव-क्रिया में अन्तर...
प्रदेश का अर्थ...भेद-संघात का बोध...
कनक गुरु से जाना...इन सबका भावार्थ...(1) आत्मज्ञान...

आगम ज्ञान से होता...अधिक वैराग्य...
श्रीसंघ में स्वाध्याय...होता है सतत...
जिससे बढ़े समता...शान्ति भाव विशुद्धि...(2) आत्मज्ञान...

उपहास अपमान...उपेक्षा से न घबराऊँ...
कड़वी औषधि जान...सफलता मैं पाऊँ...
आत्मस्वरूप चिंतन...बढ़ावे पवित्र/(शुचि) भाव...(3) आत्मज्ञान

नकारात्मक भाव है...अवश्य त्यजनीय...
अन्यथा जीव में बढ़े...दीन-हीन विभाव...
विभाव भाव कारण...पंचपरिवर्तन के...(4) आत्मज्ञान...

आध्यात्मिक विषय तो...होते अनुभवगम्य...

टेप (रेकॉर्डर) सम होने से...कोई न स्व को लाभ...
'रोहित' का लक्ष्य है...शुद्ध स्वरूप (मैं) बनूँ... (5)आत्मज्ञान...
नन्दौड़ दि. 25.09.2018 रात्रि 08:42

भक्ति एवं आनन्द कि लहर भीलूडा ग्राम में

(चाल:- चली-चली देखो चली-चली...) कुमार तीर्थेश जैन (कक्षा-IX)

चली-चली देखो चली-चली गुरुभक्ति की हवा चली।
भीलूड़ा ग्राम में आए कनक गुरु भक्ति की बहार चली।। (ध्रुव)
आपको अच्छे लगते हैं बच्चें, आप हमको बनालो आपका विद्यार्थी।
ज्ञान-विज्ञान की लहर चली।। (1) चली-चली...

आप हो आडम्बर रहित, आप स्वयं को मानते विद्यार्थी
इसलिए आप हो महान्...भक्ति भाव की लहर चली।। (2) चली-चली

आप ने हमको बताया ''वसुधैव कुटुम्ब'' की राह पर चलो।
जिससे जगत् में मैत्री भावना बढ़ेगी, मित्र व मित्रता की लहर चली।। (3)

आप हो वैज्ञानिक गुरुवर, आप ने किए है कई अन्वेषण।
शोध-बोध की लहर चली...।।(4) चली-चली...

आपको अच्छे लगते हैं बच्चे, जिससे भीलूड़ा ग्राम में आपकी बढ़ी भक्ति।
बच्चों में भक्ति की लहर चली...।।(5) चली-चली...

आपने गुरुवर हमको 'मैं' का बोध कराया, जिससे हमने जाना मैं को आत्मा कहते हैं
आत्मज्ञान की लहर चली...।। (6) चली-चली...
भीलूड़ा 30.12.2018 अपराह्न 07:30

चमत्कारी ज्ञानी-विज्ञानी कनक गुरु

(चाल :- छोटी-छोटी गैया) - कुमार दक्ष जैन (कक्षा-VII)

कनक गुरु आप हो आत्मज्ञानी...चमत्कारी ज्ञानी व विज्ञानी।

स्वाध्याय में हो महान् गुरु...आपसे पढ़ते हैं वैज्ञानिक तक।। (स्थायी)
विश्व गुरु आप हैं इस जहाँ में...कुन्थु गुरु के आप शिष्य है...
हमको भी बनाओ आपका शिष्य...जिससे हम भी बने ज्ञानी...
सरस्वती पुत्र हो आप गुरुवर...जिनवाणी के हो आराधक...
बाल्यकाल के तीन महान् लक्ष्य...प्राप्त किए हैं श्रमण बनकर...(1)

हम जो हिन्दी प्रयोग करते...वह नहीं है शुद्ध हिन्दी...
आपकी शुद्ध व उच्च भाषा...हम न समझ पाते बाल बुद्धि...
आपकी कक्षा में बार-बार आने से...थोड़ी-थोड़ी समझ में आ रही है...
'दक्ष' भी प्रयास कर रहा है...क्योंकि मुझे बनाना है ज्ञानी...(2)

भीलूड़ा 25.12.2018 प्रातः 10:20

कनक गुरुवर की विशेषताएँ

(चाल :- जिन्दगी इक सफर...)
रचयिता-कुमार तीर्थेश जैन, भीलूड़ा

कनक गुरुवर सबसे न्यारे...आप हो हम सबके प्यारे...
गुरुवर...गुरुवर...गुरुवर...3...सबसे प्यारे गुरुवर...(स्थायी)...
आप हो चौदह भाषा के ज्ञानी...विविध विषय के विज्ञानी...
आपसे मिला हमें भाषा का ज्ञान...हिन्दी का विशेषज्ञान...कनक...(1)
कविता लिखने हेतु आप प्रेरित करते...जिससे हमारा ज्ञान बढ़े...
जिससे आ रहा है आनन्द...अनेक विषयों का ज्ञान...कनक...(2)
छोटे-छोटे गाँवों में आप रहते...प्रदूषण से आप दूर रहते...
जिससे आप हो स्वस्थ ज्ञानी...मैं भी बनूँ स्वस्थ-ज्ञानी...कनक...(3)
आप हो महान् जिज्ञासु...स्वयं को मानते विद्यार्थी...
इसीलिए मैं भी बना शिक्षार्थी...सनम्र सत्यग्राही...कनक...(4)...
आपमें नहीं है भेद-भाव...सबको मानते एक समान...
क्योंकि आप हो उदारभावी...समता शान्ति के धारी...कनक...(5)
भीलूड़ा, दि. 28.12.2018 समय रात्रि 10:00

महान् ज्ञानी गुरुवर कनकनन्दी

(चालः- फूलों का तारों का...) - कुमार ध्रुविन जैन (कक्षा-VI)

ध्रुविन व भक्तों/(मित्रों) का, सबका कहना है...अरबों जन में श्रेष्ठ गुरु हैं...
कनकनन्दी जी विज्ञानी सन्त है...ध्रुविन व भक्तों को...हो...हो...हो...(स्थायी)
आप आध्यात्मिक निराले सन्त हो...कुन्थु गुरुवर के ज्ञानी शिष्य हो...ला...
आप जैसा वैज्ञानिक दुनिया में नहीं...आप जैसा सरल देखा न कहीं...
देशी-विदेशी शिष्य अध्ययन करते हैं...दुनिया से आगे-आगे चलते हैं...(1)

आपके शिष्य श्रमण सुविज्ञ मुनि...आध्यात्मनन्दी है श्रमण मुनि...ला.ला...ला...
आपकी शिष्या है सुवत्सलमत्ती...क्षुल्लिका माताजी सुवीक्षमती...
आपका श्रीसंघ सबसे निराला...सारी दुनिया में सबसे आला...कनकनन्दी...(2)

बाल्यकाल में बनाए महान् लक्ष्य...वैज्ञानिक सन्त व नेता के
लक्ष्य...ला...ला...ला...
वर्तमान में आप तीनों गुण सह...आप हमारे लिए भगवान् स्वरूप...
'ध्रुविन' भी सतत प्रयासरत...क्योंकि मुझे बनना है आपका शिष्य...(3)

भीलूड़ा 27.12.2018 मध्याह्न 02:45

ज्ञानानन्दी कनकनन्दी

(चाल :- हे प्रभु सद्ज्ञान दाता...) बालकवि-कुमार चयन जैन

ज्ञानानन्दी कनकनन्दी...सरल गुरुवर आप हो...
दो मुझे ज्ञान की बूंदे...जिससे मैं ज्ञानी बनूँ...(स्थायी) ज्ञाना...
आप हो विज्ञानी गुरुवर...लेखक व महाकवि...
जिससे मैं भी बन सकूँ...आप सम श्रेष्ठ कवि...
चयन को आशीष दो...मैं भी बन जाऊँ ज्ञानी...ज्ञानानन्दी...(1)

मैं (स्व) को समझा आपने...मुझे भी स्व को जानना...
आपके चरणों में आया,...चयन लेके भावना...
आप सम मुझको बनाओ...मुक्ति पथ का सद्राही...ज्ञानानन्दी(2)

सच्चे ज्ञानी मार्गदर्शक कनकनन्दी गुरुवर

(चालः- तुम दिल की...) ध्रुविन जैन (कक्षा-VI)

टयूंकल ट्यूंकल लिटिल स्टार, कनकनन्दी गुरु सुपर स्टार।
हाउ आय वण्डर वॉट यु आर, आप ज्ञान-विज्ञान में दमदार।।
अप अबव द वर्ल्ड सो हाय, महान् लक्ष्य हमको बताय।
लाइक ए डायमण्ड इन द स्काय, आकाश सम हो आप विशाल।। (1)

आपने ने कराया मैं का ज्ञान, आपने किया अनन्त उपकार।
परिग्रह को बताया महापाप, दान के बताए चार प्रकार।।
हमको पहले नहीं था ज्ञान, भीख-दान व त्याग में अन्तर।
पाप भाव से डोपामाइन स्राव, पुण्य भाव से ओक्सीटोसिन स्राव।। (2)

हमको शुद्ध हिंदी नहीं आती, यह भी आपसे पाया ज्ञान।
आप हो बीस (20) भाषा के ज्ञानी, हमको न है एक भी भाषा का सही ज्ञान
सच्चे ज्ञानी व मार्गदर्शक, आप हमारे हो श्रेष्ठ गुरुवर।
ध्रुविन भी है बाल विद्यार्थी, मुझे भी पाना है आत्मज्ञान।। (3)

भीलूड़ा 23.12.2018, मध्याह्न

वागड के कुछ ग्रामाञ्चलों के विशेष गुण व दोष

(स्व-गुण दोष नहीं जानते, बहुबार सिखाने से आनन्दित होकर
विकास कर रहे हैं व हमारे लिए दान-व्यवस्था-चातुर्मास कर रहे हैं।)

(चाल :- 1. छोटी-छोटी गैया...2. आत्मशक्ति...3. तुम दिल की धड़कन...)
- आचार्य कनकनन्दी

वागड़ के ग्रामाञ्चल में मैं कुछ गुण-दोष अधिक पाया।
यहाँ के लोग हैं गुरुभक्त, आहारदान व्यवस्था में उत्तम पाया।।
स्वच्छ शान्त वातावरण प्रदूषण रहित पहाड़ जंगल पाया।
विविध प्रकार के पक्षियों के कलरव से स्वयं को मैं शान्त-प्रसन्न किया।। (1)

दिगम्बर-श्वेताम्बर जैन हिन्दू व बोहरा मुसलमान को भद्र पाया।

हमारा विनय सभी यथायोग्य करते धार्मिक सौहार्द्र अधिक पाया।
प्राकृतिक प्रकोप भी न अधिक यहाँ, कल कारखाना भी न अधिक पाया।।(2)

अनेक मानवीय गुण भी यहाँ, प्रायोगिक रूप में अधिक पाया।
अतिथि सत्कार व मान-मनुहार, खाना खिलाना भी अधिक पाया।।
परस्पर सुख-दुःख में सहयोग करते, साधु साध्वियों की करते सेवा।
सहृदयी माता के समान आहार देते हैं, आबाल वृद्ध युवा।। (3)

अनेक गुण सहित भी यहाँ मैं निम्नोक्त दोषों को पाया।
स्व-दोषों को न जान पाते, बहुबार सिखाने से जान पाते।।
उच्चतम शुद्ध हिन्दी भाषा न जानते, ग्रामीण व उर्दू शब्द बोलते।
व्याकरण ज्ञान तो प्रायः नहीं जानते, सुनासुनी ही शब्द बोलते।। (4)

आध्यात्मिक व मनोविज्ञान, आयुर्वेद ज्ञान भी कम जानते।
जिससे मेरी भाषा व भावना को, शीघ्रता से नहीं समझ पाते।।
शरीर को ही मैं (आत्मा) मानते, 'मैं' बोलने को घमण्ड मानते।
लौकिक व पाप काम में मैं, 'मेरा' को पाप भी नहीं मानते।। (5)

गुण-गुणी प्रशंसा नहीं करते, करने वालों को गलत मानते।
पर निन्दादि को न गलत मानते, किन्तु निन्दारस पान करते।।
धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय न करते, न ही ज्ञानदान भी करते।
ज्ञान-ज्ञानी व धार्मिक-ग्रन्थों का, आदर-व्यवस्था भी नहीं करते।। (6)

धार्मिक ग्रन्थ लिखना व छपाना, रखना को भी सही न मानते।
भले दो-तीन वर्षों के बच्चों को, पढ़ाने हेतु दबाव डालते।।
लौकिक पढ़ाई व पुस्तकों को व्यर्थ महत्त्व देते गर्व करते।
किन्तु आध्यात्मिक स्वाध्याय को, हेय मानते व न लाभ लेते।। (7)

धार्मिक ज्ञान प्रचार-प्रसार हेतु भी, तन-मन-धन समय न लगाते।
इसकी प्रभावना की चर्चा को भी, नहीं करते करने पर घमण्ड मानते।।
परचर्चा व धनचर्चा पढ़ाई-बढ़ाई व शादी की चर्चा करते।

इसे तो रुचि से करते, 'गुणगुणी कथा दोषवादेच मौनं'' न मानते।। (8)

पूजा-प्रार्थना-आरती-विधान, पंचकल्याण तीर्थयात्रा करते।
किन्तु उनके अर्थ व रहस्य-शिक्षा, फल आदि से अनभिज्ञ रहते।।
उक्त दोषों को बार-बार बताने पर, स्व-दोषों को दूर कर रहे हैं।
दोषदूर कर गुण बढ़ाकर, संघकी भावना-भक्ति से व्यवस्था कर रहे हैं।। (9)

आहारदान-ज्ञानदान-औषधिदान उपकरण दान अधिक कर रहे हैं।
व्यक्तिगत चातुर्मास से सामाजिक, वर्षायोग हेतु आग्रह कर रहे हैं।।
इससे वे पूर्व दोषों का प्रायश्चित करके, ज्ञानी पुण्यात्मा बन रहे हैं।
इससे भी प्रेरित होकर स्व-पर विश्व हित हेतु 'कनक' काम कर रहा हूँ।।(10)

भीलूड़ा दि. 15.02.2019 अपराह्न 06:16

यह कविता सौ. मीनाक्षी w/o विमल जैन (भीलूड़ा) के कारण बनी)

श्रमण निर्वाह हेतु बनते हैं, न कि निर्माण हेतु!

(चाल : कुण्डलिया (छन्द) डॉ. बिमला जैन, फिरोजाबाद

महामुनीश्वर ध्येय है, मात्र एक 'निर्वाण
पर निर्ग्रन्थ स्वरुप में, प्रेरक हैं निर्माण।

प्रेरक हैं निर्माण, वहीं मुनिराज श्रेष्ठ है,
ऊँचे-ऊँचे शिखर, बनाते भवन ज्येष्ठ है।
हो विशाल भूखण्ड, योजना बहुत बड़ी है,
बने विश्व में एक, गगन स्पर्श खड़ी है।।

तनपर 'धागा' तक नहीं, नग्न दिगम्बर रुप,
अति ही अल्प आहार है, उपवासी व्रति भूप।

उपवासी व्रति भूप, छहोरस त्याग दिये है,
अन्न आजीवन त्याग, मात्र कुछ पेय लिये हैं।
ज्ञान-ध्यान लवलीन, तपस्वी बहुत बड़े है,
स्व-पर के कल्याण, सिद्धियाँ लिये खड़े है।।

पर गुरुदेव संकल्प है, लिया एक ही लक्ष्य,
मठ-मन्दिर निर्माण से जीवन करना धन्य।

जीवन करना धन्य, भव्य निर्माण कराना,
अब तक हुआ न होय, विश्व आश्चर्य दिखाना।
अति उतंग बने मूर्ति, देखने जग-जन आना,
शतक हुआ प्राचीन, सहस काउन्ट कराना।।

वही बड़ा आचार्य हैं वहीं श्रेष्ठ विद्वान,
वही बड़ा आदर्श है अनुपम देवस्थान।

अनुपम देवस्थान, योजना अन्य संग है,
गिरि, आलय, दय, धाम, संग में नाम अमर है।
'ध्येय' बना निर्माण, लक्ष्य निर्वाण नहीं है,
श्रेय न, श्रावक-श्रमण, 'विमल' निर्माण रथी है।

विषयानुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृ.स.
(1)	Acharya Kanaknandiji Gurudev is a great intellectual	
(2)	वीतराग विज्ञान यथार्थ धर्म	
(3)	दूषित परिणाम ही यथार्थ से भाव हिंसा	
(4)	आचार्यं कनकनन्दीजी गुरुदेव से प्राप्त ज्ञान से कर रहा हूँ स्व-सुधार, स्व-उद्धार!	
(5)	कनक गुरु की देशना का प्रभाव	
(6)	मम परम उपकारी-करुणाधारी श्री कनकनन्दीजी गुरुदेव	
(7)	भक्ति एवं आनन्द की लहर भीलूड़ा ग्राम में	
(8)	चमत्कारी ज्ञानी-विज्ञानी कनक गुरु	
(9)	कनक गुरुवर की विशेषताएँ	
(10)	महान् ज्ञानी गुरुवर कनकनन्दी	
(11)	ज्ञानानन्दी कनकनन्दी	
(12)	सच्चे ज्ञानी मार्गदर्शक कनकनन्दी गुरुवर	
(13)	वागड़ के कुछ ग्रामाञ्चलों के विशेष गुण व दोष	

सद्धर्मी-विधर्मी गीताञ्जली

(1) मेरी प्रार्थना (मैं भगवान् का भक्त हूँ भीखारी नहीं)
(2) केवल गुणी की प्रशंसा ही मेरा लक्ष्य नहीं
(3) वह धर्म मुझे नहीं चाहिए...! ? वह धर्म मुझे सदा चाहिए! ?
(4) भेद-अभेद 'तू' व 'तेरा'

(5) देहात्मबुद्धि से सांसारिक दुःख तो विदेही भाव से मोक्ष सुख

(6) तन-मन-धन-नाम परे आत्मविकास

(7) आत्म सम्बोधन

(8) मोहात्मक ''मैं'' ''मेरा'' व आध्यात्मिक ''मैं'' ''मेरा''

(9) भेदभाव बनाम V/S भेद विज्ञान

(10) जल से भिन्न कमल सम भरत आदि महापुरुष

(11) मेरा वास्तविक स्वरूप

(12) सम्यग्दृष्टि (जैन) तन धनादि को अपना न माने

(13) मुनि उत्तम निजध्यानी

(14) मेरा स्व-शुद्धात्म चिन्तन (मेरा विश्व रूप)

(15) आत्मा चेतन-अचेतनात्मक

(16) चेतनमय जीवों में भी होते हैं अनेक अचेतन गुण

(17) ''द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः'' का यथार्थ एवं व्यंग्यात्मक कथन

(18) ज्ञान-ज्ञेय-ध्येय-हेय

(19) पर दोषों से शिक्षा ले आत्म वैभव बढ़ाऊँ

(20) धन्य हे! मैंने मेरे भाव जगाया! स्व-गुण दोषों का ज्ञान भी किया!

(21) जैन धर्म में प्रयुक्त कुछ अति विशिष्ट शब्द

(22) आध्यात्मिक गुरु से महान् उपलब्धि

(23) पर नियंत्रण से परे स्व-नियंत्रक 'मैं' बनूँ

(24) अनन्त पंच परिवर्तन परे स्वयं में ही रमण करूँ

(25) मूर्ख V/S विवेकी

(26) अगृहीत व गृहीत अन्धश्रद्धानी(लोकमूढ़, नकलची)

(27) जीवन निर्वाह (V/S) नहीं जीवन निर्वाण

(28) आहार-भय-मैथुन-परिग्रह के दास होते हैं मोही-रागी

(29) कुधर्मी-सुधर्मी का स्वरूप व फल

(30) विविध प्रकार के आत्महत्यारे व पर हत्यारे

(31) रूढ़ि अनीति-नीति से ले आध्यात्मिक

(32) मैं हूँ अकाजकारी गृहणी (गृहणी की आत्मकथा एवं आत्मव्यथा

(33) एक गृहणी माँ पाँच नौकरानी से अधिक कामकाजी

(34) अच्छी माँ का यथार्थ मूल्यांकन

(35) श्रावक के 12 व्रत व अन्त में सल्लेखना (समाधिमरण)

(36) खोटा-छोटा सोच परे बड़ा-अच्छा सोचूँ

(37) विश्व के सर्वोच्च साम्यवाद का सूत्र

(38) क्या धर्म धर्म करता रे! ?

मेरी प्रार्थना (पूजा-आरती-कीर्तन-वन्दन)

मैं भगवान का भक्त हूँ भीखारी नहीं)

(भगवान् के वैभव प्राप्ति हेतु मैं करूँ भगवान् का स्मरण (पूजन, वन्दन) न कि सांसारिक वैभव हेतु)

(चालः- 1. आपकी नजरों ने...2. क्या मिलिए...) - आचार्य कनकनन्दी

हे! प्रभु सद्ज्ञान दाता, आपका करूँ स्मरण/(पूजन, कीर्तन)।
''वन्दे तद्गुणलब्धये'' हेतु आपका करूँ वन्दन।। (स्थायी)
आप सर्वज्ञ हितोपदेशी, अनन्त अक्षय गुणगण।
अनन्त ज्ञान-दर्श-सुख-वीर्यमय, वीतराग, परिपूर्ण।।
राग-द्वेष-मोह-काम-क्रोध-मद-मत्सर से शून्य।
अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा रहित-आत्मिक गुणों में तल्लीन।। (1)

शत्रु-मित्र-भाई-बन्धु-अपना-पराया से शून्य।
पूजक-निन्दक-भक्त-शिष्य-छोटा-बड़ा भाव से शून्य।।
भक्त-पूजक को न आशीष देते न चाहते स्व-पूजन।
शत्रु-निन्दक को न शाप देते न चाहते उनके पतन।। (2)

ये सभी मैं आपकी वाणी से जानता-मानता हूँ।
लिखता हूँ पढ़ाता हूँ प्रवचन भी करता हूँ।।
ऐसे आपके गुणों को मैं महान् आदर्श मानता हँ।
ऐसे आपके महान् गुण प्राप्ति हेतु वन्दन करता हूँ।। (3)

ऐसी मेरी श्रद्धा-भक्ति व प्रार्थना-वन्दनादि से।
मुझ में आपके सम जो गुण सुप्त है जागृत हो रहे।।
इसका मैं अनुभव कर रहा हूँ सतत नवकोटि से।
श्रद्धा-प्रज्ञा-शक्ति-शान्ति बढ़ रही है मुझ में।। (4)

समता-निस्पृह-वीतरागता व दया-क्षमा-शुचिता।
बढ़ रही अहर्निश अनुभव से मैं ये सभी जानता।।

इससे मेरी श्रद्धा-प्रज्ञा-दृढ़ से दृढ़तर हो रही।
आपने जो कहा (व पाया) उसकी उपलब्धि मुझे भी होगी।। (5)

दुःख-कर्म-क्षय, बोधि लाभ व आपकी सम्पत्ति मिलेगी।
इससे अतिरिक्त कुछ न चाहिए ऐसी मेरी परिणति।।
इसके अतिरिक्त अन्य सभी तो मैं अनन्त बार पाया हूँ।
वे सभी तो मेरे लिए वमन सम मैं मानता हूँ।। (6)

मैं आपका भक्त हूँ कैसे बनूँ भीखारी सम।
आपकी सम्पत्ति मुझे चाहिए न चाहिए धन-जन-मान।।
ख्याति-पूजा-लाभ-प्रसिद्धि-वर्चस्व व भोगोपभोग।
ये सभी आपने त्याग किया ये नहीं आपके वैभव।। (7)

आपने जो त्याग किया मैं क्यों करूँ उसे ग्रहण।
अपने जो प्राप्त किया उसे चाहे तव भक्त 'कनक श्रमण'।। (8)

भीलूड़ा 18.01.2019 रात्रि 09:04
(यह कविता श्रीपाल (भीलूड़ा) के कारण बनी।)

केवल गुणी की प्रशंसा ही मेरा लक्ष्य नहीं

(गुणी प्रशंसा से गुणी बनना मेरा लक्ष्य)

(चालः- 1. आत्मशक्ति...2. क्या मिलिए...) - आचार्य कनकनन्दी

मेरा लक्ष्य है बनना आदर्श (महान्), केवल गुणस्तुति (प्रार्थना) नहीं प्रमुख।
'वन्दे तद्गुणलब्धये' हेतु वन्दना, भक्ति से भगवान् मुझे बनना।।
अरिहंत सिद्ध तो होते विरागी, स्व अनन्त वैभव के वे भोगी।
परम समता व विशुद्धि युक्त, राग-द्वेष-मोहादि से होते विमुक्त।।(1)

ऐसा ही बनने हेतु उन्हें मैं वन्दूँ, उनकी प्रार्थना व अर्चना करूँ।
गुण-कीर्तन व प्रशंसा भी करूँ उनके सम बनने हेतु मैं करूँ।।
यह है मेरा परम लक्ष्य, पूजक बनकर बनूँ मैं पूज्य।
भक्त से बनना है मुझे भगवान्, भक्त से भिखारी नहीं है लक्ष्य।। (2)

इस हेतु पूज्यों को आदर्श मानूँ, उनके आदर्श अनुकरण करूँ।
उन्होंने जो त्यागा उसे मैं त्याग करूँ, उन्होंने जो पाया उसे प्राप्त करूँ।।
उन्होंने त्यागा सत्ता-सम्पत्ति-कीर्ति, राग-द्वेष-मोहादि विभाव परिणती।
ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा-वैर-विरोध,संकीर्ण-कट्टरता-मात्सर्य भाव।।(3)

इस हेतु उन्होंने किया आत्मविश्वास, आत्मज्ञान युक्त आत्मसंयम।
आत्मसाधना से आत्मा की विशुद्धि, जिससे उन्हें मिली आत्मोपलब्धि।।
अन्यथा मेरा लक्ष्य न होगा महान् न बन पाऊँगा आदर्श महान्।
(वंदी)/भाट(चारण) सम बन जाऊँगा स्तुति पाठक, भीखारी बन जाऊँगा बनके भक्त(4)

दुःख क्षय कर्मक्षय बोधिलाभ निमित्त, जिनगुण सम्पत्ति प्राप्ति निमित्त।
उत्कृष्ट गुणगुणी स्वरूप पंचपरमेष्ठी, उनकी वन्दना करे ''सूरी कनकनन्दी''।।(5)

भीलूड़ा 26.01.2019 रात्रि 08:10 (गणतंत्र दिवस)

वह धर्म मुझे नहीं चाहिए...!?
वह धर्म मुझे सदा चाहिए...!?

(चाल :- छू लेने दो...) - आचार्य कनकनन्दी

वह धर्म मुझे भी नहीं चाहिए जो धन हेतु ही होता है।
सत्ता-सम्पत्ति व प्रसिद्धि वर्चस्व हेतु जो होता है।।
वह धर्म मुझे भी चाहिए जो आत्मविशुद्धि हेतु होता है/(हो)।
श्रद्धा-प्रज्ञा व चर्या से समता-शान्ति जो मिलती है।। (1)

वह धर्म मुझे भी नहीं चाहिए जो ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा युक्त है।
संकीर्ण पंथ मत भेदभाव युक्त जो विषमता-द्वन्द्व युक्त है।
वह धर्म मुझे भी चाहिए जिसमें सहिष्णुता पावन हो।
उदारता समन्वय व सहज सरलता से समन्वित हो।। (2)

वह धर्म मुझे नहीं चाहिए जिसमें आडम्बर व दिखावा हो।

अन्याय-अत्याचार -शोषण से धर्म प्रचार-प्रसार हो।।
वह धर्म मुझे भी चाहिए जो आत्मविकास हेतु होता हो।
स्व-पर-विश्वकल्याण युक्त जो दया-दान-सेवा सहित हो।। (3)

वह धर्म मुझे नहीं चाहिए जो ख्याति-पूजा-लाभ हेतु हो।
धन-जन-मान-सम्मान हेतु व्यापार समान होता हो।।
वह धर्म भी मुझे चाहिए जिसमें निष्काम-निस्पृहता हो।
बोधि-समाधि परिणाम शुद्धि शिव-सौख्य-सिद्धि हेतु होता हो।।(4)

विवशता व परवशता से होता धर्म वह मुझे न चाहिए।
देखा-देखी व भेड़-भेड़िया चाल से रूढि परम्परा न चाहिए।।
आत्मविश्वास व स्व-प्रेरणा से स्व-विवेक से धर्म चाहिए।
आत्मानुभव व आत्मविशुद्धि से आत्मउपलब्धि हेतु धर्म चाहिए।। (5)

धर्म वस्तुस्वभाव है जो परमसत्य व परम-विज्ञान है।
परम आत्मविकास हेतु जो अन्त्योदय व सर्वोदय है।।
धर्म है स्वयंभू सनातन जो आत्मा का शुद्ध स्वरूप है।
इसे ही प्राप्त करने हेतु अन्तरंग-बहिरंग धर्म साधना है।। (6)

धर्म न बेचा-खरीदा जाता है न भौतिक साधन आधीन है।
सुद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से निमित्त-नैमित्तिक से प्राप्त होता है।।
ऐसे परम पावन धर्म को रागी-द्वेषी-मोही-स्वार्थी न पाते हैं।
अतएव परम पावन धर्ममय बनने हेतु 'कनक' पुरुषार्थरत है।। (7)

भेद-अभेद 'तू' व 'तेरा'

आध्यात्मिक व मोहात्मक 'तू' 'तेरा'

(चालः- 1. बता मेरे प्यार सुदामा रे...2. सायोनारा...3. तुम दिल की...)

क्या 'तू' 'तू' करता रे! 'तू' को 'तू' जाना ही नहीं।
क्या 'तू' 'तेरा' 'तेरा' करता रे! 'तू' तो 'तेरा' को जाना ही नहीं।।
'स्व' से भिन्न अन्य सभी 'तू'! माता-पिता-भाई-बन्धु भी 'तू'।
शत्रु-मित्रादि सभी जीव 'तू' ! ''अहमेक्को खलु सुद्ध'' है 'स्व'।।(1)

स्व-स्वरूप शुद्ध-बुद्ध-आनन्द! अनन्त चैतन्य गुण का पिण्ड।
इससे परे सभी परस्वरूप! यह ''भेद ज्ञान'' ''वीतराग ज्ञान''।।
'तेरा स्वरूप पर स्वरूप न होता! परस्वरूप न कभी स्व स्वरूप होता।
पर को स्वरूप मानना मिथ्या! 'तेरा' न होता कभी 'मेरा'।। (2)

ऐसे 'तू' 'तेरा' से मोह त्यज! राग द्वेष-मोह-काम-क्रोध त्यज।
ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा-वैरत्व त्यज! 'स्व' (मैं) व 'स्व' को (मेरा) सदा ही (भज।।)
आत्मसम्बोधन हेतु यदि 'स्व' को! 'तू' रूप में करना भी चाहो।
तभी 'तू' का भावार्थ होगा 'स्व'! तभी 'तेरा' शब्द से होगा 'स्व-वैभव''।(3)

ये आध्यात्मिक अभिन्न कारक! स्वयं में ही घटित षट्कारक।
स्वयं ही कर्त्ता-(धर्त्ता) भोक्ता-विधाता! 'स्व' अतिरिक्त अन्य से न वास्ता।।
यह परम आध्यात्मिक रहस्य! मोही न जाने 'तू' 'तेरा' रूप।
'भेदभाव' 'पक्षपात' से युक्त! 'तू' व 'तेरा' को माने विपरीत।।(4)

अज्ञान मोह से विपरीत आध्यात्मिक! चेतन स्तर में होता परिणत।
भले शब्दादि में होता हो साम्य! किन्तु श्रद्धा-प्रज्ञा से होता भिन्न।।
अनुभवी आध्यात्मि सन्त के गम्य! उनसे ज्ञान प्राप्त करो हे! भव्य।
लौकिक ज्ञान से ये न संभव! 'कनक' चाहे स्व स्वरूप।। (5)

भीलूडा दि. 23.01.2018 रात्रि 08:20

देहात्मबुद्धि से सांसारिक दुःख तो विदेही भाव से मोक्षसुख

(चाल :- (1) आत्मशक्ति...(2) क्या मिलिए...)

शरीर को ही जो स्व-स्वरूपमाने, वे होते हैं मिथ्यादृष्टि।
सत्य-तथ्य से व आत्मतत्त्व से, विपरीत होने से बहिरात्मदृष्टि।।
जीव तो चैतन्य अमूर्तिक द्रव्य, द्रव्य-भाव-नोकर्म से रहित।
भले कर्मबन्ध के कारण अशुद्धनय से, जीव शरीर से सहित।। (1)
व्यवहारनय से शरीर सहित मानने से नहीं बनते मिथ्यादृष्टि।
किन्तु निश्चय से 'मैं हूँ शरीर' ऐसा मानना है बहिरात्मा दृष्टि।।

भले आकाश पुद्गल के कारण, देखाई देता है नीलादि वर्ण।
किन्तु नीलादिवर्ण आकाश के नहीं, तथाहि शरीरमय नहीं जीव।। (2)

शरीर सहित जीवों के होते अनेक भेद-प्रभेद अशुद्ध अवस्था में।
शरीर रहित जीवों के न होते अनेक भेद-प्रभेद शुद्ध अवस्था में।।
अनेक भेद-प्रभेद के कारण जीवों में होते अनेक संकल्प-विकल्प।
छोटा-बड़ा व धनी-गरीब अपना-पराया सह 'अहंकार' 'ममकार'।। (3)

जो स्वयं को शरीरमय माने वे अन्य को भी माने शरीरमय।
जिससे स्वयं के समान ही अन्य अन्तरात्मादि को भी माने शरीरमय।।
स्वयं में यथा राग-द्वेष-मोह-काम-क्रोध-मद-ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा अनुभव करते
तथाहि आध्यात्मिक सन्त को भी रागादिभावमय अनुमान लगाते।। (4)

जिससे आध्यात्मिक सन्त को भी स्व अनुसार चलाना चाहते।
जो अनुसार नहीं चलते उन्हें भी वे अयोग्य रूप में देखते।।
जो स्वयं के समान भाव-व्यवहार करते, उन्हें वे योग्य रूप में देखते।
भेड़भेड़िया चाल में चलते, स्व-भाव अनुसार शत्रु-मित्र मानते।। (5)

इनसे भिन्न जो देह परे स्वयं को आत्मा मानते वे अन्य को भी आत्मा मानते।
''सव्वे सुद्धाहु सुद्धणया'' अनुसार, हर आत्मा ही परमात्मा मानते।।
'देहात्मबुद्धि' से सांसारिक दुःख है तो विदेही भाव से मोक्ष सुक्ष।
अतएव हे! भव्य देहात्मबुद्धि त्यागो, जिससे पाओगे मोक्ष सुख।। (6)

इस हेतु करो भाव विशुद्धि देव-शास्त्र गुरु प्रति करो श्रद्धा-भक्ति।
विदेही बनकर बनो परमात्मा, परमात्मा बनने हेतु 'कनक' की रुचि।।(7)

भीलूड़ा 04.03.2019 मध्याह्न 03:08

संदर्भ-

संसारी प्राणी का रस आदि सात धातुओं-रूप पहिला भाग है, इसके पश्चात् ज्ञानावरणादि कर्मों रूप उसका दूसरा भाग है तथा तीसरा भाग उसका ज्ञानादि रूप है; इस प्रकार से संसारी जीव तीन भाग स्वरूप है।

भागत्रयमयं नित्यमात्मानं बन्धवर्तिनम्।
भागद्वयात्पृथक् कर्तुं यो जानाति स तत्त्ववित्।। (211)

इस प्रकार इन तीन भागों व कर्मबंध से सहित नित्य आत्मा को जो प्रथम दो भागों से पृथक् करने के विधान को जानता है उसे तत्त्वज्ञानी समझना चाहिए। विशेषार्थ-ऊपर संसारी जीव को जिन तीन भागों स्वरूप बतलाया है उनमें प्रथम दो भाग-सप्त धातुमय शरीर और कार्मण शरीर-आत्म स्वरूप से भिन्न, जड़ एवं पौद्गलिक है तथा तीसरा भाग जो ज्ञानादि स्वरूप है वह आत्म स्वरूप चेतन है और वही उपादेय है। इस प्रकार जो जानता है तथा तदनुरूप आचरण भी करता है वह तत्त्वज्ञ है। इसके विपरीत जो प्रथम दो भागों को ही आत्मा समझता है और इसलिये जो उनसे आत्मा को पृथक् करने का प्रयत्न नहीं करता है वह अज्ञानी है।

करोतु न चिरं घोरं तपः क्लेशासहो भवान्।
चित्तसाध्यान् कषायारीन् न जयेद्यत्तदज्ञता।।(212)

यदि तू कष्ट को न सहने के कारण घोर तप का आचरण नहीं करता है तो न कर। परन्तु जो कषायादिक मन से सिद्ध करने योग्य हैं, जीतने योग्य हैं उन्हें भी यदि नहीं जीतता है तो वह तेरी अज्ञानता है। विशेषार्थ-तपश्चरण में भूख आदि के दुःख को सहन पड़ता है, इसलिये यदि अनशन आदि तपों को नहीं किया जा सकता है तो न भी किया जाय। परन्तु जो राग, द्वेष एवं क्रोधादि आत्मा का अहित करने वाले हैं उनको तो भले प्रकार से जीता जा सकता है। कारण कि उनके जीतने में न तो तप के समान कुछ कष्ट सहना पड़ता है और न मन के अतिरिक्त किसी अन्य सामग्री की अपेक्षा भी करनी पड़ती है। इसलिये उक्त राग-द्वेषादि को तो जीतना ही चाहिए। फिर यदि उनको भी प्राणी नहीं जीतता है तो यह उसकी अज्ञानता ही कही जावेगी।

हृदयसरसि यावन्निर्मलेऽप्यत्यगाधे
वसति खलु कषायग्राहचक्रं समन्तात्।
श्रयति गुणगुणोऽयं तत्र तावद्विशङ्क
सयमशमविशेषैस्तान् विजेतुं यतस्व।। (213)

निर्मल और अथाह हृदय पर सरोवर में जब तक कषायों रूप हिंस्र जल जन्तुओं का समूह निवास करता है तब तक निश्चय से यह उत्तम क्षमादि गुणों का

समुदाय निःशक होकर उस हृदय रूप सरोवर का आश्रय नहीं लेता है। इसीलिये हे भव्य! तू व्रतों के साथ तीव्र-मध्यमादि उपशम-भेदों से उन कषायों के जीतने का प्रयत्न कर।

देहात्मबुद्धि से बहिरात्मा की निन्दनीय प्रवृत्ति

देहेष्वात्मधिया जाताः पुत्रभार्यादिकल्पनाः।
सम्पत्तिमात्मनस्ताभिर्मन्यते हा हतं! जगत्।। (14) स.नं.
पद्यभावानुवाद (चालः आत्मशक्ति...)

देहात्मबुद्धि के कारण पुत्रभार्यादिमें स्व-कल्पना।
उनकी वृद्धि से स्ववृद्धि माने ऐसी जगत् की विडम्बना।।
समीक्षा- देहात्मबुद्धि के कारण बहिरात्मा न जानता आत्मवैभव।
पुत्रभार्या-सत्ता-सम्पत्ति आदि को, मानता है निजवैभव।।
इनकी वृद्धि से स्व-वृद्धि मानता, इसकी हानि से स्व-हानि।
जिससे वह अहंकार-ममकार से, करता है राग-द्वेष-कुज्ञानी।
इससे होता कर्म बन्धन, जिससे संसार में पाता दुःख।
यह तो दुःखद व खेदजनक है, मोही-अज्ञानी न जानता सत्य।। (2)

सच्चा धार्मिक v/s मिथ्या धार्मिक

(सम्यक्तव सहित व रहित व जैन धर्मनाशक जीवों के स्वभाव)

(रागः 1. कसमें वादे...2. क्या मिलिए...) - आचार्य कनकनन्दी

सम्यग्दृष्टि होते (हैं) महान,...श्रद्धा-प्रज्ञा सहित...
अनंतानुबन्धी क्रोधादि रिक्त...मोह व मद रहित...
अतः व होते ज्ञान वैराग्य युक्त...देव शास्त्र गुरु भक्त...
संसार-शरीर-भोग (से) भिन्न, निश्चय से मानते सिद्ध सम...(1)

अष्ट गुण अष्ट-अंग युक्त...संवेग वैराग्य उपशम युक्त...
शालीन-शान्त धैर्य युक्त...दान-दया-पूजा-संयुक्त...
उक्त गुण गण से जो रहित...उग्रता तीव्र कषाय युक्त...
दुष्टता व दुर्भावना युक्त...दुश्रुत दुर्भाषण युक्त...(2)

मिथ्यामतों में वे अनुरक्त...विरोध व द्वन्द्व सहितऽऽ
संकीर्ण भाव व काम युक्त...रौद्र परिणाम रुष्टता युक्तऽऽ
अनिष्ठ भाव व्यवहार युक्त...चुगलखोर-निन्दा युक्तऽऽ
अभिमान व ईर्ष्या युक्त...याचना व झगड़ा युक्तऽऽ-(3)

नानाविध दूषण सहित...दुराग्रह हठाग्रह युक्तऽऽ
संकीर्ण पंथमत सहित...ढोंग-पाखण्ड रूढ़ि युक्तऽऽ
बन्दर सम चंचलता युक्त...समता सहिष्णुता रिक्तऽऽ
गधा सम मन्दमति युक्त...पर चिन्ता-निन्दा वाहकऽऽ(4)
कुत्ता सम वाचालता युक्त...धर्म धर्मी के कलह युक्तऽऽ
व्याघ्र सम क्रूरता युक्त...शूकर सम भक्षाभक्ष सहितऽऽ
ऊँट सम काँटा तिक्त भक्षक...दंभ से शिर ऊँचा युक्तऽऽ
जोंक सम दोष ग्रहण युक्त...बक सम ध्यान शुचि युक्तऽऽ-5

चालनी सम गुण त्याग युक्त...कैंची सम भेदभाव युक्तऽऽ
किंपाक फल सम मिठा युक्त...शिला सम मृदुता रिक्तऽऽ
ऐसे जीव के पूजन दान...तप-त्याग-ध्यान-अध्ययनऽऽ
धर्म प्रभावना तीर्थ वंदना...आत्म बिन शव यात्रा समऽऽ-(6)

सम्यग्दृष्टि के उक्त धर्म...महाफलदायक कल्पवृक्षसमऽऽ
ईकाई सहित शून्य समान...सम्यग्दृष्टि के धर्म महान्ऽऽ
आत्मविशुद्धि से धर्म प्रारंभ...आत्म मलिनता ही सभी अधर्मऽऽ
शुद्ध-बुद्ध आनन्द धर्म पूर्ण...'कनक' का लक्ष्य स्व-आत्मधर्मऽऽ...(7)

बहिरात्मपना त्याग से अन्तरात्मा बनो

मूलं संसारदुःखस्य देह एवात्मधीस्ततः।
त्यक्त्वैनां प्रविशेदन्त-र्बहिरव्यापृतेन्द्रियः।। (15)

पद्याभावानुवाद (चाल : आत्मशक्ति...)
संसार दुःख का मूल कारण, देहको ही आत्मा मानना।
ऐसी बुद्धि को त्याग करके, इन्द्रिय संयम से बनो अन्तरात्मा।।

देह सहित होने से ही जीव, करता है अहंकार-ममकार।।
उसके कारण बाह्य वस्तु में, करता है राग-द्वेष-विकार।। (1)
शरीराश्रित ही है जन्म-मरण, भूख-प्यास व जरा-रोग।
काम-भोग, आकर्षण-विकर्षण, जिससे बन्धते नाना कर्म।।
इससे होता है संसार भ्रमण, जिससे भोगता दुःख-दैन्य।
अतएव देहात्मबुद्धि त्यागकर, इन्द्रिय संयम से भोगो आत्म वैभव।। (2)

आत्मा ही परमात्मा बनता

(स्व-आत्मा की उपासना से आत्मा बनता है परमात्मा))

श्लोक - निर्ममः केवलीःशुद्धो विविक्तः प्रभुरव्ययः।
परमेष्ठी परात्मेति परमात्मेश्वरो जिनः।।(6, समाधितंत्र)
हिन्दी - निर्मल है केवल शुद्ध पृथक् है प्रभु व अव्यय।
परमेष्ठी व पर-आत्मा है, परमात्मा व ईश्वर जिन।।
श्लोक- यः परात्मा स एवाहं योऽहं स परमस्ततः।
अहमेव मयोपास्यो नान्यः कश्चिदिति स्थितिः।।(31, समाधितंत्र)
हिन्दी- जो परमात्मा है वह ही मैं हूँ, जो मैं हूँ वह ही परम तत्त्व।
मेरे द्वारा ही मेरी उपासना, नहीं अन्य है कुछ भी स्थिति।।
श्लोक- उपास्यात्मानमेवात्मा जायते परमोऽथवा।
मथित्वात्मानमात्मैव जायतेऽग्निर्यथा तरूः।। (98, समाधितंत्र)
हिन्दी- आत्मा के द्वारा आत्मा (की) उपासना से, होता है आत्मा परमात्मा।
अग्नि उत्पन्न यथा वृक्ष मन्थन से, आत्म मन्थन से तथा परमात्मा।।
रहस्य- बीज से वृक्ष यथा बनता है, अथवा भ्रूण से बने मानव।
पानी से यथा बनता है बर्फ, तथाहि आत्मा से परमात्मा।। (1)

अशुद्ध सोना ही बनता है शुद्ध, यथा ताप-ताड़न से।
तथाहि आत्मा ही परमात्मा बनता, आध्यात्मिक-शुद्धि प्रक्रिया से।। (2)

आत्मविश्वास-ज्ञान-चारित्र द्वारा, आत्मा बनता है परमात्मा।
पंच-महाव्रत समिति-पंच व, उत्तम दशविध धर्म द्वारा।। (3)

ध्यान-अध्ययन अनुप्रेक्षा द्वारा, आत्मा ही करता स्व-उपासना।
समता सहिष्णुता वीतरागता द्वारा, आत्मा ही करता है आतम-पूजन।। (4)

आत्मविशुद्धि से गुणस्थान चढ़ता, उत्तरोत्तर से बने परमात्मा।
बहिरात्मा से बने अंतर आत्मा, कर्मनाश से बने परमात्मा।। (5)

ऐसा आत्मा ही बनता परमात्मा, जिसे कहते मोक्षावस्था।
इसी हेतु ही 'कनकनन्दी' सतत करता (है) स्वात्म-उपासना/(पूजा)।।(6)

शरीर आदि भौतिकता से परे है जीवों का स्वरूप

(चालः आत्मशक्ति से ओतप्रोत...)

श्लोक- जीवोऽन्यःपुद्गलश्चान्य इत्यसौ तत्त्वसंग्रह।
यदन्यदुच्यते किंचित्, सौऽस्तु तस्यैव विस्तरः।।(50, इष्टोपदेश)

हिन्दी- जीव अन्य है पुद्गल भी अन्य, यह है तत्त्व संग्रह।
जो कुछ अन्य कथन होता वह है इसका विस्तार।।

गाथा- मग्गण्णगुणठाणेहि य चउदसहि हवंति तह असुद्धणया।
विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया।। (13, द्रव्यसंग्रह)

हिन्दी- मार्गणा चौदह गुणस्थान चौदह, सहित है संसारी जीव।
यह वर्णन है अशुद्धनय से, शुद्धनय से सभी (होते) शुद्ध जीव।।(1)

रहस्य- जीव है चेतन अमूर्तिकमय जो है सच्चिदानन्द।
स्वयंभू सनातन स्वयंपूर्ण जो है अनादि-अनंत।। (2)

अनादिकाल से जीव बंधे हैं, पुद्गल कर्मों के साथ।
जिससे जीव अशुद्ध होकर, बने है भौतिक सम।।(3)

राग-द्वेष-मोह बंध के कारण, पुद्गल बने द्रव्यकर्म।
द्रव्यकर्म के उदय से जीव, बने हैं संसारी जीव।।(4)

कर्म उदय से संसारी जीवों के होते (हैं), चौदह मार्गणा-गुणस्थान।
तन-मन-इन्द्रिय आदि बनते, पाते हैं जन्म व मरण।। (5)

क्रोध-मान-माया-लोभ-मोह-काम (आदि), उत्पन्न होते भाव कर्म।
भाव कर्म भी शुद्धनय से, न होते हैं जीव-स्वभाव।। (6)

भाव कर्म के क्षीण होने से, होते हैं गुणस्थान क्रमशः।
तेरहवें गुणस्थान में नाश होते, घातीकर्म अंत में सम्पूर्ण कर्म।। (7)

सम्पूर्ण कर्म क्षय से होते, जीव हैं सम्पूर्ण शुद्ध।
शुद्ध अवस्था ही है जीवों के, स्वरूप जो सिद्ध व बुद्ध।।(8)

शुद्ध अवस्था में नहीं होते हैं, मार्गणा व गुणस्थान।
तन-मन-इन्द्रियादि न होते, न होते जन्म-मरण।।(9)
पाँचों इन्द्रियों के विषय भोग, तथाहि सत्ता-संपत्ति।
इसी से परे हैं जीवों का स्वरूप, जो है चिन्मयमूर्ति।। (10)
'सत्यशिवसुंदरं' या 'सच्चिदानंद', यह है जीवों का स्वरूप।
स्वरूप प्राप्ति ही मोक्षावस्था जो है 'कनक' की निज (शुद्ध) अवस्था।। (11)

जे दिट्ठे तुट्टंति लहु कम्मईं पुव्व कियाइँ।
सो परू जाणाहि जोइया देहि वसंतु ण काइँ।।(27)

संदर्भ

जिस आत्मा को सदा आनन्द रूप वीतराग निर्विकल्प समाधिस्वरूप निर्मल नेत्रों को देखने से शीघ्र ही निर्वाण को रोकने वाले पूर्व जीवोपार्जित कर्म चूर्ण हो जाते हैं अर्थात् सम्यग्ज्ञान के अभाव से पहले शुभ अशुभ कर्म कमाये थे वे निजस्वरूप के देखने से ही नाश हो जाते हैं, उस सदानन्दरूप परमात्मा को देह में बसते हुए भी हे योगी! तू क्यों नहीं जानता।

देहादेवलि जो वसइ देउ अणाइ-अणंतु।
केवल-णाणन-फुरंत-तणु लो परमप्पु णिभंतु।। (33)

जो व्यवहारनयकर देवालय में बसता है, निश्चयकर देह से भिन्न है, देह की तरह मूर्तिक तथा अशुचिामय नहीं है, महापवित्र है, आराधने योग्य है, पूज्य है, देह आराधने योग्य नहीं है,जो परमात्मा आप शुद्ध द्रव्यार्थिकनयकर अनादि अनंत है तथा देह आदि अंतकर सहित है, जो आत्मा निश्चयकर लोक अलोक को प्रकाशने वाले

केवल ज्ञान स्वरूप है, अर्थात् केवल ज्ञान ही प्रकाशरूप शरीर है और देह जड़ है, वही परमात्मा निःसंदेह है, उसमें कुछ संशय नहीं समझना।

बुज्झंतहं परमत्थु जिय गुरु लहु अत्थि ण कोई।
जीवा सयल वि बंभु परू जेण वियाणइ सो।। (94)

हे जीव! परमार्थ को समझने वालों के कोई जीव बड़ा छोटा नहीं है, सभी जीव परब्रह्म स्वरूप हैं, क्योंकि निश्चनय से वह सम्यग्दृष्टि एक भी जीव सबको जानता है।

जो भत्तउ-रयण-त्तयह तसु मुणि लक्खण एउ।
अच्छउ कहिं वि कुडिल्लियइ सो तसु करइ ण भेउ।। (95)

जो मुनि रत्नत्रय की आराधना करने वाला है, उसके यह लक्षण जानना कि किसी शरीर में जीव रहे, वह ज्ञानी उस जीव का भेद नहीं करता अर्थात् देह के भेद से गुरुता लघुता का भेद करता है, परन्तु ज्ञान दृष्टि से सबको समान देखता है।

जीवहँ तिहुयण संठियहं मूढ़ा भेउ करंति।
केवल-णाणि णाणि फुडु सयलु वि एक्कु मुणंति।।(96)

तीन भुवन में रहने वाले जीवों का मूर्ख ही भेद करते हैं, और ज्ञानी जीव केवलज्ञान से प्रकट सब जीवों को समान जानते है।

जीवा सयल वि णाण-मय जम्मण-मरण विमुक्क।
जीव-पएसहिँ सयल सम सयल वि सगुणहिं एक्क।।(197)

सभी जीव ज्ञानमयी है, और अपने-अपने प्रदेशों से सब समान है, सब जीव अपने केवलज्ञानादि गुण के समान हैं।

जीवहँ लक्खणु जिणवरहि भासिउ दंसण-णाणु।
तेण ण किज्जइ भेउ तहँ जइ मणि जाउ विहाणु।। (98)

जीवों का जिनेन्द्रदेव ने दर्शन और ज्ञान कहा है, इसीलिए उन जीवों में भेद मत-कर, अगर तेरे मन में ज्ञानरूपी सूर्यरूपी सूर्य का उदय हो गया है, अर्थात् हे शिष्य! तू सबको समान जान।

बंभहं भुवणि बसंताहँ जे णवि भेउ करंति।
ते परमप्प-पयासयर जोइय विमलु मुणंति।। (99)

इस लोक में रहने वाले जीवों का भेद नहीं करते हैं, वे परमात्मा के प्रकाश करने वाले योगी, अपने निर्मल आत्मा को जानते हैं।

देह-विभेयहँ जो कुणइ जीवइँ भेउ विचितु।
सो णवि लक्खणु मुणइ तहँ दंसणु णाणु चरित्तु।। (102)

जो शरीरों के भेद से जीवों का नानारूप भेद करता है, वह उन जीवों का दर्शन ज्ञान चारित्र नहीं जानता, अर्थात् उसको गुणों की परीक्षा पहचान नहीं है।

जेण सरूविं झाइयइ अप्पा एहु अणंतु।
तेण सरूविं परिणवइ जह-फलिहउ-मणि मंतु।। (173)

यह प्रत्यक्ष अविनाशी आत्मा जिस स्वरूप से ध्याया जाता है, उसी स्वरूप परिणमता है, जैसे एक स्फटिक मणि और गरूड़ी मंत्र है।

एहु जु अप्पा सो परमप्पा कम्म-विसेज जाउयउ जप्पा।
जामइँ जाणइ अप्पँ अप्पा तामइँ सो जि देउ परमप्पा।। (74)

यह प्रत्यक्षीभूत स्वसंवेदन ज्ञान कर प्रत्यक्ष जो आत्मा वही शुद्धनिश्चयनयकर अनंत चतुष्टयस्वरूप क्षुधादि अठारह दोष रहित निर्दोष परमात्मा है, वह व्यवहारनयकर अनादि कर्मबंध के विशेष से पराधीन हुआ दूसरे का जाप करता है, परन्तु जिस समय वीतराग निर्विकल्प स्वसंवेदन ज्ञान कर अपने को जानता है, उस समय यह आत्मा ही परमात्मा देव है।

जो परमप्पा णाणमउ सो हउँ देउ अणंतु।
जो हउँ सो परमप्पु परू एहउ भावि णिभंतु।। (175)

जो परमात्मा ज्ञानस्वरूप है, वह मैं ही हूँ, जो कि अविनाशी देवस्वरूप हूँ जो मैं वही उत्कृष्ट परमात्मा है। निस्सन्देह तू भावना कर।

जो जिणु सो अप्पा मुणहु इहु सिद्धंतहं सारू।
इउ जाणेविण जोइयहो छंडहु मायाचारू।। (21)

जो जिन भगवान् है वही आत्मा है-यही सिद्धान्त का सार समझो, इसे समझकर हे योगीजनों! मायाचार को छोड़ो।

जो परमप्पा सो जि हउँ जो हउँ सो परमप्पु।
इउ जाणेविणु जोइया अण्णु म करहु वियप्पु।। (22)

जो परमात्मा है वही मैं हूँ तथा जो मैं हूँ वही परमात्मा है, यह समझकर हे योगिन्! अन्य कुछ भी विकल्प मत करो।

जो तइलोयहँ झेउ जिणु सो अप्पा णिरू वुत्तु।
णिच्छय-णइँ एमइ भणिउ एहउ जाणि विभंतु।। (28)

जो तीन लोकों के ध्येय भगवान् हैं, निश्चय से उन्हें ही आत्मा कहा है- यह कथन निश्चयनय से है। इसमें भ्रान्ति न करनी चाहिए।

जं वडमज्झहं बीउ फुडु बीयहं वडु वि हु जाणु।
तं देहहँ देउ वि मुणहि, जो तइलोय पहाणु।। (74)

जैसे बड़ के वृक्ष में बीज स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है, वैसे ही बीज में भी बड़ वृक्ष रहता है। इसी तरह देह में भी उस देव को विराजमान समझो, जो तीनों लोकों में मुख्य है।

जो जिण सो हऊँ सो जि हऊँ एहए भाउ णिभंतु।
मोक्खहँ कारण जोइया अण्णु ण तंतु ण मंतु।। (75)

जो जिनदेव है वह मैं हूँ इसकी भ्रान्ति रहित होकर भावना कर। हे योगिन्! मोक्ष का कारण कोई अन्य मंत्र तंत्र नहीं है।

तन-मन-धन-नाम परे आत्मविकास

(चाल :- कोई दिवाना कहता है...(मनहरण)

तन को ही क्या सजाता रे!? तन तो पुद्गल/(भौतिक) मात्र।
आत्मा को तू सजाओ रे! आत्मा तो तेरा स्वरूप।।
तन को क्या सुखाता रे! शरीर तो शीर्ण स्वरूप।
मन को तू वशकर रे! मनमानी तू मत कर।। (1)

तन व मन से परे तू! सच्चिदानन्द स्वरूप।
स्व-आत्महितकर तू! तन व मन के द्वारा।।
तन व मन स्वस्थ सबल! जिससे बने हितकर।
शक्ति का कर सदुपयोग! दुरुपयोग अहितकर।। (2)

धन तो है भौतिकमय! निर्जीव मान्यता प्राप्त।

जीविका हेतु साधन! दान में करो नियोजन।।
इस हेतु करो न पाप! न करो धन का मान।
दान से परे त्याग करो! जिससे मिलेगा मोक्ष।।(3)

नाम बड़ाई न करो! नाम तो व्यवहार हेतु।
तन का कल्पित शब्द! इससे परे तेरा रूप।।
तन-मन व धन-नाम! ये सभी भौतिक पर रूप।
स्व-आत्म विकास हेतु! करो तू सत् पुरुषार्थ।। (4)

इस हेतु करो आत्मविश्वास! आत्मविज्ञान-आत्मध्यान।
राग-द्वेष-मोह-मद-मत्सर! ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा त्यागो।।
ख्याति-पूजा-लाभ-वर्चस्व! पर-निन्दा पर अहित त्यागो।
समता-शान्ति-आत्मशुद्धि से! 'कनक' शुद्ध-बुद्ध बनो।।(5)

भीलूड़ा 17.01.2019 मध्याह्न 03:16
(यह कविता श्रीपाल जैन (भीलूड़ा) से कारण बनी।)

आत्म सम्बोधन

(आत्मविश्वास-आत्मज्ञान-आत्मसुधार-आत्मविकास-आत्मउपलब्धि हेतु)

(चाल :- कोई दिवाना कहता है (मनहरण)

पर को क्या देखता रे! स्वयं को तू ही देखाकर।
पर-रुचि होती मिथ्यात्व स्व-रुचि (प्रेम) होती सम्यक्त्व।।
यह होता आत्मश्रद्धान, यह होता आत्मदर्शन।
यह होता आत्मविश्वास, इससमें नहीं दीन-हीन।।(1)

इसमें नहीं अष्ट-मद, इससे नशे सभी दंभ।
इससे/(में) होती है दृढ़ता, अन्य प्रति न ईर्ष्या घृणा।।
इससे/(में) होता स्वालम्बन, स्व-उपलब्धि शुभारम्भ।
अन्यथा होता प्रदर्शन, दिखावा व अन्धाननुकरण।। (2)

पर को देखना है सरल, अनादिकालीन कुसंस्कार।
यहाँ से कर्मबन्ध प्रारम्भ, जिससे संसार में भ्रमण।।
पर कर्त्ता-धर्त्ता-भोक्ता, राग-द्वेष-मोह व द्वन्द्व।
पर परिणति व संक्लेश, स्व दर्शन से ये निरसन।। (3)

स्व-दर्शन से/(में) है सुज्ञान, इसे ही कहते आत्मज्ञान।
आत्मज्ञान से ही भेदज्ञान, जिससे हो वीतराग विज्ञान।
दोनों से होती श्रद्धा-प्रज्ञा, मैं हूँ सच्चिदानन्द आत्मा।
द्रव्य-भाव-नोकर्म परे, तन-मन-इन्द्रिय परे।।(4)

इससे बढ़े ज्ञान-वैराग्य, राग-द्वेष-मोह होते क्षीण।
संसार-शरीर-भोगासक्ति, उत्तरोत्तर होती क्षीण।।
समता-शान्ति-निस्पृह-क्षान्ति, उत्तरोत्तर बढ़ती जाती।
मैत्री-प्रमोद-करुणा-साम्य, बढ़े उदार-पावन भाव।। (5)

इससे होता आत्मसुधार, आत्मविकास उत्तरोत्तर।
अन्तरंग-बहिरंग संग त्याग, एकान्त-मौन में आत्मध्यान।
ख्याति-पूजा प्रसिद्धि वर्चस्व, दिखावा-आडम्बर-ढोंग-पाखण्ड।
संकीर्ण पंथ-मत परे, परम आत्महित हेतु प्रयत्न।। (6)

इससे आत्मविशुद्धि बढ़े, आत्मशक्ति निर्भरता बढ़े।
बाह्य समस्त प्रपंच परे, आत्मरमण ही बढ़े।।
परम आत्मविकास से ही, आत्मा को आत्म प्राप्त होता।
बनोगे शुद्ध-बुद्ध-आनन्द, 'कनक' स्व-दर्शन फल।। (7)

ये है रत्नत्रय स्वरूप, व्यवहार निश्चय मोक्षमार्ग।
इससे भिन्न संसारमार्ग, अनादि से संसारी जीव प्रवृत्त।।
वे न जानते हैं स्वरूप, अनात्म विभाव को मानते स्वरूप।
इससे समस्त समस्या दुःख, अज्ञान मोह से ग्रसित।। (8)

भीलूड़ा 16.01.2019 मध्याह्न 01:19

मोहात्मक ''मैं'' मेरा व आध्यात्मिक ''मैं'' मेरा''

(मोही-कुज्ञानी के ''मैं'' मेरा'' से पूर्ण विपरीत आध्यात्मिक 'मैं' 'मेरा'

(चाल :- 1. बता मेरे यार सुदामा रे...2. सायोनारा...3. भातुकली...)

क्या तू ''मैं मैं' करता रे! तू तो 'मैं' को जाना ही नहीं।
'मेरा' 'मेरा' तू क्या करता रे! तू तो 'मेरा' को जाना ही नहीं।।(ध्रुव)
'मैं' को जानना ही रे! अनादि से किया ही नहीं।
'मैं को मानना ही रे! सम्यग्दृष्टि बनोगे तू ही।।
तू तो चेतन आत्मा रे! तन-मन-इन्द्रिय नहीं।
ऐसा जब तू जानोगे रे! तब ही जानोगे 'मैं' को सही।।
'मेरा' ही तेरा स्वगुण रे! आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र।
अनन्तसुख वीर्यादि गुण! तुझ में अविनाभाव में रहे।।
इससे अतिरिक्त सभी ही! नहीं है तेरा कोई भी।
तन-मन-इन्द्रिय भी न तेरे! अन्य कोई तेरे न होंगे।।
तन तो रज-वीर्य से जात! हड्डी-मांस-चर्म व रक्त।
भोजन-पानी से पोषित! ये सभी तो जड़मय तत्त्व।।
तथाहि इन्द्रियाँ व मन भी! जड़ भौतिक से निर्मित रे।
आयु भी कर्म जनित रे! ये सभी न तेरे स्वरूप रे।।
माता-पिता भाई-बन्धु भी! पत्नी या पति पुत्र-पुत्री।
शत्रु-मित्रादि समाज जन भी! नहीं तेरे निज स्वभाव।।
जब ये तेरे नहीं होते! धन-धान्य-मकान-यान (वाहन)।
स्पष्ट से पृथक् निर्जीव,! तेरे कैसे हो सकते मूढ़।।
किन्तु कुज्ञान मोहासक्त तू! न जानता सत्य-असत्य।
हिताहित विवेक हीन तू! 'मैं' 'मेरा' में हो रहे आसक्त।।
अभी तू जागो रे! भव्य! मोहमद्यनशा को त्यज।
पान करो स्व अमृत रस! जिससे बनोगे शुद्ध-बुद्ध।।
इस हेतु ही 'कनक सूरी'! करे ध्यान आत्मिक 'मैं' मेरा।

स्व उपलब्धि हेतु ही! चाहे 'मैं' व 'मेरा' ही।।

भीलूड़ा दि. 22.01.2019 रात्रि 08:15

(यह कविता सौ. राजकुमारी W/O श्रीपाल(भीलूड़ा) के कारण बनी।)

भेदभाव बनाम V/S भेद विज्ञान

(भेदभाव-मोही करते व भेदविज्ञान-निर्मोही करते)

(भेदभाव से/(में) समस्यायें, भेदविज्ञान से/(में) समस्त समस्या समाधान

(चालः- 1.आत्मशक्ति...2. क्या मिलिए...)

रागी-द्वेषी व मोही स्वार्थी, करते हैं सदा भेदभाव।
अपना-पराया पक्षपातयुक्त, करते हैं सदा क्लेश द्वन्द्व।।
राग-द्वेष व काम-क्रोध (मद) मोह मत्सर से जो होते रिक्त।
वे करते हैं भेदविज्ञान जो समता सहिष्णुता युक्त।। (1)

भेदभाव में होते वाद-विवाद, कुतर्क हठाग्रह दुराग्रह।
संकीर्ण स्वार्थ से प्रेरित हो करते हैं फूट डालो राज करो।।
भेदविज्ञान इससे परे होता, सनम्रसत्यग्राही उदारभाव।
आध्यात्मिक स्वार्थ से प्रेरित हो, निस्पृहता त्याग से सहित।। (2)

भेदभाव से होते आकर्षण-विकर्षण, दबाव-प्रलोभन शोषण।
आक्रमण युद्ध हत्या बलात्कार-लूटपाट, विध्वंस से आतंकवाद।।
भेदविज्ञान इससे परे होता, अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा रिक्त।
ख्याति-पूजा-लाभ वर्चस्व परे, सत्कार- पुरस्कार-कामना रिक्त।। (3)

भेद-विज्ञान में होते आत्मविश्वास, आत्मज्ञान व आत्मानुशासन।
आत्मसंयम निर्लोभता आत्मविशुद्धि से वीतराग विज्ञान।।
इससे विपरीत होता भेदभाव, मोहासक्ति से छिद्राणुवेषण वृत्ति।
पर निन्दा अपमान व वैर विरोध, आत्ममलिनता से मिथ्याज्ञान।। (4)

सुदृष्टि सज्जन से ले पंचपरमेष्ठी, होते हैं भेदविज्ञान युक्त।
वे ही करते आत्मविकास जिससे वे पाते हैं स्वर्ग से मोक्ष तक।।

इनसे अतिरिक्त होते भेदभावी, वे होते कुदृष्टि दुर्जन दुष्ट क्रूर।
वे नहीं कर पाते आत्मविकास, जिससे भोगते दुःख प्रचुर।।(5)

भेदभाव से हुआ भरत बाहुबली युद्ध, भेदविज्ञान से बाहुबली हुए साधु।
तथाहि रामायण महाभारत युद्ध, भेदविज्ञानी योद्धा बन गये साधु।।
संकीर्ण जाति भाषा पंथ मत राष्ट्र, राजनीति कानून के भेदभाव से।
हो रही अनेक समस्यायें जिससे, मानव संत्रस्त बहु काल से।। (6)
सम्पूर्ण समस्याओं का परम समाधान, उपाय है भेदविज्ञान।
भेदविज्ञान में /(से) होती श्रद्धा-प्रज्ञा-चर्या, समस्त विभाव/(भेदभाव) शून्य।।
भेदविज्ञान है शुद्धात्मा का गुण, भेदभाव अशुद्धआत्मा का भाव।
भेदविज्ञान आध्यात्मिक परम शक्ति, यह 'कनक' का परम स्वभाव।। (7)

भीलूड़ा दि. 27.01.2019 रात्रि 08:13

जल से भिन्न कमल सम भरत आदि महापुरुष

(द्रव्य हिंसा रहित तन्दुल-मत्स्य सम होते हैं भाव-हिंसक)

(बाह्य द्रव्यअहिंसक :- द्रव्य हिंसा आदि पंच पाप/सप्त व्यसन रहित भी होते हैं महापापी।)

(चाल :- तुम अगर साथ देने का...2. तुम दिल की...)

धन्य! हे! महापुरुष धन्य हो आप, युद्ध में भी आपका अहिंसाणुव्रत।
राज्य करते हुए भी विरक्त चित्त , कमल यथा जल से होता निर्लिप्त।।
आपसे विपरीत है मोहासक्त, अन्नवस्त्रादि रिक्त नारकी समक्लेश युक्त।
बाह्य पाप रहित भी निगोदिया नीच, भाव कलंक प्रचुरता से नारकी से भी नीच।।
यथा तीर्थंकर से ले राम व भरत, पंच पाण्डव से ले चन्द्रगुप्त मौर्य।
युद्ध में भी पालते थे अहिंसाणुव्रत, यमपाल चाण्डाल अहिंसाणुव्रत में प्रसिद्ध।।
महामत्स्य गया यथा सप्तम नरक, एक ही बार में खाता था खरबों जीव।
तंदुल मत्स्य भी गया सप्तम नरक, मलाहारी था न खाया एक भी जीव।। (2)
मुनि निन्दा से श्रीपाल बना कुष्ठी, अनुमोदना से भी सात सौ बने कुष्ठी।

साठ हजार जल मरे मुनि निन्दक, निवारण करने वाला (आगे) बना भगीरथ।।
हे! महापुरुष आपका भाव पवित्र, आत्मश्रद्धान ज्ञान अणुव्रत सह।
भेदविज्ञान से आप निर्लिप्त चित्त, हेम यथा निर्लिप्त काद संयुक्त।। (3)
दयादानसेवा व वैराग्य युक्त, जल में डूबकर यथा न मरे मत्स्य।
अन्याय-अत्याचार से आप विरक्त, अप्रयोजन पाप से आप विरक्त।।
संकल्पी हिंसा से आप हो विरक्त, ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा-मोह (भाव हिंसा) से विरक्त।
पर अहित से नवकोटि से विरक्त, पर निन्दा अपमान शोषण रिक्त।। (4)
आवश्यकता अनिवार्य कर्त्तव्यनिष्ठा, अप्रयोजन-अनर्थद्रण्डव्रत रहित।
अनन्तानुबन्धी व मिथ्यात्व से रिक्त, व्रती होने पर अप्रत्याख्यान रिक्त।।
इससे आप ज्ञान-वैराग्य संयुक्त, जिससे न बन्धता अधिक पाप।
कुज्ञानी मोही आपके गुणों से रिक्त, मंथरा-शकुनी सम भाव कलुषित।। (5)
गृहस्थ में भी भरत वैराग्य युक्त, केकयी की कुटिलता से भी विरक्त।
राम आगमन से बने श्रमण, कर्म नाशकर आप बने विमुक्त।।
राम के भाई भरत महान् आदर्श, प्रेम करुणा त्याग संयम से संयुक्त।
निष्कलंक अप्रभावी दृढ़ चारित्र, आपका आदर्श चाहे 'सूरी कनक'।।(12)

(छह ढाला के आधार पर)

मेरा वास्तविक स्वरूप

(चालः- 1. आत्मशक्ति...2. क्या मिलिए...3. भातुकली

मैं न सुखी हूँ मैं न दुःखी हूँ मैं न रंक राव हूँ।
मैं हूँ जीव चैतन्य द्रव्य निश्चय से शुद्ध-बुद्ध हूँ।।
मेरे न धन है गृह न गोधन ये सभी परिग्रह है।
मेरे न सुत मेरी न स्त्री है ये सभी स्वतंत्र जीव है।। (1)

मैं न सबल हूँ मैं न दीन हूँ मैं तो अनन्तवीर्य सम्पन्न हूँ।
मैं न बेरूप हूँ सुभग न मूरख मैं तो सच्चिदानन्द हूँ।।
मेरा न जन्म मेरा न मरण मैं तो स्वयंभू शाश्वत हूँ।
मेरा न पिता मेरी न माता अतः मैं कुल-जाति मद रिक्त।। (2)

तन न मेरा रूप न मेरा अतः मैं रूपमद रहित हूँ।
अनन्त ज्ञानी हूँ लक्ष्य भी यह है अतः मैं ज्ञान मद रहित हूँ।।
धन तो जड़ है मैं तो चैतन्य हूँ अतः मैं धन मद रहित हूँ।
बल तो देह का मैं तो आत्मा हूँ अतः मैं बलमद रहित हूँ।। (3)

तप न शुद्धात्मा मैं तो शुद्धात्मा हूँ अतः मैं तपमद रहित हूँ।
प्रभू हूँ विभु हूँ निश्चय से शुद्ध हूँ अतः मैं प्रभुत्वमद रहित हूँ।।
मैं हूँ साध्य मैं हूँ साधक मैं हूँ अबाधक स्वरूप हूँ।
मैं हूँ चित् पिण्ड मैं हूँ अखण्ड मैं हूँ सुगुणाकरंड स्वरूप हूँ।।(4)

मैं इन्द्रिय भोग-उपभोग रहित हूँ अतः ज्ञानानन्द हूँ।
विवाह काम भोग रहित हूँ निजानन्द हेतु प्रयत्नरत हूँ।।
ये है मेरा वास्तविक स्वरूप कुज्ञानी मोही न जानते हैं।
वे तो तन को स्वस्वरूप मानते उसमें ही मोहासक्त होते हैं।। (5)

जिससे वे सत्ता सम्पत्ति डिग्री को मेरी है ऐसा मानते हैं।
जिसके कारण वे 'अहंकार' 'ममकार' से सम्पूर्ण पाप करते हैं।।
स्वस्वरूप की श्रद्धा-प्रज्ञा हेतु आध्यात्मिक अनुभवी गुरु चाहिए।
पंचलब्धियों को प्राप्तकर के स्वरूप प्राप्ति हेतु पुरुषार्थ चाहिए।। (6)

जिन परम पैनी सुबुधी छैनि, डारि अन्तर भेदिया।
वरणादि अरु रागादितैं निज भाव को न्यारा किया।।
निजमाहिं निज के हेतु निजकर, आपको आपै गह्यो।
गुण-गुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय मँझार कछु भेद न रह्यो।। (8) (छह ढाला)
जहँ ध्यान ध्याता ध्येय को विकल्प, वच भेद न जहाँ।
चिद्भाव कर्म, चिदेश करता, चेतना किरियाँ तहाँ।।
तीनों अभिन्न अखिन्न शुध उपयोग की निश्चल दशा।
प्रकटी जहाँ दृग-ज्ञान-व्रत ये, तीनधा एकैलसा।। (9)

परमाण नय निक्षेप को न उद्योत अनुभव में दिखै।
दृग-ज्ञान-सुख बलमय सदा, नहिं आन भाव जु मो विखै।।

मैं साध्य साधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनितैं।
चित् पिंड चंड-अखंड सुगुणकरंड च्युत पुनि कलनितैं।। (10)

यो चिन्त्य निज में थिर भये, तिन अकथ जो आनन्द लह्यो।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अहमिन्द्रकैं नाहीं कह्यो।।
समता-शान्ति व आत्मविशुद्धि से आत्मा ही परमात्मा बने हैं।
यह है महानतम उपलब्धि 'सूरी कनक' को यह ही चाहिए।।(6)

भीलूड़ा दि. 14.02.2018 रात्रि 11:48

(यह कविता छह ढाला के आधार पर बनी है। क्योंकि छह ढाला की सामान्य हिन्दी व विषय भी अधिकांश जन नहीं समझते, विपरीत समझते हैं, उसे आध्यात्मिक दृष्टि से समझने हेतु यह कविता सृजित हुई।)

सम्यग्दृष्टि (जैन) तन धनादि को अपना न माने

(तन धन आदि को अपना मानने वाला व गर्व करने वाला कुधर्मी)

(सम्यक्त्व से उत्थान तो मिथ्यात्व से पतन)

(चालः- 1. आत्मशक्ति...2. क्या मिलिए...)

तत्त्वार्थ श्रद्धान व आत्मविश्वास से बनता है जीव सम्यग्दृष्टि।
देव-शास्त्र-गुरु श्रद्धान सहित, ज्ञान वैराग्य युक्त होता सुदृष्टि।।
इससे रहित (जीव) होता है कुदृष्टि, भौतिकता में ही होती है रुचि।
तन-मन-धन-सत्ता-सम्पत्ति में ही, उनकी होती है आत्मदृष्टि।। (1)

ऐसे मिथ्या-ज्ञान-चर्णवश, भ्रमत भरत दुःख जन्म-मरण
तातैं इनको तजिये सुजान, सुन तिन संक्षेप कहूँ बखान(1) (छह.ढा.)
जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधैं तिनमाहिं विपर्ययत्व।
चेतन को है उपयोग रूप, विन मूरत चिन्मूरत अनूप।।(2)

पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल।
ताकों न जान विपरीत मान, करि करै देह में निज पिछान।।(3)

मैं सुखी दुःखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव।

मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीण।। (4)

तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान।
रागादि प्रगट ये दुःख देन, तिनही को सेवत गिनत चैन।। (5)

शुभ-अशुभ बंध के फल मंझार, रति-अरति करै निज पद विसार।
आतमहित हेतु विराग ज्ञान, ते लखै आपको कष्टदान।। (6)

रोके न चाह निजशक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय।
याही प्रतीतिजुत कछुक ज्ञान, सो दुःखदायक अज्ञान जान।।(7)

इन जुत विषयनि में जो प्रवृत्त, ताको जानो मिथ्याचरित्त।
यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अब जे गृहीत, सुनिये सु तेह।। (8)

परको अपना व विभाव को स्वभाव मानता जो होता है मिथ्यादृष्टि/(कुधर्मी)
तन से ले सत्ता सम्पत्ति स्वभाव न होने से उसे स्व-मानना कुदृष्टि/(कुधर्मी)।
तन यथा बना है भौतिक तत्त्व से, तथाहि सत्ता-सम्पत्ति आदि।
जीव तो चैतन्य अमूर्तिक तत्त्व, उसे स्वस्वरूप मानना सुदृष्टि।। (2)
तनादि को अपना मानना 'ममकार' उसका गर्व होता 'अहंकार'।
अहंकार ममकार से रहित जो होता है वह होता सुदृष्टि।।
पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तौ मद ठानै।
मद न रूपकौ मद न ज्ञानकौ, धन बलकौ मद भानै।।
तपकौ मद न मद जु प्रभुता को, करै न सो निज जानै।
मद धारै तौ यही दोष वसु समकितकी मल ठानै।। (13)
ये है संक्षेप से सुदृष्टि-कुदृष्टि की परिभाषा आगम में जो वर्णित।
सुदृष्टि से ही धर्म होता है प्रारंभ, कुदृष्टि से होता अधर्म प्रारंभ।।
सम्यग्दर्शन बिन बाह्य धर्मकर्म सभी होते निष्फल आगम वर्णित।
गृहस्थ से ले साधु के धर्म सम्यक्त्व के बिन होते हैं निष्फल।।
सम्यक्त्व सहित कुत्ता, देव से महान् जो सम्यक्त्व गुण से युक्त।
सुदृष्टि कुत्ता बनता देव, मिथ्यात्व सहित देव बने स्थावर जीव।।
जो विमानवासी हू थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुःख पाय।

तहँते चय थावर तन धरै, यों परिवर्तन पूरे करै।। (17)
जिन धर्म विनिर्मुक्तो मा भूवं चक्रवर्त्यपि।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासिता।। (देवदर्शन)
सम्यक्त्व स्वरूप जिनधर्म रहित न बनूँ मैं चक्रवर्ती।
सम्क्यत्व स्वरूप जिनधर्म सहित दरिद्र होने की भी मेरी रुचि।।
दोषरहित गुणसहित सुधी जे, सम्यग्दरशन सजै हैं।
चरितमोह वश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजै हैं।।
गेही पैं गृह में न रचैं ज्यों, जलतैं भिन्न कमल है।
नगर नारिकौ प्यार यथा, कादे में हेम अमल है।। (15)
प्रथम नरक विन षट् भू ज्योतिष वान भवन षंड नारी।
थावर विकलत्रय पशु में नहिं, उपजत सम्यक् धारी।।
तीनलोक तिहुँकाल माहिं नहिं, दर्शन सो सुखकारी।
सकल धर्म को मूल यही, इस विन करनी दुःखकारी।। (16)
मोक्षमहल की परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान चरित्रा।
सम्यक्ता न लहै, सो दर्शन, धारो भव्य पवित्रा।।
''दौल'' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खौवे।
यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहिं होवे।। (17)
ऐसे महान् सम्यक्त्व की उपलब्धि आत्मविशुद्धि ही प्रमुख होती।
आत्मविशुद्धि हेतु धर्म करणीय 'कनक' चाहे परमअवगाढसुदृष्टि।।

मुनि उत्तम निजध्यानी

(ध्यानी मुनि अट्ठाबीसमूलगुण में प्रवृत्तमुनि से भी श्रेष्ठ/पूज्य)

(चाल :- क्या मिलिए...)

वर्णन करूँ मैं उन मुनिओं का, जो निजात्माध्यान करते हैं।
अन्तरंग-बहिरंग परिग्रह रिक्त, ख्याति पूजा लाभ से रहित हैं।।
छट्ठे गुणस्थानवर्ती निर्ग्रन्थ मुनि जब, करते हैं त्याग बाह्य प्रवृत्तियाँ।
समता भाव से आत्म ध्यान करते, तब होते वे सप्तम गुणस्थान में।।

अट्ठाबीस मूलगुण में भी न होते प्रवृत्त, किन्तु होते स्वआत्मध्यान में रत।
तब उनका होता सप्तम गुणस्थान, तब वे होते छट्ठे गुणस्थान से महान्।।
यथा दानपूजा रत श्रावक से (भी) श्रेष्ठ होते जो मुनि अट्ठाबीस मूलगुण युक्त।
भले वे श्रावक सम न करते भौतिक दान, तथापि दानी चक्री से भी पूज्य/
(श्रेष्ठ)।।
आध्यात्मिक दृष्टि से वे होते श्रेष्ठ, जिनकी आत्म विशुद्धि होती वरिष्ठ।
अतएव उत्तरोत्तर गुणस्थान ज्येष्ठ, भले बाह्य धार्मिक क्रिया रिक्त।।
ऐसे मुनि न मानते स्वयं को, मैं सुखी दुःखी मैं रंक राव।
स्वयं को मानते मैं चैतन्य द्रव्य, निश्चय नय से मैं शुद्धबुद्ध।। (छह ढाला)
निजमाहिं निज के हेतु निजकर, आप को आपै गहयो।
गुणगुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय मँझार कुछ भेद न रहयो।। (छह ढाला)
जहाँ ध्यान ध्याता ध्येय को न विकल्प वच भेद न जहाँ।
चिदभाव कर्म चिदेश करता, चेतन किरिया तहाँ।।
तीनों अभिन्न अखिन्न शुध्द उपयोग की निश्चल दशा।
प्रकटी जहाँ दृग-ज्ञान-व्रत ये तीनधा एकै लसा।। (छहढाला)
मैं साध्य साधक मैं अबाधक कर्म अरु तसु फलनितैं।
चित् पिंड चंड अखण्ड सुगुणकरंड ज्युत पुनि कलनितैं।। (छह ढाला)
यो चिन्त्य निज में थिर भये तिन अकथ जो आनन्द लहयो।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अहमिंद्र कैं नाहीं कहयो।। (छह ढाला)
मा चिट्ठह मा जंपह मा चिन्तह किं वि जेण होइ थिरो।
अप्पा अप्पाम्मि रहो इणमेव परं हवे झाणं।। (द्र.सं)
संयम करणग्राममेकाग्रत्वेन चेतसः।
आत्मानमात्मन्ध्यायेदात्मनैवात्मनि स्थितं।। (इष्टो.)
ऐसे आत्मध्यान से ही, आत्मा बनता है शुद्धात्मा।
आत्मध्यान बिन कोई भी उपाय से, नहीं बनते हैं शुद्धात्मा।।
सभी धर्म कर्म होते हैं सफल, जब आत्मध्यान हेतु सहयोगी।
आत्मध्यान हेतु आत्म श्रद्धान, ज्ञान आचरण होते उपयोगी।।

तद् ब्रयात्तत्परान्पृच्छेत्तदिच्छेत्तत्परो भवेत्।
येनाऽ विद्यामयं रूपं त्यकत्वा विद्यामयं व्रजेत्।। (सं.तं)
अज्जवसप्पिणी भरहे धम्मझाणं पमादरहिदोत्ति।
होदित्ति जिणुदिट्ठं णहु मण्णई सोहु, कुदिट्ठी।। (रयण.)
अतएव यथाशक्ति सर्व प्रयत्न से आत्मध्यान करणीय।
इस हेतु ही 'कनकनन्दी' त्याग किया सभी बाह्य अकार्य।।
भीलूडा दि. : 1.2.2019 रात्रि : 8.55

संदर्भ

मैं सुखी दुःखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव। (छह ढाल)
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीण।। (4)
तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान।
रागादि प्रगट ये दुःख देन, तिनही को सेवत गिनत चैन।। (5)
जो ख्याति लाभ पूजादि चाह, धरि करन विविध विध देहदाह।
आतम अनात्म के ज्ञानहीन, जे जे करनी तन करन छीन।। (14)
ते सब मिथ्याचारित्र त्याग, अब आतम के हित पंथ लाग।
जगजाल-भ्रमण को देहु त्याग, अब दौलत! निज आत्म सुपाग।। (15)
परद्रव्यनतैं भिन्न आपमें, रुचि सम्यक्त्व भला है।
आपरूप को जानपनों, सो सम्यग्ज्ञान कला है।।
आपरूप में लीन रहे थिर, सम्यक्चारित्र सोई।
अब व्यवहार मोक्षमग सुनिये, हेतु नियत को होई।। (2)
बहिरातम, अन्तर आतम, परमातम जीव त्रिधा है।
देह जीव को एक गिने बहिरातम तत्त्वमुधा है।।
उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के अन्तर-आत्म ज्ञानी।
द्विविध संग बिन शुध उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी।। (4)
ये ही आतम को दुःख कारण, तातैं इनको तजिये।
जीव प्रदेश बँधे विधि सों सो, बन्धन कबहुँ न सजिये।। (9)
कोटिजन्म तप तपैं, ज्ञान विन कर्म झरैं जे।

ज्ञानी के छिन में त्रिगुप्ति तैं सहज टरैं ते।।
मुनिव्रत धार अनन्त बार ग्रीवक उपजायो।
पै निज आतमज्ञान बिना, सुख लेश न पायो।। (5)
लाख बात की बात यही, निश्चय उर लाओ।
तोरि सकल जग दंद-फंद, नित आतम ध्याओ।। (9)
मुनि सकलव्रती बड़भागी भव भोगनतैं वैरागी।
वैराग्य उपावन माई, चिन्तैं अनुप्रेक्षा भाई।। (1)
इन चिन्ततसम-सुख-जागै, जिमि ज्वलन पवन के लागै।
जब ही जिय आतम जानै, तब ही जिय शिवसुख ठाने।।(2)
जिन पुण्य-पाप नहिं कीना, आतम अनुभव चित दीना।
तिनही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके।। (10)
जो भाव मोहतैं न्यारे, दृग-ज्ञान-व्रतादिक सारे।
सो धर्म जबै जिय धारै, तब ही सुख अचल निहारे।। (14)
सो धर्म मुनिनकरि धरिये, तिनकी करतूत उचरिये।
ताको सुनिये भवि प्रानी, अपनी अनुभूति पिछानी।। (15)
अन्तर चतुर्दस भेद बाहिर, संग दसधा तैं टलैं।
परमाद तजि चौकर मही लखि, समिति ईर्या तैं चलैं।।
जग-सुहितकर सब अहितकर, श्रुति सुखद सब संशय हरैं।
भ्रमरोग-हर जिनके वचन-मुखचन्द्र तैं अमृत झरैं।।(2)
परमाण नय निक्षेप को न उद्योत अनुभव में दिखे।
दृग-ज्ञान-सुख-बलमय सदा, नहिं आन भाव जु मो विखै।।
मैं साध्य साधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनितैं।
चित् पिंड चंड अखण्ड सुगुणकरंड च्युत पुनि कलनितैं।। (10)

निरालंब ध्यान

यत्पुनरपि निरालम्बं तद्ध्यानं गतप्रमादगुणस्थाने।
त्यक्त गृहस्य जायते धृतजिनलिंगरुपस्य।। 38।।

अर्थ : जो गृहस्थ अवस्था को छोड़कर जिनलिंग धारण कर लेता है। अर्थात्

दीक्षा लेकर निर्ग्रंथ मुनि हो जाता है और जो मुनि होकर भी अप्रमत नाम के सातवें गुणस्थान में पहुँच जाता है तब उसी निरालंब ध्यान होता है। गृहस्थ अवस्था में निरालंब ध्यान कभी नहीं हो सकता।

यो भणति कोऽप्येवं अस्ति गृहस्थानां निश्चलं ध्यानम्।
शुद्धं च निरालम्बं न मनुते स आगमं यतीनाम्।। 382।।

अर्थः यदि कोई पुरुष यह कहे कि गृहस्थों के भी निश्चल, निरालंब और शुद्ध ध्यान होता है तो समझना चाहिये कि इस प्रकार कहने वाला पुरुष मुनियों को ही नहीं मानता है।

कथितानि दृष्टिवादेप्रतीत्यगुणस्थानानि जानीहि ध्यानानि।
तस्मात्स देशविरतो मुख्यं धर्म्यं न ध्यायति।। 38

अर्थ : दृष्टिवाद नाम के बारहवें अंग में गुणस्थान को लेकर ही ध्यान का स्वरूप बतलाया है जिससे सिद्ध होता है कि देशविरती गृहस्थ मुख्य धर्मध्यान का ध्यान नहीं कर सकता।

किं यत् स गृहवान् बाह्यभ्यन्तरग्रन्थपरिमितो नित्यम्।
बहुवारम्भप्रयुक्तःकथंध्यायतिशुद्धिमात्मानम्।। 384।।

अर्थ : गृहस्थों के मुख्य धर्मध्यान न होने के कारण यह है कि गृहस्थों के सदाकाल बाह्य आभ्यंतर परिग्रह रूप से रहते हैं तथा आरंभ भी अनेक प्रकार के बहुत से होते हैं इसलिये वह शुद्ध आत्मा का ध्यान कभी नहीं कर सकता।

गृह व्यापाराणि कियन्ति करणीयानि सन्ति तेन तानि सर्वाणि।
ध्यान स्थितस्य पुरतःतिष्ठन्ति निमीलिताक्ष्णः।। 385।।

अर्थः गृहस्थों को घर के कितने ही व्यापार करने पड़ते हैं। जब वह गृहस्थ अपने नेत्रों को बंद कर ध्यान करने बैठता है तब उसके सामने घर के करने योग्य सब व्यापार आ जाते हैं।

अथ ढिकुलिंक ध्यानं ध्यायति अथवा स स्वपिति ध्यानी।
स्वपतः ध्यातव्यं न तिष्ठति चित्ते विकले।। 386।।

अर्थ : जो कोई गृहस्थ शुद्ध आत्मा का ध्यान करना चाहता है तो उसका वह ध्यान ढेकी के समान होता है। जिस प्रकार ढेंकी धान कूटने में लगी रहती है परंतु

उससे उसका कोई लाभ नहीं होता उसको तो परिश्रम मात्र ही होता है इसी प्रकार गृहस्थों का निरालंब ध्यान शुद्ध आत्मा का ध्यान परिश्रम मात्र होता है अथवा शुद्ध आत्मा का ध्यान करने वाला वह गृहस्थ उस ध्यान के बहाने सो जाता है। जब वह सो जाता है तब उसके व्याकुल चित्त में वह ध्यान करने योग्य शुद्ध आत्मा कभी नहीं ठहर सकता। इस प्रकार किसी भी गृहस्थ के शुद्ध आत्मा का निश्चल ध्यान कभी नहीं हो सकता।

ध्यानानां सन्तानं अथवा जायते तस्य ध्यानस्य।
आलम्बनरहितस्यच न तिष्ठति चित्तस्थिरंयस्मात्।। 387।।

अर्थ : अथवा यदि वह सोता नहीं तो उसके ध्यानों को संतानरूप परंपरा चलती रहती है इसका भी कारण यह है कि निरालंब ध्यान करने वाले गृहस्थ का चित्त भी स्थिर नहीं रह सकता।

भावार्थ : गृहस्थ का चित्त स्थिर नहीं रहता इसलिये उसके निरालंब ध्यान कभी नहीं हो सकता। यदि वह गृहस्थ निरालंब ध्यान करने का प्रयत्न करता है तो निरालंब ध्यान तो नहीं होता परंतु किसी भी ध्यान की संतान परंपरा चलती रहती है।

गृहस्थों के करने योग्य ध्यान

तस्मात् स सालम्बं ध्यायतु ध्यानमपि गृहपतिर्नित्यम्।
पंच परमेष्ठिरुपमथवा मंत्राक्षरं तेषाम्।। 388।।

अर्थ : इसलिये गृहस्थों को सदाकाल आलंबन सहित ध्यान धारण करना चाहिए। या तो उसे पंच परमेष्ठी का ध्यान करना चाहिये अथवा पंच परमेष्ठी के वाचक मंत्रों का ध्यान करना चाहिये।

यदि भणति कोप्येवं गृहव्यापारेषु वर्तमानोऽपि।
पुण्येनास्माकं न कायं यत्संसारे सुपातयति।। 389।।

अर्थ : कदाचित् कोई गृहस्थ यह कहे कि यद्यपि हम गृहस्थ व्यापारों में लगे रहते हैं तथापि हमें सावलंब ध्यान कर पुण्य उपार्जन करने की आवश्यकता नहीं क्योंकि पुण्य उपार्जन करने से भी तो इस जीव को संसार में ही पड़ना पड़ेगा।

ऐसा कहने वाले के लिए आचार्य उत्तर देते (मैथुन से 9 लाख जीवों का घात)

मैथुनसंज्ञारूढो मारयति नवलक्षयसूक्ष्म जीवान्।।

इति जिनवरैः भणितं बाहयाभ्यन्तरनिर्ग्रन्थरूपैः।। 390।।

अर्थ : आचार्य कहते हैं कि देखो जो पुरुष मैथुन संज्ञा को धारण करता है अपनी स्त्री का सेवन करता है वह गृहस्थ नौ लाख सूक्ष्म जीवों का घात करता है ऐसा बाह्य परिग्रह रहित भगवान् जिनेंद्रदेव ने कहा है। इसके सिवाय

गेहे वर्तमानस्य च व्यापारशतानि सदा कुर्वतः।

आस्रवति कर्माशुभं आर्तरौद्रप्रवृत्तस्य।। 391।।

अर्थ : जो पुरुष घर में रहता है और सदाकाल गृहस्थी के सैंकड़ों व्यापार करता रहता है वह आर्तध्यान और रौद्रध्यान में भी अपनी प्रवृत्ति करता रहता है इसलिये उसके सदाकाल अशुभ कर्मों का ही आस्रव होता रहता है।

यथा गिरिनदी तडागेऽनवरतं प्रविशति सलिलपरिपूर्णे।

मनवचनतनुयोगैः प्रविशति अशुभैः तथा पापम्।। 392।।

अर्थ : जिस प्रकार किसी पर्वत से निकलती हुई नदी का पानी किसी जल से भरे हुए तालाब में निरंतर पड़ता रहता है उसी प्रकार गृहस्थी के व्यापार में लगे हुए पुरुष के अशुभ मन वचन काय इन तीनों अशुभ योगों द्वारा निरंतर पाप कार्यों का आस्रव होता है।

गृहस्थों के लिए आचार्य का उपदेश-पुण्यार्जन

यावत्न त्यजति गृहं तावत्न परिहरति एतत्पापम्।

पापमपरिहरन् हेतुं पुण्यस्यास्रवं मा त्यजतु।।393।।

अर्थ : इस प्रकार ये गृहस्थ लोग जब तक घर का त्याग नहीं करते गृहस्थ धर्म को छोड़ कर मुनि धर्म धारण नहीं करते तब तक उनसे ये पाप छूट नहीं सकते। इसलिये जो गृहस्थ पापों को नहीं छोड़ता चाहते उनको कम से कम पुण्य के कारणों को तो नहीं छोड़ना चाहिये।

मा त्यजपुण्य हेतुं पापस्यास्रवमपरिहरंश्च।

वध्यते पापेन नरः स दुर्गति याति मृत्वा।।394।।

अर्थ : जो गृहस्थ पाप रूप आस्रवों का त्याग नहीं कर सकते अर्थात् गृहस्थ धर्म छोड़ नहीं सकते उनको पुण्य के कारणों का त्याग कभी नहीं करना चाहिये।

क्योंकि जो मनुष्य सदाकाल पापों का बंध करता रहता है वह मनुष्य मर कर नरकादिक दुर्गति को ही प्राप्त होता है।

कैसा पुरुष पुण्य के कारणों का त्याग कर सकता है-

पुण्यस्य कारणानि पुरुषः परिहरतु येन निजचित्तम्।।

विषयकषायप्रयुक्तं निगृहीतंहतप्रमादेन।। (395)

अर्थ : जिस पुरुष ने अपने समस्त प्रमाद नष्ट कर दिये हैं तथा इन्द्रियों के विषय और कषायों में लगे हुए अपने चित्तको जिसने सर्वथा अपने वश में कर लिया है ऐसा पुरुष अपने पुण्य के कारणों का त्याग कर सकता है।

भावार्थ : पुण्य के कारणों का त्याग सातवें गुणस्थान में होता है। इससे पहले नहीं होता इसलिये गृहस्थों को तो पुण्य के कारण कभी नहीं छोड़ने चाहिये।

गृहव्यापारविरक्तो गृहीतजिनलिंगः रहितस्वप्रमादः।।

पुण्यस्य कारणानि परिहरतु सदापि स पुरुषः।।396।।

अर्थ : जिस पुरुष ने गृहस्थ के समस्त व्यापारों का त्याग कर दिया है जिसने भगवान् जिनेंद्रदेव का निर्ग्रंथ लिंग धारण कर लिया है तथा निर्ग्रंथ लिंग धारण करने के अनंतर जिसने अपने समस्त प्रमादों का त्याग कर दिया है। ऐसे पुरुष को ही सदा के लिये पुण्य के कारणों का त्याग करना उचित है, अन्यथा नहीं।।

भावार्थ : प्रमादों का त्याग सातवें गुणस्थान में होता है। सातवें गुणस्थान में ही वे मुनि उपशम श्रेणी में ही मुनि उपशम श्रेणी में अथवा क्षपक चढ़ते हैं। उपशम श्रेणी में कर्मों का उपशम होता रहता है और क्षपक श्रेणी के कर्मों का क्षय होता रहता है। इसलिये वहाँ पर पुण्य के कारण अपने आप छूट जाते हैं। गृहस्थों को पुण्य के कारण कभी नहीं छोड़ने चाहिये।

अशुभस्य कारणे च कर्मषट्के नित्यं वर्तमानः।

पुण्यस्य कारणानि बंधस्य भयेन नेच्छन्।।397।।

न मनुते एतत् यःपुरुषों जिनकथित पदार्थ नवस्वरूपं तु।

आत्मानं सुजनमध्यते हास्यस्य च स्थानकं करोति।। 398।।

अर्थः यह गृहस्थ अशुभ कर्मों के आने के कारण ऐसे असिमसि कृषि वाणिज्य आदि छहों कर्मों में लगा रहता है अर्थात् इन छहों कर्मों के द्वारा सदाकाल

अशुभ कर्मों का आस्रव करता रहता है तथापि जो केवल कर्मबंध के भय से पुण्य के कारणों को करने की इच्छा नहीं करता, कहना चाहिये कि वह पुरुष भगवान् जिनेंद्रदेव के कहे हुए नौ पदार्थों के स्वरूप को भी नहीं मानता, तथा वह पुरुष अपने को सज्जन पुरुषों के मध्य में हँसी का स्थान बनाता है।

पुण्य के भेद

पुण्यं पूर्वाचार्या द्विविधं कथयन्ति सूत्रोक्त्यां।
मिथ्यात्व प्रयुक्तेन कृतं विपरीतं सम्यकत्वयुक्तेन।।399।।

अर्थ : पूर्वाचायों ने अपने सिद्धांत सूत्रों के अनुसार उस पुण्य के दो भेद बतलाये हैं। एक तो मिथ्यादृष्टि पुरुष के द्वारा किया हुआ पुण्य और दूसरा इसके विपरीत सम्यग्दृष्टि के द्वारा किया हुआ पुण्य।

मिथ्यादृष्टि के द्वारा किये हुए पुण्य और उसके फल-

मिथ्यादृष्टि पुण्यं फलति कुदेवेषु कुनरतिर्यक्षु।
कुत्सित भोगधरासु च कुत्सित पात्रस्य दानेन।।400।।

अर्थ : मिथ्यादृष्टि पुरुष प्रायः कुत्सित पात्रों को दान देता है । इसलिये वह पुरुष उस कुत्सित दान के फल से कुदेवों में उत्पन्न होता है, कुमनुष्यों में उत्पन्न होता है, नीचे तिर्चंचों में उत्पन्न होता है और कुभोग भूमियों में उत्पन्न होता है।

यद्यपि सुजांत बीजं व्यवसायप्रयुक्तो वपति कृषकः।
कुत्सित क्षेत्रे न फलति तद्वीजं यथा तथा दानम्।।401।।

अर्थ : यद्यपि किसान किसी उत्तम जाति के बीज को विधिपूर्वक (भूमि को अच्छी जोत कर) बोता है तथापि कुत्सित खेत में बोने से उस पर फल नहीं लगते इसी प्रकार कुत्सित पात्रों को दान देने से उनका कुछ भी फल नहीं मिलता है।

यदि फलति कथमपि दानं कुत्सित जातिषु कुत्सितशरीरम्।
कुत्सित भोगान् दत्वा पुनरपि पातयति संसारे।। 402।।

अर्थ : यदि किसी प्रकार कुत्सित पात्रों को दिये हुए दान का फल मिलता भी है तो कुत्सित जाति में उत्पन्न होना, कुत्सित शरीर धारण करना और कुत्सित भोगोपभोगों का प्राप्त होना आदि कुत्सित रूप ही फल मिलता है तथा कुत्सित पात्रों को दिया हुआ वह दान जीव को चतुर्गति रूप इस संसार में ही परिभ्रमण करता रहता है।

संसार चक्रवाले परिभ्रमन् हि योनिलक्षाणि।
प्राप्नोति विविधान् दुःखान् विरचयन् विविधकर्माणि।।403।।

अर्थः कुपात्रों को दान देने वाला पुरुष चौरासी लाख योनियों से भरे हुए इस संसार चक्र में परिभ्रमण करता हुआ अनेक प्रकार के कर्मों का उपार्जन करता रहता है और उन अशुभ कर्मों के फल से अनेक प्रकार के दुःखों को भोगता रहता है। इस प्रकार मिथ्यादृष्टियों के द्वारा किये हुए पुण्य का स्वरूप और उसका फल कहा।

सर्वान् भोगान् दिव्यान् भुक्ता आयुरवसाने।
सम्यग्दृष्टि मनुजाः कल्पवासिषु जायन्ते।।593।।

अर्थ : इन भोग भूमियों में जो सम्यग्दृष्टि पुरुष उत्पन्न होते हैं वे सब दीर्घकाल तक वहां के दिव्य भोगों को भोगते रहते हैं और फिर आयु पूर्ण होने पर वे लोग मर कर कल्प वासी देव होते हैं।

ये पुन मिथ्या दृष्टयः व्यन्तर भवनाः सुज्योतिष्का भवन्ति।
यस्माद् मन्दकषायास्तस्माद्देवेषु जायन्ते।। 594।।

अर्थ : जो इन भोग भूमियों में मिथ्यादृष्टि पुरुष उत्पन्न होते हैं वे वहां के भोगों को भोग कर आयु के अन्त में भवन वासी व्यन्तर वा ज्योतिषी देवों में उत्पन्न होते हैं। भोग भूमियों में उत्पन्न होने वाले जीव सब मंद कषाय वाले होते हैं इसलिये वे मर कर देव ही होते हैं।

लब्ध्वा देश संयमं सकलं वा भवति सुरोत्तमः स्वर्गे।
भुक्ता शुभान् रम्यान् पुनरपि अवतरति मनुजत्वे।।596।।

अर्थ : मनुष्य होकर वे जीव संयम धारण करता हैं अथवा सकल संयम धारण कर स्वर्गों में उत्तम देव होते हैं। वहां पर वे मनोहर सुखों का अनुभव कर आयु के अन्त में फिर मनुष्य भव धारण करते हैं।

तत्रापि सुखानि भुक्त्वा दीक्षा गृहीत्वा भूत्वा निर्ग्रन्थः।
शुक्लध्यानं प्राप्य कर्म हत्वा सिद्धति।।597।।

अर्थ : उस मनुष्य भव में भी अनेक प्रकार के सुखों का अनुभव करता है तदन्तर दीक्षा धारण कर निर्ग्रंथ अवस्था धारण करता है तथा शुक्ल ध्यान को धारण कर समस्त कर्मों का नाश करता है और अन्त में सिद्ध पद प्राप्त कर लेता है।

सिद्धं स्वरूपरूपं कर्म रहितं च भवति ध्यानेन।

सिद्धावासी च नरो न भवति संसारी को जीवः।।598।।

अर्थ : सिद्धों का स्वरूप शुद्ध आत्मस्वरूप होता है तथा शुक्ल ध्यान के द्वारा समस्त कर्मों से रहित हो जाता है। सिद्ध स्थान में रहने वाले समस्त सिद्ध परमेष्ठी जीव फिर कभी भी संसार में नहीं आते हैं।

प्रमत्तविरत नाम के गुणस्थान का लक्षण

अत्रैव त्रयोभाबाः क्षयोपशमादयःभवन्ति गुणस्थाने

पंचदश भवन्ति प्रमादा प्रमत्तविरतो भवेत्तस्मात्।।600।।

अर्थ : इस प्रमत्त विरत नाम के गुणस्थान में औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक तीनों प्रकार के भाव होते हैं तथा पन्द्रह प्रमाद भी इसी गुणस्थान तक होते हैं। इसलिये इस गुणस्थान को प्रमत्त विरत गुणस्थान कहते हैं।

भावार्थ : यद्यपि प्रमाद सब नीचे के गुणस्थानों में ही रहते हैं परन्तु नीचे के गुणस्थानों में पापों का सर्वथा त्याग नहीं है इसलिये उन पापों के साथ प्रमाद भी रहते है। परन्तु इस छठे गुणस्थान में पापों का सर्वथा त्याग हो जाता है पंच महाव्रत धारण किये जाते हैं तथा उनके साथ प्रमाद भी रहते है पापों का त्याग होने पर भी प्रमादों का त्याग नहीं होता इसलिये इस गुणस्थान को प्रमत्त विरत कहते हैं।

वत्तावत्त पमाण जो णिवसइ पमत्तसंजदो होइ।

सयल गुणसील कलिओ महव्वई चित्तलायरणो।।

व्यक्ताव्यक्त प्रमादे यो निवसति प्रमत्त संयतो भवति।

सकल गुणशील कलितो महाव्रती चित्रलाचरणः।।601।।

अर्थ : जो मुनि अठ्ठाईस मूलगुणों को पालन करते हैं शील वा उत्तर गुणों को पालन करते हैं महाव्रतों का पालन करते हैं ऐसे मुनि अब व्यक्त वा अव्यक्त रूप प्रमाद में निवास करते हैं। तब वे प्रमत्त संयत वा प्रमत्त संयमी मुनि कहलाते हैं। ऐसे मुनियों का चारित्र अत्यंत शुद्ध नहीं होता अनेक रंगों से बने हुए कुछ दोष उसमें लगते ही रहते हैं।

भावार्थ : प्रमाद होने से कुछ ना कुछ दोष लगते रहते हैं।

15 प्रमाद

विकहा तहय कसाया इंदियणिद्दा तहव पणओ य।

चउ चउ पण मेगेगे हुंति पमाया हु पण्णरसा।।

विकथास्तथा च कषाया इन्द्रियाणि निद्रा तथा च प्रणयश्च।

चतस्रः चत्वारः पंच एकाएकः भवन्ति प्रमादहि पंचदशा।।602।।

अर्थ : चार विकथा चार कषाय इन्द्रियां निद्रा और प्रणय ये पन्द्रह प्रमाद कहलाते हैं।

भावार्थ : राजकथा, भोजन कथा, देश कथा और चोर कथा ये चार विकथाएं कहलाती हैं। इन कथाओं को सुनने से वा कहने से पाप का बंध होता है इसलिये इनको विकथा कहते हैं।

क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार कषाय हैं। ये भी पाप बंध के कारण हैं। पांचों इन्द्रियों के विषय भी पाप बंध के कारण है निद्रा पापबंध का कारण ही है तथा स्नेह वा प्रणय भी पापबंध का कारण है इसलिये इन सबको प्रमाद कहते हैं तथा इन्हीं प्रमादों के कारण चारित्र की अत्यंत शुद्धता नहीं होती। प्रमादों के कारण उनमें दोष व अशद्धी उत्पन्न हो ही जाती है।

इस गुणस्थान में कौन सा ध्यान होता

ध्यायति धर्म्य ध्यानं आर्त्तमपि नो कषायोदयात्।

स्वाध्याय भावनाभ्यां उपशाम्यति पुनरपि ध्याने।।603।।

अर्थ : छठे गुणस्थान में रहने वाले मुनि धर्मध्यान का चिंतवन करते हैं। तथा नो कषाय के उदय होने से उनके आर्त्तध्यान भी हो जाता है। तथापि स्वाध्याय और रत्नत्रय की भावना के कारण उसी ध्यान से उस आर्त्तध्यान का उपशम कर देते हैं।

भावार्थ : मुनियों के आर्त्तध्यान कभी कभी होता है तथा तीन ही प्रकार का आर्त्तध्यान है निदान नाम का आर्त्तध्यान नहीं होता। यदि किसी मुनि के निदान नाम का आर्त्तध्यान हो जाए तो फिर उस मुनि का छठा गुणस्थान ही छूट जाता है।

तद्ध्यान जातकर्म क्षिपति आवश्यकैः परिपूर्णः।

निन्दनगर्हण युक्त : प्रतिक्रमण क्रियाभिः।। 604।।

अर्थ : छठे गुणस्थान में रहने वाले वे मुनि अपने छहों आवश्यकों को पूर्ण रीति से पालन करते हैं। तथा उन्हीं आवश्यकों के द्वारा उस स्वल्प आर्तध्यान से उत्पन्न हुए कर्मों का नाश कर देते हैं। इसके सिवाय वे मुनि उस आर्तध्यान के कारण अपनी निन्दा करते रहते हैं और अपनी गर्हा करते रहते हैं प्रतिक्रमण करते रहते हैं और अपनी समस्त क्रियाओं का पालन करते रहते हैं।

यावत्प्रमादे वर्तते यावन्न स्थिरं तिष्ठति निश्चलं ध्यानम्।
निन्दन गर्हण युक्तः आवश्यकानि करोति तावद् भिक्षुः।।605।।

अर्थ : वे छठे गुणस्थान में रहने वाले मुनि जब तक प्रमाद सहित रहते हैं, जब तक उनका निश्चल ध्यान अत्यंत स्थिर नहीं होता है तब तक वे मुनि अपनी निन्दा करते रहते हैं गर्हा करते रहते हैं और छहों आवश्यकों को पूर्ण रीति से पालन करते रहते हैं।

षष्ठमके गुणस्थाने वर्तमानः परिहरति षड़ावश्यकानि।
यः साधुः स न जानति परमागमसारसन्दोहम्।।606।।

अर्थ : जो साधु छठे गुणस्थान में रहकर भी छहों आवश्यकों को नहीं करता वह साधु परमागम के सार को नहीं समझता ऐसा समझना चाहिये।

भावार्थ : छठे गुणस्थान में रहने वाले मुनियों को छहों आवश्यक अवश्य करने चाहिये और प्रतिदिन ही करने चाहिये। इनको कभी नहीं छोड़ना चाहिये।

समता वन्दना स्तोत्रं प्रत्याख्यानं प्रतिक्रिया।
व्युत्सर्गश्चेति कर्माणि भवन्त्यावश्यकानि षट्।

अर्थ : समता धारण करना, वन्दना करना, स्तुति करना, प्रत्याख्यान व त्याग करना प्रतिक्रमण करना और व्युत्सर्ग करना ये छह आवश्यक कहलाते हैं।

जो साधु आवश्यक नहीं करता

अथवा जानन् त्यजति सर्वावश्यकानि सुत्रबद्धानि।
तर्हितेन भवति त्यक्तः स्वागमो जिनवरेन्द्रस्य 607।।
आगमे त्यक्ते त्यक्त :परमात्मा भवति तेन पुरुषेण।
परमात्मनः त्यागेन मिथ्यात्वं पोषितं भवति।।608।।

अर्थ : अथवा जो साधु जान बूझकर सिद्धांत सूत्रों में कहे हुए आवश्यकों का त्याग कर देता है; छह आवश्यकों को नहीं करता वह साधु भगवान् जिनेंद्र देव के कहे हुए आगम का ही परित्याग कर देता है ऐसा समझना चाहिये तथा यह बात भी निश्चित है कि जिसने आगम का त्याग कर दिया उसे परमात्मा का भी त्याग कर दिया और परमात्मा का त्याग कराने से वह पुरुष मिथ्यात्व की ही पुष्टि करता है इसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं है।

एवं ज्ञात्वा सदायावन्न प्राप्नोति निश्जलं ध्यानम्।
मनः संकल्पविमुक्तं तावदावश्यकं कुर्यात् व्रतसहितम्।।609।।

अर्थ : यही समझकर मुनियों को उचित है कि जब तक मनके संकल्प विकल्पों से रहित होकर निश्चल ध्यान की प्राप्ति नहीं होती तब तक उनको छहों आवश्यक प्रतिदिन अवश्य करते रहना चाहिए तथा अपने अन्य समस्त व्रतों का पालन करते रहना चाहिये।

आवश्यक आदि कार्यों का फल

आवश्यकादि कर्म वैयावृत्यं च दान पूजादि।
यत्करोति सम्यग्दृष्टिस्तत्सर्वं निर्जरा निमित्तम्।। 610।।

अर्थ : जो सम्यग्दृष्टि पुरुष प्रतिदिन अपने आवश्यकों का पालन करता है, व्रत नियम आदि का पालन करता है, वैयावृत्य करता है, पात्र दान देता है, और भगवान् जिनेंद्र देव की पूजा करता है उस पुरुष का यह सब कार्य कर्मों की निर्जरा का कारण माना जाता है।

यस्य न नभोगामित्वं पादविलेपो न औषधिलेपः।
स नौरिव समुद्रं तारयति किमिच्छ भणितेन।।611।।

अर्थ : जिनके न तो आकाश गामिनी ऋद्धि है न पैरों को स्थिर कर आकाश में चलने की ऋद्धि है और न औषधि लेप ऋद्धि है तथापि वह नाव के सामन भव्य जीवों को संसार समुद्र से पार कर देता है।

भावार्थ : जिन मुनियों के कोई किसी प्रकार की ऋद्धि नहीं है ऐसे साधारण मुनि भी अपने रत्नत्रय स्वरूप शरीर से, अपने धर्मोपदेश से अनेक भव्य जीवों को संसार समुद्र से पार कर देते हैं मुनियों की महिमा अपार वचनातीत है।

यावत्संकल्पश्चित्ते शुभाशुभः भोजनादि क्रियातः।

तावत्करोतु तामपि क्रियां प्रतिक्रमणादिकां च निःशेषाम्।।612।।

अर्थ : इस छठे गुणस्थान में रहने वाले मुनियों के हृदय में जब तक शुभ संकल्प वा अशुभ संकल्प विकल्प होते रहते हैं, जब तक भोजनादिक क्रियाओं की प्रवृत्ति होती रहती है तब तक मुनियों को प्रतिक्रमण आदि समस्त क्रियायें करते रहना चाहिए।

7. अप्रमत्त गुणस्थान का स्वरूप

नष्टाशेष प्रमादो व्रतगुण शीलैर्मण्डितो ज्ञानी।

अनुपशमकोऽक्षपको ध्यान विलीनोहि अप्रमत्तः।।614।।

अर्थ : जिनके ऊपर लिखे प्रमाद सब नष्ट हो गये हैं, जो व्रत शील गुणों से सुशोभित है जो सम्यग्ज्ञानी है, और ध्यान में सदा लीन रहते हैं तथा जो न तो उपशम श्रेणी में चढ़ रहे और न क्षपक श्रेणी में चढ़ रहे हैं ऐसे मुनि अप्रमत कहलाते हैं।

पूर्वोक्ता ये भावा भवन्ति त्रय एव तत्र ज्ञातव्यः।।

मुख्यं धर्म्यध्यानं भवेत् नियमेन अत्रैव।।615।।

अर्थः इस सातवे गुणस्थान में पहले कहे हुए औपशमिक भाव क्षायिक भाव और क्षायोपशकि भाव तीनों भाव होते हैं। तथा इस गुणस्थान में नियमपूर्वक मुख्य रीति से धर्मध्यान होता है।

ध्याता पुनर्ध्यान ध्येयं तथा भवति फलं च तस्सैव।

एते चतुरधिकारा ज्ञातव्या भवन्ति नियमेन।।616।।

अर्थः इस गुणस्थान में चार अधिकार बतलाये हैं ध्यान करने वाला ध्याता, चिंतवन करने रूप ध्यान, जिसका चिंतवन किया जाए ऐसा आत्मा ध्येय और उस ध्यान का फल। ये चार अधिकार नियम पूर्वक इस गुणस्थान में होते हैं।

ध्यान का लक्षण

आहारासननिद्राणां विजयस्तथा इन्द्रियाणाम् पंचानाम्।

द्वाविंशति परिषहानां क्रोधादीनां कषायाणाम्।।617।।

निःसंगो निर्मोही निर्गतव्यापार करण सूत्राढ्यः।

दृढकायः स्थिरचित्तः एतादृशो भवति ध्याता।।618।।

खेत धन धान्य सोना चांदी दासी दासबर्तन कुप्य (वस्त्रादिक) दश बाह्य परिग्रह है। हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा मिथ्यात्व स्त्रीवेद पुंवेद नपुंसक वेद क्रोध मान माया लाभ ये चौदह अन्तरंग परिग्रह है।

ध्यान का स्वरूप

चित्त निरोधे ध्यानं चतुर्विध भेदं च तन्मन्तव्यम्।

पिण्डस्थं च पदस्थं रूपस्थं रूप वर्जितं चैव।।619।।

अर्थ : चित्त का निरोध करना ध्यान है अर्थात् चित्त में अन्य समस्त चिंतवनो का त्याग कर किसी एक ही पदार्थ का चिंतवन करना उस एक पदार्थ के सिवाय अन्य किसी पदार्थ का चिंतवन न करना ध्यान कहलाता है। उस ध्यान के चार भेद हैं पिंडस्थ, पद्स्थ, रूपस्थ, रूपातीत।

घाति चतुष्क विनाशे उत्पद्यते सकलविमलकेवलम्।

लोकालोक प्रकाशं ज्ञानं निरुपद्रवं नित्यम्।।665।।

अर्थ : जिस समय घातिया कर्मों का नाश हो जाता है उसी समय उन भगवान् के पूर्ण निर्मल केवलज्ञान प्रगट हो जाता है। यह केवलज्ञान लोक अलोक सबको एक साथ प्रकाशित करने वाला होता है। उसमें फिर किसी प्रकार का उपद्रव नहीं होता और वह ज्ञान फिर कभी नष्ट नहीं होता अनंतानंत काल तक बना रहता है।

ओवरणयोः विनाशे दर्शन अन्त रहिते।

प्राप्नोति मोह विनाशे अनन्त सुखं च परमात्मा।।666।।

विघ्न विनाशे प्राप्नोति अन्त रहितं च वीर्य परमम्।

उच्यते संयोगि केवली तृतीय ध्यानेन स तत्र।।667।।

अर्थ : ज्ञानावरण कर्म के नाश होने से उन परमात्मा स्वरूप भगवान् के अनंत ज्ञान प्रगट हो जाता है, मोहनीय कर्म के अत्यंत नाश होने से अनंत सुख प्राप्त हो जाता है अंतराय कर्म का अत्यन्त नाश होने से अनंत वीर्य प्रगट हो जाता है। इस प्रकार वे भगवान् अनंत चतुष्टय को धारण कर सयोगी केवली कहलाते हैं। उन सयोगी केवली भगवान् के सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति नाम तीसरा शुक्ल होता है।

13. तेरहवां सयोगी केवली गुणस्थान

शुद्धः क्षायिको भावोऽविकल्पो निश्चलो जिनेद्रस्य।

अस्ति तत्र तद्ध्यानं सूक्ष्म क्रियाऽप्रतिपाति।।668।।

अर्थ : तेरहवें गुणस्थानवर्ती केवली भगवान् जिनेंद्र देव के शुद्ध क्षायिक भाव होते हैं तथा वे विकल्प रहित होते हैं और निश्चल होते हैं। इस तेरहवें गुणस्थान में सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति नाम का तीसरा शुक्ल ध्यान होता है।

परिस्पन्दोऽपि सूक्ष्मो जीवप्रदेशानामस्ति तत्काले।

तेन अणवः आगत्य आस्रवयित्वा च पुनरपि विघटन्ते।।69।।

अर्थ : इस तेरहवें गुणस्थान में रहने वाले भगवान् जिनेंद्र देव के जीव के प्रदेशों का परिस्पंद अत्यंत सूक्ष्म होता है इसीलिये शुभकर्मों की वर्गणाएं आती हैं और उसी समय चली जाती हैं। उनके आत्मा के प्रदेशों में वे कर्म वर्णणाएं ठहरती नहीं हैं।

इसका कारण

यत्र स्तः राग द्वेषौ तेन न बन्धोहि अस्ति केवलिनः।

यथा शुष्क कुड्य लग्नाः बालुका निपतन्ति तथा कर्म।।670।।

अर्थः उन केवली भगवान् के रागद्वेष कर्म का सर्वथा अभाव हो जाता है इसलिये उनके कर्मों का बंध कभी भी नहीं होता। जिस प्रकार सुखी दीवाल पर लगी हुई बालू उसीसमय झड़ जाती है। सुखी दीवाल पर बालू ठहरती नहीं उसी प्रकार बिना राग द्वेष के आत्मा के प्रदेशों में कर्म भी नहीं ठहरते हैं।

भावार्थः स्थिति बंध और अनुभाग बंध दोनों कषायों से होते हैं केवली भगवान् के रागद्वेष का सर्वथा अभाव है इसलिये वहां पर स्थितिबंध और अनुभाग बंध भी कभी नहीं होते हैं। अत्यंत सूक्ष्म काय योग होने से कर्म आते हैं परन्तु वे उसी समय झड़ जाते हैं ठहरते नहीं।

ईहारहिता क्रियागुणा अपि सर्वेपि क्षायिकास्तस्य।

सुखं स्वभाव जातं क्रम करण विवर्जितं ज्ञानम्।।671।।

अर्थ : भगवान् जिनेन्द्र देव का विहार, दिव्य ध्वनि आदि क्रिया सब ईहा रहित वा इच्छा रहित होती है। इसका भी कारणा यह है कि रागद्वेष के साथ ही उनकी इच्छाएं सब नष्ट हो जाती हैं। इसलिये उनकी समस्त क्रियाएं इच्छा रहित होती

है, उनके समस्त गुण क्षायिक होते हैं उनका सुख स्वात्म जन्य स्वाभाविक ही होता है और उनका ज्ञान इन्द्रियों से रहित और अनुक्रम से रहित होता है।

भावार्थ : जिस प्रकार इन्द्रियों से होने वाला ज्ञान अनुक्रम से होता है उसी प्रकार भगवान् का ज्ञान न तो इन्द्रियों से होता है न अनुक्रम से होता है। वे तो एक ही समय समस्त पदार्थ और उनकी समस्त पर्यायों को जान लेते हैं।

ज्ञानेन तेन जानाति कालत्रय वर्तमान् त्रिभुवनार्थान्।

भावान् समांश्च विषमान् सचेतना चेतनान् सर्वान्।।672।।

अर्थ : वे भगवान् उस अपने केवलज्ञान से तीनों लोकों में रहने वाले समस्त चेतन अचेतन पदार्थों को तथा सम विषम पदार्थों को और भूत भविष्यत् वर्तमान संबंधी उन समस्त पदार्थों की अनंतानंत पर्यायों का एक समय में ही जान लेते हैं।

एकमेकस्मिन् क्षणे अनन्त पर्याय गुण समाकीर्णम्।

जानाति यथा तथा जानाति सर्वाणि द्रव्याणि समये।।673।।

अर्थ : जिस प्रकार से भगवान् किसी एक पदार्थ को उनकी अनंतानंत पर्याय और उसके समस्त गुणों को एक ही समय में जान लेते हैं, उसी प्रकार वे भगवान् एक ही समय में समस्त द्रव्य उनकी समस्त पर्यायें और उनके समस्त गुण एक ही समय में जान लेते हैं।

जानन् पश्यन् कालत्रयवर्तमानानि द्रव्याणि।

उक्तः स सर्वज्ञः परमात्मा परमयोगिभिः।।674।।

अर्थ : वे केवली भगवान् सदा काल भूत भविष्यत् और वर्तमान तीनों कालों में हुवे वा होने वाले समस्त पदार्थों को वा पदार्थों की पर्यायों को एक साथ देखते हैं और एक साथ जानते हैं इसलिये परम योगी गणधर देव उनको सर्वज्ञ और परमात्मा कहते हैं।

तीर्थंकरत्वं प्राप्ता ये ते प्राप्नुवन्ति समवसरणादिकम्।

शक्रेण कृतिविभूति पंच कल्याण पूजा च।675।।

अर्थ : उन केवलियों में से जिनके तीर्थंकर प्रकृति का उदय होताहै वे इन्द्रों के द्वारा की गयी समवसरण आदि की महा विभूति को प्राप्त होते हैं तथा गर्भ कल्याणक जन्म कल्याणक इन पांचों कल्याणकों में होने वाली परमोत्कृष्ट पूजा को प्राप्त होते हैं।

समुद्धातक्रिया ज्ञानं तथा दर्शनं च सुखं च।

सर्वेषां सम्मानं अर्हंतां चेतराणां च।।676।।

अर्थ : जिनके तीर्थंकर प्रकृति का उदय है ऐसे अरहंत केवली तथा जिनके तीर्थंकर प्रकृति का उदय नहीं हैं ऐसे सामान्य कवली इन दोनों प्रकार के केवली भगवान् के समुद्धान क्रिया, अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख और अनंत वीर्य वे सब समान होते हैं इसमें किसी प्रकार का अन्तर नहीं होता।

अन्तमुहूर्त कालो भवति जघन्योपि उत्तमःतेषाम्।

गत वर्षोनो कोटिः पूर्वाणां भवति नियमेन।।678।।

अर्थ : इस तेरहवें गुणस्थान की स्थिति जघन्य अंतमुहूर्त है और उत्कृष्ट स्थिति जितने वर्ष की आयु में केवल ज्ञान हुआ है उतने वर्ष कम एक करोड़ पूर्व है।

14. अयोगी केवली नाम का चौदहवाँ गुणस्थान

पश्चादयोग केवली भवति जिनः अघाति कर्मणां हन्ता।

लघुपंचाक्षर कालो भवति स्फुटं तस्मिन गुणस्थाने।।679।।

अर्थः तेरहवें गुणस्थान के अनन्तर चौदहवां गुणस्थान होता है चौदहवें गुण-स्थान का नाम अयोगी केवली है। घातिया कर्मों का नाश कर भगवान् तेरहवें सयोगी केवली गुणस्थान में आते हैं और चौदहवें गुणस्थान में आकर अन्त में अघातिया कर्मों का नाश कर सिद्ध अवस्था प्राप्त करते हैं। इस गुणस्थान का काल लघु पंचाक्षर उच्चारण मात्र है अर्थात् जितनी देर में अ इ उ ऋ लृ इन पांचों ह्रस्व अक्षरों का उच्चारण होता है उतना काल इस चौदहवें गुणस्थान का काल है।

परमौदारिक कायः शिथिलो भूत्वा गलति तत्काले।

तिष्ठति शुद्ध स्वभावः घननिविडप्रदेश परमात्मा।।680।।

अर्थ : इस गुणस्थान के अन्त में उनका वह परमौदारिक शरीर शिथिल होकर गल जाता है। तथा उनके घनीभूत निविड आत्मा के प्रदेश शुद्ध स्वभाव रूप होकर रह जाते हैं और इस प्रकार वे भगवान् परमात्मा हो जाते हैं।

नष्टा किया प्रवृत्तिः शुक्ल ध्यानं च तत्र निर्दिष्टम्।

क्षायिको भावः शुद्धो निरंजनो वीतरागश्च।।681।।

अर्थः इस गुणस्थान में समस्त क्रियाओं की प्रवृत्ति नष्ट हो जाती है, तथा चौथा व्युपरत क्रिया निवृत्ति नाम का शुल्क होता है। इस गुणस्थान में क्षायिक और शुद्ध भाव होते हैं और इसलिये वे भगवान् निरंजन और परम वीतराग हो जाते हैं।

ध्यानं सयोग केवलिनो यथा तथाऽयोगिनः नास्ति परमार्थेन।

उपचारेण प्रोक्तं भूतार्थनय विवक्षयाः।।682।।

अर्थ : जिस प्रकार सयोग केवली भगवान् के ध्यान होता है उस प्रकार का ध्यान भी इस गुणस्थान में नहीं होता। इस गुणस्थान में वास्तव में ध्यान होता ही नहीं है। इस गुणस्थान में भूतार्थ नय की अपेक्षा से (पूर्वकाल नय की अपेक्षा से) उपचार से ध्यान माना जाता है। कर्मों का नाश बिना ध्यान के नहीं होता और चौदहवें गुण स्थान में अघातिया कर्मों का नाश होता है। इसलिये उपचार से ध्यान माना जाता है वास्तविक नहीं।

इसका कारण

ध्यानं तथा ध्याता ध्येय विकल्पाश्च भवन्ति मनः सहिते।

तन्नास्ति केवलद्विके तस्माद् ध्यानं न संभवति।।683।

अर्थ : ध्यान करने वाला ध्याता और ध्यान करने योग्य ध्येय पदार्थों के विकल्प ये सब मन सहित जीवों में होते हैं। परंतु वह मन सयोगी केवली तथा अयोगी केवली दोनों गुणस्थान वालों के नहीं है। इसलिए इन तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानों में ध्यान नहीं है।

मनः सहितानां ध्यानं मनोऽपि कार्मणकाययोगात्।

तत्र, विकल्पो जायते शुभाशुभः कर्मोदयेन।।684।।

अर्थ : जो जीव मन सहित है उन्हीं के ध्यान होता है तथा मन की प्रवृत्ति कार्मण काय योग से होती है तथा जहां पर कार्मण काय योग के निमित्त से मन की प्रवृत्ति होती है वहां पर कर्म का उदय होने से शुभ या अशुभ विकल्प भी उत्पन्न होते हैं।

अशुभोऽशुभं ध्यानं शुभं ध्यानं भवति शुभोपयोगेन।

शुद्धेशुद्धं कथितं सास्त्रवानास्रवं द्विविधम्।।685।।

अर्थ : जहां पर अशुभ विकल्प वा अशुभोपयोग होता है वहाँ पर अशुभ ध्यान होता है, जहां पर शुभ विकल्प वा शुभोपयोग होता है वहां पर शुभ ध्यान होता

है। तथा जहां पर शुभ अशुभ कोई विकल्प नहीं होता केवल शुद्ध उपयोग होता है वहां पर शुद्ध ध्यान होता है। यह शुद्ध ध्यान दो प्रकार का होता है जिसमें आस्रव होता रहे ऐसा आस्रव सहित शुक्ल ध्यान और जिसमें आस्रव न हो ऐसा आस्रव रहित शुद्ध ध्यान या शुक्ल ध्यान।

सिद्ध अवस्था का स्वरूप

नष्टाष्टप्रकृति बन्धश्चरम शरीरेण भवति किंचोनः।
ऊर्ध्वगमन स्वभावः समयेनैकेन प्राप्नोति।।687।।

अर्थ : चौदहें गुणस्थान के अंतिम समय में जब आठों प्रकार का प्रकृतिबंध नष्ट हो जाता है अर्थात् समस्त कार्म नष्ट हो जाते हैं तब उनको सिद्ध अवस्था प्राप्त हो जाती है। उस सिद्ध अवस्था में आत्मा काआकार चरम शरीर से कुछ कम है। अर्थात् उस आत्मा के आकार का घनफल शरीर के आकार के घनफल से कुछ कम होता है। शरीर में जहां जहां आत्म के प्रदेश नहीं है ऐसे पेट नासिका के छिद्र कान के छिद्र आदि आदि में आत्मा के प्रदेश वहां भी नहीं इसलिये सिद्धों के आत्मा के आकार के घनफल में उतने स्थान का घनफल कम हो जाता है। इसलिये चरम शरीर के आत्मा के घनफल से सिद्धों के आत्मा के आकार का घनफल कुछ कम हो जाता है। इसलिये सिद्धों का आकार चरम शरीर से कुछ कम बतलाया है। आत्मा स्वभाव से ही ऊर्ध्व गमन करता है इसलिये कर्म नष्ट होने के अनन्तर एक ही समय में सिद्ध स्थान पर जाकर विराजमान हो जाता है।

सिद्ध स्थान कहाँ है

लोकाग्र शिखर क्षेत्र यावत्तनुपवनो परिमं भागम्।
गच्छति तावत् अस्ति धर्मास्तित्वेन आकाशः।।688।।

अर्थ : इस लोक शिखर के ऊपर के क्षेत्र में तनुवातवलय के ऊपरी भाग पर जहां तक के आकाश में धर्मास्तिकाय है वे सिद्ध परमेष्ठी एक ही समय में पहुंच जाते हैं।

सम्यक्त्वज्ञानदर्शनं वीर्यसूक्ष्मं तथैवावगाहनम्।
अगुरुलघु अव्याबाधं अष्ट गुणा भवन्ति सिद्धानाम्।।694।।

अर्थ : सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहन, अगुरुलघु, अव्यावाध ये आठ गुण सिद्धों में होते हैं।

भावार्थः यह संसारी आत्मा अनादिकाल से ज्ञानावरणादिक आठों कर्मोंसे जकड़ा हुआ है। वे आठों कर्म सब नष्ट हो जाते हैं तब सिद्ध अवस्था प्राप्त होती है। आत्मा में ऊपर लिखे आठ गुण हैं और उनको आठों ही कर्मों ने ढक रखा था। इसलिये उन कार्मों का नाश होने पर ऊपर लिखे आठ गुण अपने आप प्रकट हो जाते हैं। मोहनीय कर्म के नाश होने से सम्यक्त्व गुण प्रगट हो जाता है, ज्ञानावरण कर्म के नाश होने से अनंत ज्ञान प्रगट हो जाता है दर्शनावरण कर्म के नाश होने से अनंत दर्शन प्रगट हो जाता है, अन्तराय कर्म के नाश से अनंत वीर्य प्रगट हो जाता है, आयु कर्म के अभाव होने से अवगाहन गुण प्रगट हो जाता है नाम कर्म के नाश होने से सूक्ष्मत्व गुण प्रगट हो जाता है, गोत्र कर्म के अभाव से अगुरुलघु गुण प्रगट हो जाता है और वेदनीय कर्म के अभाव में अव्याबाध गुण प्रगट हो जाता है इस प्रकार आठों कर्मों का नाश हो जाने से सिद्धों में ऊपर लिखे आठ गुण प्रगट हो जाते हैं।

जानाति पश्यति सकलं लोकालोकं च एक हेलया।
सुखं स्वभाव जातं अनुपमं अन्तपरिहीनम्।।695।।

अर्थ : वे सिद्ध भगवान् एक ही समय में समस्त लोकाकाश और समस्त अलोकाकाश को जानते हैं तथा सबको एक ही साथ एक ही समय में देखते हैं। उन समस्त सिद्धों का सुख शुद्ध आत्मा स्वाभाविक है, संसार की सुख की तथा उनकी कोई उपमा नहीं है और न कभी उन सिद्धों का अन्त होता है। वे सदाकाल विराजमान रहते हैं।

रवि मेरुचन्द्र सागर गगनादिकं तु नास्ति यथा लोके।
उपमानं सिद्धानां नास्ति तथा सुख संघाते।।696।।

अर्थ : सूर्य, चन्द्रमा, मेरू पर्वत, समुद्र, आकाश आदि इस लोक संबंधी समस्त पदार्थ से सिद्धों की उपमा नहीं हो सकती, अर्थात् संसार में ऐसा कोई पदार्थ नहीं है जिसकी उपमा सिद्धों को दे सकें। इसी प्रकार उनके अनन्तसुख की भी कोई उपमा नहीं है।

चलनं वलनं चिन्ता करणीयं किमपि नास्ति सिद्धनाम्।

यस्मादतीन्द्रियत्वं कर्माभावेन समुत्पन्नम्।।697।।

अर्थ : उन सिद्ध परमेष्ठी को न कहीं गमन करना पड़ता है अन्य कोई क्रिया करनी पड़ती है और न किसी प्रकार की चिंता करनी पड़ती है। इसका कारण यह है कि उनके समस्त कर्मों का अभाव हो गया है। इसीलिये उनकी अतीन्द्रियत्व प्राप्त हो गया है।

भावार्थ : संसार में जितनी क्रियाय हैं वे सब इन्द्रियों के द्वारा होती है। सिद्ध परमेष्ठी के शरीर और इन्द्रियां सभी नष्ट हो गयी है। इसलिये उनको कोई भी क्रिया कभी नहीं करनी पड़ती है।

मेरा स्व-शुद्धात्मा चिन्तन (मेरा विश्वरूप)

मेरे द्रव्य-पर्यात्मक शुद्ध स्वरूप)

(चाल : 1. भावे वन्दू तो अरिहन्त...(मराठी)...2. क्या मिलिए...3. आत्मशक्ति...4.भातुकली...5. यमुना किनारे...) - आचार्य कनकनन्दी

मैं स्वयम्भू अतः शाश्वत हूँ...पर उपज ही नाशवान् (होता) है...
स्वयम्भू अतः मैं परम सत्य हूँ...''सद्द्रव्यलक्षणं'' जीव द्रव्य हूँ...
परम सत्य अतः सम्पूर्ण (मैं) हूँ...सम्पूर्ण होने से अनन्त गुणी हूँ...
अतः मैं स्वतन्त्र-मौलिक भी हूँ...पर परिणति से भी रहित हूँ...(1)

मेरे अस्तित्व से सत्तावान् हूँ...मेरे वस्तुत्व से विभु मैं हूँ...
मेरे प्रमेयत्व से प्रज्ञावान् हूँ...स्व-पर प्रकाशी अनन्त ज्ञानी हूँ...
चैतन्य गुण से (मैं) चैतन्यवान् हूँ...मन-मस्तिष्क तो साधन है...
अतः मेरी चेतना मुझसे अभिन्न...रासायनिक प्रक्रिया से नहीं उपज़..(2)

अमूर्त स्वभावी चैतन्यवान् हूँ...अतः भौतिक गुण मेरी नहीं है...
चैतन्य स्वभावी अतः निर्जीव नहीं हूँ...अनन्त ज्ञान दर्श सुख वीर्यवान् हूँ...
स्व-स्वभाव से मैं अच्युत भी हूँ...अतः अस्तिस्वभावी आस्तिक्य मैं हूँ...
पर स्वभाव से नास्ति रूप हूँ...स्व-स्वरूप से अस्ति स्वरूप मैं हूँ...(3)

पर्याय दृष्टि से अनित्य स्वभाव हूँ...द्रव्य दृष्टि से मै नित्य स्वरूप हूँ...

गुणगुणी एकत्व से एक स्वभाव हूँ...गुणगुणी भेद से भेद स्वभाव हूँ...
अनन्त गुणों से अनन्त मैं हूँ...तथाहि 'आदि मध्य अन्त' रहित हूँ...
सूक्ष्मत्व गुण से अणु से भी सूक्ष्म...अगुरुलघु गुण से(मैं) अनन्तानन्त...(4)

अनुभाग प्रतिच्छेद से विशाल मैं हूँ...आकाश से भी अनन्त गुणी हूँ...
मुझेकेवल जानते पूर्णतः सर्वज्ञ...मुझे न जानते भौतिक वैज्ञानिक...
अतः मुझे सम्पूर्ण जानने हेतु...कर रहा हूँ मैं सतत पुरुषार्थ...
मैं हूँ पुरुष मेरा प्रयोजन मैं हूँ...अन्य प्रयोजन 'कनक' हेतु निरर्थक...(5)

मुझमें ही मेरा महान् वैभव...अन्यत्र मेरा नहीं सम्भव है...
राजा महाराजा इन्द्र चक्री से भी...मेरा वैभव अति महान् है...
अतएव इनके वैभव तुच्छ है...कर्मज, अशाश्वतिक दुःखज है...
मेरा-स्व-वैभव इससे परे है...आत्मोत्थ, शाश्वतिक, आनन्द है...(6)

भीलूड़ा, दि. 5.3.2019, रात्रि 8.38

संदर्भ-

आत्म चेतन-अचेतनात्मक

प्रमेयत्वादिभिर्धर्मैं, रचिदात्मा चिदात्मकः।
ज्ञानदर्शनतस्तस्मात्, चेतनाचेतनात्मकः।।(3) स्व.संबोधन

पद्यभावानुवादः (चालः आत्मशक्ति...)

प्रमेय आदि गुणों के कारण, 'चेतना-आत्मा' अचेतन रूप है।
ज्ञानदर्शन गुणों के कारण चेतन, अतःआत्मा चेतन-अचेतन है।।(1)

समीक्षा-

'द्रव्याश्रयाः निर्गुणाः गुणाः' के अनुसार हर गुण पृथक-पृथक है।
एक प्रदेश अवगाही होने पर भी, अनन्त गुण मौलिक व स्वतंत्र है।। (2)

जीवों में मौलिक आठ गुण हैं, जो सिद्ध में प्रगट हैं।
आठ गुणों को ढ़कने वाले, होते ज्ञानावरणादि आठ कर्म हैं।।(3)

आठों कर्म के आस्रव-बंध, कारण भी होते पृथक-पृथक हैं।

आठों कर्म के संवर-निर्जरा कारण भी, होते पृथक-पृथक हैं।।(4)

अणुजीवी-प्रतिजीवि गुण होते इस ढ़कने वाले क्रमशः घाती-अघाती।
एक सौ अड़तालीस से ले अनन्त कर्म, ढाकते अनन्त गुणों को भी।।(5)

एक गुण भले अन्य गुण न होता, तथापि वे एक क्षेत्रवगाही होते हैं।
'परस्पर उपग्रहो गुणानां' भी होने से, एक अन्य गुण के उपकारी होते हैं।
ज्ञान/(प्रमाण) गुण से आत्मा प्रमेय (ज्ञेय) को, जानता तो भी दोनों पृथक्-पृथक् हैं।
ज्ञानदर्शन ही चेतना गुण है,प्रमेय आदि गुण अचेतनमय है।। (7)

सुख गुण को चेतन अनुभव करता, तथापि दोनों गुण पृथक्-पृथाक हैं।
तथाहि अस्तित्व-वस्तुत्व-अगुरुलघुत्व-वीर्यादि गुण पृथक्-पृथक् हैं।।(8)

उपयोग लक्षण जीव होने से, चेतना गुण सबसे प्रमुख गुण है।
इस गुण से हर गुण अनुभवगम्य है, तथा चेतना से अनुसृत हैं।।(9)
चेतना के अतिरिक्त समस्त गुण, होते अचेतनमय है।
अतएव आत्मा चेतना चेतनात्मक सर्वज्ञ ज्ञात अनेकान्तमय है।।(10)

गुण का लक्षण

द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः। (41) मो. शा.

Gunar of attributes depend upon substance and are never without it. An attribute as such cannot be the subtratum of another attributes, although of course, many attributes can co exist in one and the same substance at one and the sane time and place, There can not be an attribute of an attribute.

जो निरन्तर द्रव्य में रहते और गुणरहित हैं वे गुण हैं।

जिसमें गुण आश्रय लेते हैं अर्थात् जिसमें गुण रहते हैं वह आश्रय है। गुणों को कोइ न कोई आश्रय चाहिए, गुण आश्रय के बिना नहीं रह सकते और द्रव्य को छोड़कर अन्य आधार ही नहीं सकता।

जो नित्य द्रव्य के आश्रय से रहता है वह गुण है। यद्यपि पर्यायें भी द्रव्य में

रहती हैं, परन्तु पर्यायें कादाचित्क है अतः 'द्रव्याश्रयाः' इस पद से पर्यायों का ग्रहण नहीं होताा है। अतः 'द्रव्याश्रयाः' इस पद से अनवयी धर्म है ऐसा सिद्ध होता है, जैसे कि, जीव के अस्तित्वादि और ज्ञान, दर्शन आदि गुण हैं और पुद्गल के अचेतनत्व आदि रूप-रसादि गुण हैं।

जदि हवदि दव्वमण्णं गुणदो य गुणा व दव्वदो अण्णे।
दव्वाणंतियमधवा दव्वाभावं पकुव्वंति।।(44) पं.का. पृ. 152)

प्रदेशों की अपेक्षा भी यदि द्रव्य से गुण अलग-अलग हो तो जो अनन्तागुण द्रव्य में एक साथ रहते हैं वे अलग-अलग होकर अनन्त द्रव्य हो जावेंगे और द्रव्य से जब सब गुण भिन्न हो गए तब द्रव्य का नाश हो जावेगा। यहाँ पूछते हैं कि गुण किसी के आश्रय या आधार से रहते या वे आश्रय बिना होते हैं ? यदि वे आश्रय से रहते हैं ऐसा कोई माने और उसको और कोई दोष दे तो यह कहना होगा कि, जो अनन्त ज्ञान आदि गुण जिस किसी एक शुद्ध आत्म द्रव्य में आश्रय रूप है उस आत्म द्रव्य से यदि वे गुण भिन्न-भिन्न हो जावें, इसी तरह दूसरे शुद्ध जीव द्रव्य में भी जो अनन्त गुण हैं वे भी जुदे-जुदे हो जावे तब यह फल होगा कि शुद्धात्मा द्रव्यों से अनन्तगुणों के जुदा होने पर शुद्ध आत्मा द्रव्य अनन्त हो जावेंगे। जैसे ग्रहण करने योग्य परमात्म द्रव्य में गुण और गुणी का भेद होने पर द्रव्य की अनन्तता कही गई वैसी ही त्यागने योग्य अशुद्ध जीव द्रव्य में तथा पुद्गलादि द्रव्यों में भी समझ लेनी चाहिए अर्थात् गुण और गुणी का भेद होते हुए मुख्य या गौण रूप एक-एक गुण का मुख्या या गौण एक-एक द्रव्य आधार होते हुए द्रव्य अनन्त हो जावेगा तथा द्रव्य के पास से जब गुणों का समुदाय द्रव्य है। यदि ऐसे गुण समुदाय रूप द्रव्य से गुणों का एकांत से सर्वथा भेद माना जाएगा तो गुण समुदाय स्वरूप का अस्तित्व द्रव्य कहाँ रहेगा ? किसी भी तरह नहीं रह सकता है।

अविभक्तमण्णत्तं दव्वगुणाणं विभत्तमण्णत्तं
णिच्छंति णिच्चयण्हू तव्विवरीदं हि वा तेसिं।।(45)

जैसे-परमाणु का वर्णादि गुणों के साथ अभिन्नपता है अर्थात् उनमें परस्पर प्रदेशों का भेद नहीं तैसे शुद्ध जीव द्रव्य का केवलज्ञानादि प्रगटरूप स्वाभाविक गुणों के साथ और अशुद्ध जीव का मतिज्ञान आदि प्रगट रूप विभाव गुणों के साथ तथा

शेष द्रव्यों का अपने-अपने गुणों के साथ यथासंभव एकपना है अर्थात् द्रव्य और गुणों के भिन्न-भिन्न प्रदेशों का अभाव जानना चाहिए। निश्चय स्वरूप के ज्ञाता जैनाचार्य, जैसे हिमाचल और विंध्याचल पर्वत में भिन्नपना है अथवा एक क्षेत्र में रहते हुए जल और दूध का भिन्न प्रदेशपना है ऐसा भिन्नपना द्रव्य और गुणों का नहीं मानते हैं तो भी एकांत से द्रव्य और गुणों का अन्यपने से विपरीत एकपना भी नहीं मानते हैं अर्थात् जैसे द्रव्य और गुणाों में प्रदेशों की अभिन्नपना है तैसे संज्ञा आदि की अपेक्षा से भी एकपना है ऐसा नहीं मानते हैं अर्थात् एकांत से द्रव्य और गुणों का न एकपना मानते हैं न भिन्नपना मानते हैं। बिना अपेक्षा के एकत्व व अन्यत्व दोनों को नहीं मानते हैं, किन्तु भिन्न-भिन्न अपेक्षा से भेदाभेद दोनों स्वभावों को मानते हैं। प्रदेशों की एकता से एकपना है। संज्ञादिकी अपेक्षा द्रव्य और गुणों का अन्यपना हैं ऐसा आचार्य मानते हैं।

ववदेसा संठाणा संखा विसया य होंति ते बहुगा।
ते तेसिमणण्णत्ते अण्णत्ते चावि विज्जंते।।(46)

कथन या संज्ञा के भेद आकार के भेद संख्या या गणना और विषय या आधार ये बहुत प्रकार के होते हैं। ये चारों उन द्रव्य और गुणों की एकता में तैसे ही उसकी भिन्नता में होते हैं।

णाणं घणं कुव्वदि घणिणं जह णाणिणं च दुविधेहिं।
भण्णंति तह पुधत्तं एयत्तं चावि तच्चण्हू।।(47)

जैसे धन का अस्तित्व भिन्न है और धनी पुरुष का अस्तित्व भिन्न है इसलिए धन और धनी का नाम भिन्न है,धन का आकार भिन्न है, धनी पुरुष का आकार भिन्न हैं, धन की संख्या भिन्न हैं, धनी पुरुष की संख्या भिन्न हैं, धन का आधार भिन्न है धनी का आधार भिन्न है तो भी धन को रखने वाला धनी है ऐसा जो कहता है सो भेद या पृथक्त्व व्यवहार है। तैसे ही ज्ञान का अस्तित्व ज्ञानी से अभिन्न है ऐसे ज्ञान का अभिन्न अस्तित्व रखने वाले ज्ञानी आत्मा के साथ अभेद कथन हैं। ज्ञान का नाम ज्ञानी से अभिन्न हैं, ज्ञानी का नाम ज्ञान से अभिन्न है, ज्ञान का संस्थान ज्ञानी से अभिन्न है, ज्ञान का आधार ज्ञानी से अभिन्न है, ज्ञानी का आधार ज्ञान से अभिन्न है। इस तरह ज्ञानी और ज्ञानी में अपृथक्त्व या अभेद कथन हैं। इन दोनों दृष्टांतों अनुसार द्राष्टांत विचार लेना चाहिए जहाँ भिन्न-भिन्न द्रव्य हो उसके नामादि भिन्न जानना चाहिए।

णाणी णाणं च सदा अत्यंतरिदा दु अण्णमण्णस्स।।(48)
दोण्हं अचेदणत्तं पसजदि सम्मं जिणावमदं।

जैसे यदि अग्नि गुणी अपने गुण उष्णपने से अत्यन्त भिन्न हो जाये तो अग्नि दग्ध करने के कार्य न कर सकने से निश्चय से शीतल हो जावे। उसी प्रकार जीव गुणी अपने ज्ञान गुण से भिन्न हो जावे तो पदार्थ को जानने में असमर्थ होने से जड़ हो जावे। जैसे उष्ण गुण से अग्नि अत्यन्त भिन्न यदि मानी जावे तो दहन क्रिया के प्रति असमर्थ होने से शीतल हो जावे तैसे ही ज्ञान-गुण से अत्यन्त भिन्न यदि ज्ञानी जीव माना जावे तो वह पदार्थ के जानने को असमर्थता को होता हुआ अचेतन जड़ हो जावे तब ऐसा हो जावे जैसे देवदत्त घसियारे से उसका घास काटने का दतीला भिन्न है वैसे ज्ञान से ज्ञानी भिन्न हो जावे तो ऐसा नहीं कहा जा सकता है। दतीला तो छेदने के कार्य में मात्र बाहरी उपकरण है परन्तु भीतरी उपकरण तो वीर्यातराय के क्षयोपशम से उत्पन्न पुरुष का वीर्य विशेष है। यदि भीतर शक्ति न हो तो दतीला हाथ में होते हुए भी छेदने का काम नहीं हो सकता है। जैसे ही प्रकाश, गुरु आदि बाहरी सहकारी कारणों के होते हुए यदि पुरुष में भीतर ज्ञान का उपकरण न हो तो वह पदार्थों को जानने रूप कार्य नहीं कर सकता है।

समवत्ती समवाओ अपुधब्भूदो य अजुदसिद्धो य।
तम्हा द्रव्वगुणाणं अजुदा सिद्धित्ति णिदिट्ठा।।(50)

जैन मत में समवाय उसी को कहते हैं जो साथ-साथ रहते हो अर्थात् जो किसी अपेक्षा एकरूप से अनादिकाल से तादात्म्य सम्बन्ध या न छूटने वाला सम्बन्ध रखते हो ऐसा साथ वर्तन गुण और गुणी का होता है इससे दूसरा कोई अन्य से कल्पित समवाय नहीं है। यद्यपि गुण और गुणी में संज्ञा लक्षण प्रयोजनादि की अपेक्षा भेद है तथापि प्रदेशों का भेद नहीं है इसके वे अभिन्न है तथा जैसे दंड और दंडी पुरुष का भिन्न-भिन्न प्रदेशपनारूप भेद है तथा वे दोनों मिल जाते है ऐसा भेद गुण और गुणी में नहीं है। इससे इनमें अयुतसिद्धापना (अभेदपना) या एकपना कहा जाता है। इस कारण द्रव्य और गुणों का अभिन्नपना सदा से सिद्ध है। इस व्याख्यान में यह अभिप्राय है कि जैसे जीव के साथ ज्ञान गुण का अनादि तादात्म्य सम्बन्ध कहा गया है तथा वह श्रद्धान करने योग्य है वैसे ही जो अव्यबाध, अप्रमाण, अविनाशी व स्वाभाविक

रागादि दोष रहित परमानन्दमई एक स्वभाव रूप परमार्थिक सुख है इसको आदि लेकर जो अनन्त गुण केवलज्ञान में अन्तर्भूत है और उनके साथ ही जीव का तादात्म्य सम्बन्ध जानना योग्य है तथा उसी ही जीव को रागादि विकल्पों को त्यागकर निरन्तर ध्याना चाहिए।

वण्णरसगंधफासा परमाणुरूविदा विसेसेहिं।
दव्वादो य अणण्णा अण्णत्तपगासगा होंति।।(51)
दंसणणाणाणि तहा जीवणिबद्धाणि पण्णभूदाणि।
ववदेसदो पुधत्तं कुव्वंति हि णो सभावादो।।(52)

निश्चय से वर्ण, रस, गंध, स्पर्श परमाणु में कहे हुए गुण पुद्गल द्रव्य से अभिन्न है जो भी व्यवहार से संज्ञादि की अपेक्षा भेदपने के प्रकाशक है तैसे जीव से तादात्म्य सम्बन्ध रखने वाले दर्शन और ज्ञान गुण जीव से अभिन्न है सो संज्ञा आदि से परस्पर भिन्नपना करते हैं। निश्चय से स्वभाव से पृथक्पना नहीं करते हैं। क्योंकि द्रव्य और गुणों का अभिन्न अभिन्न अन्वय रूप से सम्बन्ध है।

''चेतनमय जीवों में भी होते हैं अनेक अचेतन गुण''

('द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणः'' की समीक्षा)

(आगम एवं अनेकांत की रहस्यपूर्ण कविता...)

(रागः 1. इतनी शक्ति हमें...,2 धन्य हमारे भाग्य जगे...)

जीव में अनन्त होते हैं गुण, प्रमुख होता है चेतना गुण।
चेतना है ज्ञान-दर्शनमय, अन्य गुण है अचेतनमय।।ध्रु.।।
अनेकान्त से होता है सिद्ध, 'द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः' प्रसिद्ध।
हर गुण स्वतंत्र मौलिक होता, द्रव्य आश्रय से निवास करता।। (1)

अस्तित्व वस्तुत्व प्रमेयत्व गुण, अगुरुलघु अव्याबाधत्व गुण।
सूक्ष्मत्व अवगाहनत्व गुण, सामान्य व अचेनत्व गुण।।(2)

'प्रमेयत्वादिभिर्धर्मैरचिदात्मा', अकलंक स्वामी ने कहा।
'ज्ञानदर्शनतस्तस्मात्चेतना', चेतन-अचेतनमय भी कहा।।(3)

नानास्वभाव (होने) से एकानेक (भी) भाव, अचिन्त्य अनन्त विचित्र भाव।
सर्वज्ञज्ञानगम्य यह स्वभाव, आगम वर्णित स्वभाव भाव।।(4)

तथापि जीव न होता अचेतन, चैतन्य अनुश्रुत सम्पूर्ण गुण।
एकक्षेत्रावगाही अनादिनिधन, भिन्न होते संज्ञा संख्यादि लक्षण।। (5)

चेतन से ज्ञात होते अन्य गुण, ज्ञान-ज्ञेय भाव आत्मा का गुण।
अस्तित्वादि होते सामान्य गुण, जीवाजीव व्यापी स्वभाव गुण।।(6)

यथा स्पर्श रस गन्ध व वर्ण, पुद्गल के होते प्रमुख गुण।
तथापि स्पर्श रसादि न होता, रस भी स्पर्शादि गुण न होता।। (7)

तथापि पुद्गलद्रव्य में होते, एक ही क्षेत्र में सदा रहते।
तथाहि चेतन-अचेतन गुण, अभिन्न-भिन्न प्रत्येक गुण।।(8)

अतएव कर्म भी विभिन्न होते, दो-तीन आठ संख्यात होते।
असंख्यात आदि अनन्त होते, जीव के अनन्त गुण को ढ़ाकते/(नाशते)।।(9)

अनुजीवी नशते घाती कर्म से, प्रतिजीवी गुण अघाती से नशते।
केवली बनते घाती कर्म नाश से, मुक्त बनते सर्व कर्म नाश से।।(10)
(अष्ट/सर्व) कर्म नाश हेतु हो प्रयत्न, जिससे प्रगट होंगे गुण अनन्त।
इसी हेतु 'कनक' प्रयासरत, सर्व जीव प्राप्त करे मोक्ष।।(11)

''द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः'' का यथार्थ एवं व्यंग्यात्मक कथन

(राग : शत-शत वन्दन...नरेन्द्र छन्द)

''द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः'' मुझे सिखाता है पाठ अनेक।
हर द्रव्य में होते ही हैं...स्वभाव से गुण अनेक।।ध्रु.।।
एक गुण अन्य गुण न होता...हर द्रव्य में होते हैं स्थित।
अनादिकाल से हर द्रव्य हैं...रहेगा भी अनन्त तक।
ऐसा ही है हर गुण रहता...अनादिकाल से अनन्त तक।।(1)

अस्तित्व वस्तुत्व आदि गुण हर द्रव्य में होते स्थित।
चेतनादि जीव के गुण है जो...अजीव में अचेतन स्थित।।
यह वर्णन आगम कथित है...जो है वस्तु स्वभावगत।
कुछ वर्णन करूँ व्यंग्यात्मक...जिसका वर्णन है निम्नोक्त।।(2)

द्रव्य अर्थात् धन आश्रय से...निर्गुणी भी गुणी होता है।
''सर्वेगुणाः काञ्चनमाश्रयन्ते''...लौकिक में देखा भी जाता।
धनवान् निर्गुणी जन भी...समाज राष्ट्र में मान्य होता।
धनरहित सुगुणी जन भी...समाज राष्ट्र में अमान्य/(तुच्छ) होता।।(3)

शरीर रूपी द्रव्य जिसका...सुन्दर लचीला होता है।
अश्लील-कामुक नाच-गान से...लाखों लोगों को दास बनाता है।
उसे देखने-सुनने को तो...लाखों की भीड़ उमड़ जाती है।
समय साधन धन खर्च कर...नैतिकता को खोती है।।(4)

हीरो-हीरोईन खिलाड़ी नेता...जो सुगुण से भी रहित होते।
ऐसे निर्गुणी कुजन भी...सुगुणी से अधिक मान्य भी होते।।
सत्ता-सम्पत्ति प्रसिद्धि डिग्री...मोही मानवों के गुण ही होते।
सत्य अहिंसा क्षमा मार्दव...आत्मिक गुण भी अमान्य होते।।(5)

षट् द्रव्यसंग्रह नहीं द्रव्यसंग्रह...धनसंग्रह...धनसंग्रह है द्रव्यसंग्रह
इन कुप्रवृत्ति के कारण ही जीव...संसारचक्र में करे भ्रमण।।
सत्य-तथ्य के परिज्ञान हेतु...'कनकनन्दी' द्वारा यह रचना हुई।
हेय त्याग कर उपादेय गहे...जिनकी मति सुमति हुई।।(6)

''ज्ञान-ज्ञेय-ध्येय-हेय''

(आगम निष्ठ कविता)

(राग : 1. आरती कीजे हनुमान लला की...2. चौपई 3. शत-शत वन्दन...4. नरेन्द्र छन्द...)

विश्व के चतुर्विध तत्त्व को जानो, ज्ञान-ज्ञेय-ध्येय-हेय को मानो।
ज्ञान स्वरूप है जीव स्वरूप, ज्ञेय स्वरूप है विश्व स्वरूप।।

ध्येय स्वरूप है मोक्ष स्वरूप, हेय स्वरूप है अनात्म रूप।
ज्ञेय को जानना ज्ञान-स्वभाव, ज्ञान होता है चेतना रूप।।(1)

सुज्ञान-कुज्ञान ज्ञान के भेद, पाँच व तीन क्रमशः प्रभेद।
सम्यक्त्व सहित होता सुज्ञान, मिथ्यात्व सहित होता कुज्ञान।।
ज्ञेय ध्येय हेय जाने सुज्ञान, अयथार्थ जाने-वह कुज्ञान।
ध्येय प्राप्ति में सुज्ञान हेतु, कुज्ञान संसार भ्रमण हेतु।।(2)

जीव-अजीव होता है ज्ञेय, ज्ञान भी होता है स्वयं भी ज्ञेय।
अजीव के होते पंच प्रभेद, जीव के संसारी मुक्त प्रभेद।।
ध्येय होता है मोक्ष स्वरूप, जीव द्रव्य का शुद्ध स्वभाव।
हेय से युक्त होता अशुद्ध, हेय रहित होता है शुद्ध।।(3)

राग-द्वेष मोह होते हैं हेय, पंच पाप सप्त व्यसन हेय।
भाव-द्रव्यकर्म होते हैं हेय, हेय त्याग से मिलता ध्येय।।
हेय त्याग हेतु उपाय करो, रत्नत्रय रूपी मार्ग स्वीकारो।
ध्यान अध्ययन समता धरो, ''कनक'' आत्मा में रमण करो।।(4)

सहभुवो गुणाः, क्रमवर्तिनः पर्यायाः।।92।। (आलापपद्धति)

साथ में होने वाले गुण हैं और क्रम क्रम से होने वाली पर्यायें हैं, अर्थात् अन्वयी गुण हैं और व्यतिरेक परिणाम पर्यायें हैं।

गुण्यते पृथक् क्रियते द्रव्यं द्रव्याद्यैस्ते गुणाः।।93।।

जिनके द्वारा एक द्रव्य दूसरे द्रव्य से पृथक किया जाता है, वे विशेष गुण कहलाते हैं।

अस्तीत्येतस्य भावोऽस्तित्वं सद्रूपत्वम्।।94।।

'अस्ति' इसके भाव को अर्थात् सत् रूपपने को अस्तित्व कहते हैं।

वस्तुनो भावो वस्तुत्वम्, सामान्यविशेषात्मकं वस्तु।।95।।

सामान्य विशेषात्मक वस्तु है, वस्तु का जो भाव है, वह वस्तुत्व है।

द्रव्यस्यभावो द्रव्यत्वम् निजनिज प्रदेश समूहै रखण्ड वृत्या स्वभाव विभाव पर्यायान् द्रवति द्रोष्यति अदुद्रवदिति द्रव्यम्।।96।।

जो अपने-अपने प्रदेश समूह के द्वारा अखण्ड से अपने स्वभाव विभाव पर्यायों को प्राप्त होता है, होवेगा, हो चुका है, वह द्रव्य है, उस द्रव्य का जो भाव है, वह द्रव्यत्व है।

सद्द्रव्यलक्षणम, सीदति स्वकीयान् गुणपर्यायान् व्याप्नोतीति सत् उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्।।97।।

द्रव्य का लक्षण सत् है। अपने गुण और पर्यायों को व्याप्त होने वाला सत् है। अथवा जो उत्पाद व्यय ध्रौव्य से युक्त है, वह सत् है।

प्रमेयस्य भावः प्रमेयत्वम् प्रमाणेन स्वपररूपं परिच्छेद्यं प्रमेयम्।।98।।

प्रमाण के द्वारा जानने के योग्य जो स्व और परस्वरूप है, उस प्रमेय के भाव को प्रमेयत्व कहते हैं।

अगुरुलघोर्भावोऽगुरुलघुत्वम् सूक्ष्मा अवग्गोचरः प्रतिक्षणं वर्तमाना आगमप्रमाण्यादभ्युपगम्या अगुरुलघुगुणाः।।99।।

जो सूक्ष्म है वचन के अगोचर है, प्रति समय में परिणमनशील है तथा आगम प्रमाण से जाना जाता है, वह अगुरुलघु गुण है।

सूक्ष्मं जिनोदितं तत्त्वं, हेतुभिर्नैव हन्यते।
आज्ञासिद्धं तु तद्ग्राह्यं, नान्यथा वादिनो जिनाः।।5।।

जिनेन्द्र भगवान् के कहे हुए सूक्ष्म तत्त्व हेतुओं के द्वारा खण्डित नहीं किये जा सकते। उन आज्ञा सिद्ध सूक्ष्म तत्त्वों को ग्रहण करना चाहिए। क्योंकि जिनेन्द्र भगवान् अन्यथा वादी नहीं होते।

प्रदेशस्यभावः प्रदेशत्वं क्षेत्रत्वं अविभागि पुद्गल परमाणु-नावष्टब्धम्।।100।।

प्रदेश का भाव प्रदेशत्व है अथवा क्षेत्रत्व है एक अविभागी पुद्गल परमाणु के द्वारा व्याप्त क्षेत्र को प्रदेश कहते हैं।

चेतनस्य भावश्चेतनन्तवम् चैतन्यमनुभवनम्।।101।।

चेतन के भाव को अर्थात् पदार्थों के अनुभव को चेतनत्व कहते हैं।

चैतन्यमनुभूतिः स्यात् सा क्रियारूपमेव च।
क्रिया मनोवचः कायेष्वन्विता वर्तते ध्रुवम्।।6।।

चैतन्य नाम अनुभूतिक का है वह अनुभूति क्रिया रूप अर्थात् कर्त्तव्य स्वरूप ही होती है, मन वचन काय में अन्वित (सहित) वह क्रिया नित्य होती रहती है।

अचेतनस्य भावोऽचेतनत्व मचैतन्य मननुभवनम्।।102।।

अचेतन के भाव को अर्थात् पदार्थों के अनुभवन को अचेतनत्व कहते हैं।

मूर्तस्यभावो मूर्तत्वं रूपादिमत्त्वम्।।103।।

मूर्त के भाव को अर्थात् रूप रस, गंध, स्पर्श युक्त को मूर्त कहते हैं।

अमूर्तस्य भावोऽमूर्तत्त्वं रूपादि रहितत्वम्।।104।।

अमूर्त के भाव को अर्थात् स्पर्श, रस, गंध वर्ण से रहितपने को अमूर्तत्व कहते हैं।

स्वभाव विभाव रूपतया याति पर्येति परिणमतीति पर्यायः।।105।।

जो स्वभाव विभाव रूप से सदैव परिणमन करती रहती है, वह पर्याय है।

स्वभाव लाभा दच्युतत्वादस्ति स्वभावः।।106।।

जिस द्रव्य को जो स्वभाव प्राप्त है, उससे कभी भी च्युत नहीं होना अस्ति स्वभाव है।

परस्वरूपेणाभावान्नास्तिस्वभावः।।107।।

परस्वरूप नहीं होना नास्ति स्वभाव है।

निज-निज नानापर्यायेषु तदेवेदमिति द्रव्यस्योपलम्भा-न्नित्यस्वभावः।।108।।

अपनी-अपनी नाना पर्यायों में 'यह वही है' इस प्रकार की प्राप्ति नित्य-स्वभाव है।

तस्याप्यनेक पर्याय परिणामितत्वादनित्यस्वभावः।।109।।

उस द्रव्य का अनेक पर्याय रूप परिणत होने से अनित्य स्वभाव है।

स्वभावनामेकाधारत्वादेक स्वभावः।।110।।

सम्पूर्ण स्वभावों का एक आधार होने से एक स्वभाव है।

एकस्याप्यनेक स्वभावोपलम्भादनेक स्वभावः।।111।।

एक ही द्रव्य के अनेक स्वभावों की उपलब्धि होने से अनेक स्वभाव हैं।

गुणगुण्यादिसंज्ञादिभेदाद् भेदस्वभावः।।112।।

गुण गुणी आदि में संज्ञा, संख्या, लक्षण और प्रयोजन की अपेक्षा भेद होने से

भेद स्वभाव है।

गुणगुण्याद्येक स्वभावादभेदस्वभावः।।113।।

गुण और गुणी का एक स्वभाव होने से अभेद स्वभाव है।

भाविकाले परस्वरूपाकार भवनाद् भव्यस्वभावः।।114।।

भाविकाल में पर (आगामी पर्याय) स्वरूप होने से भव्य स्वभाव है।

कालत्रयेऽपि परस्वरूपाकार भवनादभव्यस्वभावः।।115।।

क्योंकि त्रिकाल में भी परस्वरूपाकार (दूसरे द्रव्य रूप) नहीं होगा अतः अभव्य स्वभाव है।

अण्णोण्णं पविसंता दिंता उग्गासमण्णमण्णस्स।
मेलंता वि य णिच्चं सगसगभावं ण विजहंति।।7।।

वे द्रव्य एक दूसरे में प्रवेश करते हैं, अन्योन्य को अवकाश देते हैं, परस्पर मिल जाते हैं, तथापि सदा अपने-अपने स्वभाव को नहीं छोड़ते।

पारिणामिक भाव प्रधानत्वेन परमस्वभावः।।116।।

पारिणामिक भाव की प्रधानता से परम स्वभाव है।

पर दोषों से शिक्षा ले आत्म वैभव बढाऊँ

(चाल :- 1. मन रे! तू काहे...2. सायोनारा...) **- आचार्य कनकनन्दी**

आत्मन्। (कनक) तू स्व-लक्ष्य प्राप्त कर ऽऽऽ
स्व-क्षमता को बढ़ाते चल, अन्य को चिन्ता तू त्यजऽऽऽ (ध्रुव)
स्व-पर-विश्व कल्याण भावना धरो, किन्तु आत्महित पहले करोऽऽऽ
अन्य से अप्रभावित होकर चलो, शिक्षा तो सभी से ले चलोऽऽऽ
आदर्श का ही अनुकरण करोऽऽऽ अन्य के अन्धानुकरण न करोऽऽऽ
आत्मन्(1)

अनादिकालीन कुसंस्कार के कारण, मानव तक होते रागी-द्वेषी-मोहीऽऽऽ
आहार-भय-मैथुन-परिग्रह आसक्त, न जानते हैं सत्य-असत्यऽऽऽ
तथाहि आत्महित व आत्मअहितऽऽऽ आत्मन्(2)

तम्बाखू के पैकेट में चित्र व लेख, होते हैं ये स्वास्थ्य के अहितकरऽऽऽ

पढ़ते देखते जानते हुए भी, निषेध से भी करते व्यवहारऽऽऽ
गुरुज्ञानी के भी उपदेश न मानकरऽऽऽ आत्मन्(3)

तथाहि मोही-रागी-कामी-स्वार्थी जन, करते हैं भाव व व्यवहारऽऽऽ
ज्ञात-अज्ञात भी स्व-दोष करते, गुण-गुणी का भी करते अनादरऽऽऽ
शकुनी-मंथरा-सम भाव-व्यवहारऽऽऽ आत्मन्(4)

अधिकतर जन भी स्व-मातृभाषा न जानते, विशेषतः हिन्दी भाषा भाषीऽऽऽ
उच्च शिक्षित/(सूरी) उच्च हिन्दी न जानते, संस्कृत-प्राकृत क्या जानेंगे पालेंगेऽऽऽ
अठ्यासी(88%) प्रतिशत न जानते अन्य भाषाऽऽऽ आत्मन्(5)

ऐसे जन क्या जानेंगे धर्म-दर्शन-विज्ञान, आध्यात्मिक की रहस्यपूर्ण भाषाऽऽऽ
भाषा भी नहीं श्रद्धा-प्रज्ञा भी नहीं, नहीं है पुरुषार्थ व जिज्ञासाऽऽऽ
धन-जन-मान की ही अभिलाषाऽऽऽ आत्मन्(6)

ऐसी प्रवृत्ति हर क्षेत्र में होती है, धर्म-शिक्षा-कानून राजनीति मेंऽऽऽ
व्यपार नौकरी में गृहस्थ सन्त तक, देखादेखी में होती ब्राह्य प्रवृत्तिऽऽऽ
शोध-बोध-अनुभव रहित वृत्तिऽऽऽ आत्मन्(7)
अतएव इनसे माध्यस्थ रहकर, करो हे! ज्ञान-ध्यान-तप-त्यागऽऽऽ
निस्पृह-निराडम्बर-मौन-एकान्त में, करो हे! शोध-बोध व अनुभवऽऽऽ
'कनक' तू पाओ स्व आत्म वैभवऽऽऽ आत्मन्(8)
भीलूड़ा 19.01.2019 मध्याह्न 01:25)
(यह कविता श्वे. भक्त. दिलीप जैन (वर्ष 2013 से आ.श्री कनकनन्दी श्रीसंघ सेवारत) के कारण बनी।)

धन्य हे! मैंने मेरे भाव जगाया!
स्व-गुण दोषों का ज्ञान भी किया।

(चालः- (1) क्या मिलिए...(2) हनुमान चालीसा...) **- आचार्य कनकनन्दी**

धन्य हे (मैंने) मेरे भाव जगाया! आत्मतत्त्व का ज्ञान मैं किया।

स्वज्ञान हेतु मैं परज्ञान भी किया! स्व-गुण दोषों का ज्ञान भी किया।।
स्वशुद्ध स्वरूप का श्रद्धान किया! स्वयं को चैतन्यमय माना।
राग-द्वेष-मोह-काम-क्रोध से परे माना! तन-मन-इन्द्रिय से परे माना।।(1)

मैं हूँ अनादि अनिधन स्वयंभू द्रव्य! अनन्त ज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्य।
अनन्त शान्ति समता-क्षमादियुक्त! अनन्त आत्मिक वैभव संभोग युक्त।।
मेरे समान ही समस्त जीव भी होते! कोई सुप्त व कोई जागृत होते।
मुझसे न कोई बड़े-छोटे होते! ''सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया'' अपेक्षा होते।।(2)

अतः मुझे किसी से न राग-रोष! क्रोध-मान-माया-लोभ-विद्वेष।
ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा-मात्सर्य-द्वेष! वैर विरोध से ले निन्दा कलुष।।
किसी से नहीं मेरी प्रतिस्पर्द्धा तुलना! स्व के साथ ही मेरी प्रतिस्पर्द्धा तुलना।
स्व-प्रतिस्पर्द्धा तुलना से विकास करूँ! समस्त विभाव त्याग से स्वभाव
वरूँ।।(3)

अन्य की सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि-बुद्धि! वर्चस्व-प्रभाव से ले डिग्री आदि।
सभी को मैं अनात्म हेय भी मानूँ! अतः उनसे मैं अप्रभावी रहूँ।।
आध्यात्मिक दृष्टि से जो महान् होते! उन्हें आदर्श मानूँ अनुकरण करूँ।
मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ रहूँ! स्व-पर विश्वकल्याण की भावना
भाऊँ।।(4)

चिन्ता त्यागकर मैं चिन्तन करूँ! आर्त्त-रौद्र त्यागकर धर्मशुद्ध ध्याऊँ।
भूत से शिक्षा से भविष्य सुधारूँ! स्व का कर्त्ता-धर्त्ता स्वयं मैं बनूँ।।
स्व-प्रकाशी से पर प्रकाशी बनूँ! पर हेतु आत्म पतन न करूँ।
सत्य-समता से आत्मविकास करूँ! पर के खोटे-छोटे भाव से दोषी न
बनूँ।(5)

आगम अनुभव व शोध-बोध से! परीक्षण-निरीक्षण प्रयोग विधि से।
निस्पृक्ष सत्यग्राही विनम्र भाव से! आध्यात्मिक गुणों को विकास करूँ।।
सुदव्य-क्षेत्र-काल-भावों के द्वारा! निमित्त-उपादान संयोग द्वारा।
नवीन-नवीन सुभाव ज्ञान के द्वारा! स्व-दोष नाश से स्व-गुणों को पाऊँ।।(6)

ये ही मेरा धर्म-कर्म व लक्ष्य! स्व-स्वभाव उपलब्धि ही मेरा सर्वस्व।
इस हेतु ही ज्ञान-ध्यान तप मैं करूँ! इसके योग्य बाह्य धर्म करूँ।।
इसके अतिरिक्त सभी मेरे न योग्य! आत्म-वैभव तुलना में सभी अयोग्य।
मेरे ये बोधि दुर्लभ एकत्व भाव! स्व-शरण अन्यत्व आकिंचन्य भाव।।(7)
सुभाव से सौभाग्य मैं जगा रहा हूँ! सौभाग्य से आत्मभाव जगा रहा हूँ।
जिससे मेरे दुर्भाग्य नश रहे हैं! जिससे शुद्धात्मा की भावना भा रहा हूँ।।
शुद्ध-बुद्ध-आनन्द प्राप्ति के भाव! निस्पृह-निराडम्बर मौन एकान्त भाव।
'सोऽहं' से 'अहं' बनने के भाव! 'कनक' मैं नहीं मैं हूँ शुद्धात्म भाव।।(8)

भीलूडा दि. 04.03.2019 रात्रि 08:44

संदर्भ

हर बहस जीतना जरूरी नहीं

बातचीत के दौरान कोई गलत तथ्या या शब्द आपके मुंह से निकल जाए तो तुरंत अपनी गलती स्वीकार कर लीजिए। अक्सर इंसान जब कोई गलती करता है तो उसके बाद फिर वह तीन गलतियां और करता है- अपनी गलती छुपाता है या उस गलती पर बहस करता है या फिर स्वीकार नहीं करता है। ऐसी स्थिति में वह प्रसंग या विवाद खिंचता चला जाता है। ऐसे में तुरंत माफी मांग लेना या स्वीकार कर लेना कायरता नहीं, बल्कि बुद्धिमता की निशानी है।

कुछ लोगों की बोलने की शैली इतनी तीखी और अपमानजनक होती है कि वे सामान्य बात भी कहते हैं तो लगता है कि डांट रहे हैं। ऐसे लोगों को पता ही नहीं चलता कि उन्होंने कब किसे चोट पहुंचा दी। उदाहरण के लिए यदि आपका प्रिय व्यक्ति आपसे कहे, 'मैं अच्छी तरह जानता हूं, तुम इस ऊंचाई तक कैसे पहुंचे हो' तो आप आहत नहीं होंगे, क्योंकि यह प्रशंसात्मक लाइन है। आपको लगेगा कि सामने वाला आपकी मुश्किलों के बारे में बता कर रहा है। परंतु यही लाइन कोई चुभने वाली शैली में कह दे, तो आपको लगेगा कि जरूर वह व्यक्ति यह कहना चाह रहा है कि यहां तक तुम जुगाड़ से, रिश्वत से, प्रभाव से या अनैतिक तरीके से पहुंचे हो। शब्द वही है परंतु पहले व्यक्ति के लिए आपके मन में आदर भाव बढ़ जाएगा और

दूसरे व्यक्ति के लिए दुश्मनी का भाव। इसलिए यह जरूरी है कि हम मंतव्य के अनुसार बोलने का तरीका भी सीखें। शब्दों में भावनाएं भी संप्रेषित होनी चाहिए।

बहस का अंत भी गरिमा से कीजिए। किसी भी प्रकार की चर्चा या विवाद का अंतर करना बहुत ही संवेदनशील मसला है। किसी भी बहस का अंत ऐसा नहीं होना चाहिए कि आप संबंधों को खो दें। इसलिए कुछ बातों का ध्यान रखिए कि आपकी बहस व्यक्ति के विचार से हो रही है, व्यक्ति से नहीं। हर बहस जीतना जरूरी नहीं है, कई बार हारकर भी जीत हासिल होती है। कोई बहस इतनी लंबी नहीं हो सकती कि आप चाहकर भी खत्म न कर सकें। सार्वजनिक जगह पर यदि बहुत आवश्यक न हो तो दूसरों को बहस में शर्मिंदा करने से बचें। बहस के अगले दिन पुनः उस व्यक्ति को 'हैलो' कहना आपके शक्तिशाली होने की पहचान होगा।

इस तरह गड़े मुर्दे मत उखाड़िए। पुरानी बातों बीच में लाने से दूसरा पक्ष भी उत्तेजित हो जाता है और आपकी सही बातों को मानने से इंकार कर देता है। विवाद बढ़ जाता है और पुराने घाव भी हरे हो जाते हैं। बार-बार गड़े मुर्दे उखाड़ने से अर्थात् पुरानी बातों को बीच में लाने से आपका प्रभाव कम हो सकता है, बात मूल मुद्दे से भटक सकती है।

ईर्ष्या का डंक

ईर्ष्या का वर्णन इस तरह किया जा सकता है, ''मैं वह चाहता हूँ, जो तुम्हारे पास है।'' लेकिन किसी की सफलता पर द्वेष इसके आगे तक जाता है, ''मैं वह चाहता हूँ, जो तुम्हारे पास है और मैं नहीं चाहता कि यह तुम्हारे पास हो।'' कभी-कभार की छुटपुट ईर्ष्या आम होती है। लेकिन द्वेष अस्वस्थ होता है। क्या इनमें से कोई कथन जाना-पहचाना लगता है ?

आप अपनी दोलत, ओहदे और हुलिये की तुलना अपने आस-पास के लोगों से करते हैं।

आप उन लोगों से ईर्ष्या करते हैं, जो आपसे ज़्यादा महँगा सामान ख़रीद सकते हैं।

जब दूसरे लोग अपनी सफलता की कहानियाँ बताते हैं, तो आपको अच्छा नहीं लगता।

आप सोचते हैं कि आपको अपनी उपलब्धियों के लिए जितनी मान्यता मिलती है, आप उससे ज़्यादा मान्यता के हक़दार हैं।

आपको इस बात की चिंता सताती है कि कहीं दूसरे लोग आपको पराजित न मान लें।

कई बार ऐसा महसूस होता है कि आप चाहे जितनी कड़ी मेहनत करें, बाक़ी लोग ज़्यादा सफल नज़र आते हैं।

जो लोग अपने सपने साकार करने में सफल हुए हैं, आप उनके प्रति ख़ुशी नहीं, चिढ़ महसूस करते हैं।

ऐसे लोगों के आस-पास रहना मुश्किल होता है, जो आपसे ज़्यादा पैसे कमाते हैं।

आप अपनी सफलता के अभाव पर शर्मिंदगी महसूस करते हैं।

आप कई बार दूसरों के सामने यह जताते हैं कि आप वास्तविकता से बेहतर प्रदर्शन कर रहे हैं।

जब किसी सफल व्यक्ति पर कोई मुसीबत आती है, तो आप मन ही मन खुशी महसूस करते हैं।

यदि आप किसी दूसरे की उपलब्धियों पर द्वेष महसूस करते हैं, तो यह संभवतः अतार्किक विचार पर आधारित है और इसकी वजह से आप अतार्किक अंदाज़ में व्यवहार कर सकते हैं। किसी दूसरे की दौलत से द्वेष किए बिना अपनी ख़ुद की सफलता की राह पर ध्यान केंद्रित करने के क़दम उठाएँ।

हम दूसरे लोगों की सफलताओं से क्यों जलते हैं?

हालांकि द्वेष की भावनाएँ क्रोध की भावनाओं के समान होती है, लेकिन क्रोध हके आमतौर पर व्यक्त होने की ज़्यादा संभावना होती है, जबकि द्वेष आम तौर पर छिपा रहता है। डैन जैसे लोग अपनी सच्ची भावनाओं को नक़ली भलमनसाहत के नक़ाब तले छिपा लेते हैं। लेकिन मुस्कान के नीचे रोष और ईर्ष्या का खौलता मिश्रण होता है।

डैन का द्वेष अन्याय के अहसास से उत्पन्न हुआ था। कई बार अन्याय वास्तविक हो सकता है और कई बार यह काल्पनिक हो सकता है। डैन को यह

न्यायपूर्ण नहीं लगता था कि उसके पड़ोसी बहुत पैसे कमा रहे थे। वह इस तथ्य पर लगातार सोचता रहता था कि उन लोगों के पास इतना ज़्यादा पैसा था और इतनी ज़्यादा महँगी चीज़ें थीं कि वह उन्हें नहीं ख़रीद सकता था। ख़ुद को ग़रीब महसूस कराने के लिए उसने अपने पड़ोसियों को दोष दिया; अगर वह कम समृद्ध इलाक़े में रह रहा होता, तो ख़ुद को अमीर महसूस करता।

दूसरों की सफलता के प्रति द्वेष गहरी असुरक्षाओं का परिणाम भी होता है। जब आप अपने बारे में बुरा महसूस करते हैं, तो किसी मित्र की सफलता पर ख़ुश होना मुश्किल होता है। जब आप असुरक्षित होते हैं, तो किसी दूसरे की सफलता से आपको अपनी कमियाँ बढ़-चढ़कर दिखती हैं। आप तब भी कटु बन सकते हैं, जब आप ग़लती से यह मान लेते हैं कि क़िस्मत दूसरों पर ज़्यादा मेहरबान है, जबकि आप ख़ुशक़िस्मती के ज़्यादा हक़दार हैं।

दूसरों से या उनके पास की चीज़ों से द्वेष करना तब आसान होता है, जब आपको यह पता न हो कि आप क्या चाहते हैं। जो युवती कभी यात्रा वाली नौकरी नहीं करना चाहती थी, वह अंतरराष्ट्रीय कारोबारी यात्राओं पर जाने वाली सहेली को देखकर यह सोच सकती है कि वह कितनी खुशक़िस्मत है। मैं भी यही करना चाहती हूँ। इसके तुरंत बाद वह घरेलू कारोबार करने वाली दूसरी सहेली को देख सकती है, जो बिलकुल भी यात्रा नहीं करती, और यह सोच सकती है, काश! मैं भी ऐसा कर सकती। ग़ौर करें, ये दोनों जीवनशैलियाँ पारस्परिक विरोधी है, लेकिन वह दोनों की ही हसरत कर रही है। याद रखें, आपको हर मनचाही चीज़ नहीं मिल सकती।

जब आप इस तथ्य को नज़रअंदाज़ कर देते हैं कि ज़्यादातर लोग आवश्यक समय, धन और प्रयास का निवेश करके ही अपने लक्ष्य तक पहुँचते हैं, तो उनकी उपलब्धियों से द्वेष करने की ज़्यादा संभावना रहती है। किसी पेशेवर खिलाड़ी के बारे में यह कहना आसान होता है, ''काश मैं यह कर सकता!'' यह सचमुच ? क्या आप चाहते हैं कि आप सुबह जल्दी उठकर दिन में बारह घंटे तक व्यायाम करें ? क्या आप सचमुच चाहते हैं कि आपकी पूरी आमदनी सिर्फ़ आपकी खेल योग्यताओं पर ही निर्भर हो, जो उम्र बढ़ने के साथ-साथ घटती जाएँगी ? क्या आप सचमुच चाहते हैं कि चुस्त रहने के लिए आप अपने सारे प्रिय व्यंजन खाना छोड़ दें ? क्या

आप सचमुच चाहते हैं कि आप साल भर खेल का अभ्यास करने की ख़ातिर मित्रों और परिवार वालों के साथ समय बिताना छोड़ दें।

दूसरे लोगों की सफलता से द्वेष के साथ समस्या

पड़ोसियों के प्रति डैन के द्वेष ने उसके जीवन के लगभग हर क्षेत्र को प्रभावित किया था- उसका करियर, ख़र्च की आदतें और पत्नी के साथ संबंध भी। यह उस पर इतना हावी हो गया कि उसकी मनोदशा बिगड़ गई और वह आस-पड़ोस के सामाजिक समारोहों में आनंदित नहीं होता था। वह खुद को एक दुष्चक्र में फँसा रहा था- वह अपने पड़ोसियों की सफलता से प्रतिस्पर्धा करने की जितनी ज़्यादा कोशिशें कर रहा था, उनके प्रति उतना ही ज़्यादा द्वेष महसूस कर रहा था।

दूसरे लोगों के बारे में आपका दृष्टिकोण शत-प्रतिशत सही नहीं होता

आप दरअसल यह कभी जानते ही नहीं है कि दूसरों के यहाँ बंद दरवाज़ों के पीछे क्या होता है। डैन को यह नहीं पता था कि उसके पड़ोसियों को किस तरह समस्याएँ हैं। वह तो सामने दिखने वाली चीज़ों के आधार पर उनसे द्वेष करता था।

द्वेष की भावनाएँ किसी रूढ़ि की वजह से भी उभर सकती हैं। शायद आप यह मानते हों कि ''अमीर'' लोग बुरे होते हैं या यह सोचते हों कि ''कारोबार के मालिक'' होते हैं। इस तरह की रूढ़ि की वजह से आप किसी अनजान व्यक्ति से भी द्वेष कर सकते हैं।

यदि आप सतर्क न रहें, तो द्वेष आसानी से आपके पूरे जीवन स्तर पर हावी हो सकता है। द्वेष की वजह से ये समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं :

आप सफलता की अपनी राह पर ध्यान केंद्रित करना छोड़ देंगे :आप किसी दूसरे की उपलब्धियों पर ध्यान केंद्रित करने में जितना ज़्यादा समय ख़र्च करते हैं, अपने लक्ष्यों पर काम करने के लिए आपके पास उतना ही कम समय होता है। किसी दूसरे की उपलब्धियों पर वैमनस्य करने से आप राह भटक जाते हैं और आपकी प्रगति धीमी हो जाती है।

आपके पास जो है, उससे आप कभी संतुष्ट नहीं होगेः अगर आप हमेशा दूसरे लोगों की बराबर करने की कोशिश करते हैं, तो आपको अपनी वर्तमान स्थिति पर

शांति का कभी अहसास नहीं होगा। आप हर किसी से आगे निकलने की लगातार कोशिश में ही पूरी ज़िंदगी बिता देंगे। आप कभी संतुष्ट नहीं हो पाएँगे, क्योंकि हमेशा कोई न कोई ऐसा होगा, जिसके पास ज़्यादा पैसा है, जो ज़्यादा आकर्षक है और जिसके पास सारी अच्छी चीज़ें एक साथ नज़र आती है।

आप अपनी योग्यताओं और गुणों को नज़रअंदाज़ कर देंगे : आप किसी दूसरे जितने सफल होने की हसरत में जितना ज़्यादा समय लगाँएगे, अपनी ख़ुद की योग्यताओं को तराशने में उतना ही कम समय लगा पाएँगे। ध्यान रखें, अगर आप दूसरे लोगों की योग्यता के कम होने की इच्छा रखते हैं, तो इससे आपकी योग्यता नहीं बढ़ जाती है।

आप अपने मूल्यों को छोड़ सकते हैंः द्वेष के वशीभूत होकर लोग उतावले अंदाज़ में व्यवहार कर सकते हैं। अपने मूल्यों के प्रति सच्चे रहना तब मुश्किल होता है, जब आप उन लोगों के प्रति बहुत क्रोध महसूस करते हों, जिनके पास वे चीज़ें है, आपके पास नहीं हैं। दुर्भाग्य से, द्वेष लोगों से असामान्य व्यवहार करा सकता है-जैसे किसी दूसरे के प्रयासों को मटियामेट करना या बराबरी करने के लिए कर्ज़ में डूबना।

आपके संबंध नष्ट हो सकते हैं : जब आप किसी से द्वेष करते हैं, तो आप उससे स्वस्थ संबंध क़ायम नहीं रख पाएँगे। द्वेष अप्रत्यक्ष संवाद, कटाक्ष और चिड़चिड़ेपन की ओर ले जाता है, जो अक्सर झूठी मुस्कान की पीछे छुपा होता है। अगर आप मन ही मन किसी से द्वेष करते हों, तो आप उससे प्रामाणिक और वास्तविक संबंध नहीं रख पाएँगे।

आप अपना ख़ुद का गुणगान कर सकते हैं : आप जिससे द्वेष करते है, उसकी बराबरी करने की कोशिश में आप पहले पहल उसकी नक़ल कर सकते हैं। लेकिन अगर उस व्यक्ति की उपलब्धियाँ आपसे बहुत ज़्यादा दिखती हों, तो आप अपने बारे में डींगें हाँक सकते हैं या अपनी उपलब्धियों के बारे में सरासर झूठ भी बोल सकते हैं। दूसरे लोगों को ''नीचा दिखाने'' या ख़ुद को उनसे ''एक क़दम ऊपर दिखाने'' की कोशिशें आम तौर पर प्रशसंनीय नहीं होती हैं, लेकिन कई बार द्वेषपूर्ण लोग अपने मूल्य तथा महत्त्व को साबित करने के लिए निराशा में ऐसा ही व्यवहार करते हैं।

आप जो है, अगर आपको उसके बारे में अच्छा महसूस नहीं होता है, तो इसके कारणों की जाँच करना महत्त्वपूर्ण है। शायद आप स्वस्थ आत्म-मूल्य बनाने वाला व्यवहार नहीं कर रहे हैं। अगर यह मामला है, तो जाँच करें कि आप अपने जीवन में क्या अलग कर सकते हैं, ताकि आपका व्यवहार आपके मूल्यों और लक्ष्यों के सामंजस्य में आ जाए।

अपना नज़रिया बदलें

अगर आपका व्यवहार मूल्यों और लक्ष्यों के सामंजस्य में है, लेकिन इसके बावजूद आप दूसरे लोगों की उपलब्धियों से द्वेष करते हैं, तो हो सकता है कि कुछ अतार्किक विचारों की वजह से आप उनकी सफलताओं की क़द्र नहीं कर पा रहे हैं। अगर आप लगातार इस तरह की बातें सोच रहे हों, जैसे मैं मूर्ख हूँ या मैं दूसरे लोगों जितना अच्छा नहीं हूँ तो यह संभव है कि दूसरों की सफलताओं पर आप द्वेष महससू करेंगे। आप न सिर्फ ख़ुद के बारे में अतार्किक तरीक़े से सोच सकते हैं, बल्कि आप दूसरों के बारे में भी अतार्किक तरीक़े से सोच सकते हैं।

2013 में एक अध्ययन किया गया, जिसका शीर्षक था, ''एनवी ऑन फ़ेसबुक : अ हिडन थ्रेट टू यूज़र्स सैटिसफ़ैक्शन।'' इसमें यह पड़ताल की गई कि कुछ लोग फ़ेसबुक के संदेश पढ़ते समय नकारात्मक भावनाएँ क्यों महसूस करते हैं। शोधकर्ताओं ने पाया कि लोगों को सबसे ज़्यादा क्रोध और द्वेष तब महसूस होता है, जब उनके ''मित्र'' छुट्टियों के फ़ोटो डालते हैं। उन्हें तब भी द्वेष महसूस होता था, जब उनके मित्रों को उनके जन्मदिन पर ''हैप्पी बर्थडे'' की बहुत सारी शुभकामनाएं मिलती थी। अध्ययन का निष्कर्ष था कि जो लोग फ़ेसबुक के संदेश देखते समय नकारात्मक भावनाएँ महसूस करते हैं, वे जीवन से कम संतुष्ट हो जाते हैं। क्या सचमुच संसार ऐसा हो गया है- कि हम अपने जीवन से इसलिए अंसतुष्ट हो जाते हैं, क्योंकि किसी दूसरे वयस्क को फ़ेसबुक पर जन्मदिन की बहुत सारी शुभकामनाएँ मिल जाती हैं ? या फिर हम इस बात पर द्वेष महसूस करने लगते हैं कि हमारा मित्र छुट्टी मनाने चला गया ?

अगर आप ख़ुद को दूसरे लोगों से द्वेष करता पाएँ,तो अपने विचारों को बदलने के लिए इन रणनीतियों का इस्तेमाल करें :

दूसरों से तुलना करना छोड़ दे : दूसरों से अपनी तुलना करना सेव और नारंगी की तुलना करने जैसा है। आपके पास अनूठे गुणों, योग्यताओं और जीवन अनुभवों का एक अलग भंडार है, इसलिए दूसरे लोगों से अपनी तुलना करना आत्म-मूल्य मापने का सटीक तरीक़ा नहीं है। इसके बजाय, अपनी तुलना उससे करें जो पहले थे और यह देखे कि इंसान के रूप में आप किस तरह विकास कर रहे हैं।

अपनी रूढ़ियों को जानें: लोगों को जानने के लिए मेहनत करें; रूढ़ियों के आधार पर उनकी आलोचना न करें। ख़ुद को यह मानने की अनुमति न दें कि जिस व्यक्ति की दौलत, शोहरत या किसी दूसरी चीज़ से आपको ईर्ष्या होती है, वह बुरा है।

अपनी कमज़ोरियों पर ज़ोर देना छोड़ दें : यदि आप उन सारी चीज़ों पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जो आपके पास नहीं हैं या जो आप नहीं कर सकते, तो आप उन लोगों से द्वेष करेंगे, जिनके पास वे चीज़ें हैं। इसके बजाय अपनी शक्तियों, योग्यताओं और ख़ूबियों पर ध्यान केंद्रित करें।

दूसरे लोगों की शक्तियों को बढ़ा-चढ़ाकर देखना छोड़ें : द्वेष अक्सर इस बात को अतिशयोक्तिपूर्ण ढंग से देखने से उत्पन्न होता है कि दूसरे लोग कितनी ज़िंदगी जी रहे हैं या उनके पास कितनी सारी अच्छी चीज़े हैं। याद रखें, हर व्यक्ति की कमजोरियाँ, असुरक्षाएँ और समस्याएँ भी होता हैं- सफल लोगों को भी।

दूसरे लोगों कीउपलब्धि का अपमान न करें : किसी दूसरे की उपलब्धियों को नीचा दिखाने से सिर्फ़ द्वेष की भावनाएँ ही उत्पन्न होगी। इस तरह की बातें कहना छोड़े, ''उसके प्रमोशन में उसकी योग्यता का कोई हाथ नहीं था। उसे तो प्रमोशन सिर्फ़ इसलिए मिला, क्योंकि उसकी बॉस से दोस्ती थी।''

क्या न्यायपूर्ण है यह सोचना छोड़ें : उन चीज़ों पर ध्यान केंद्रित न करें, जो आपके हिसाब से न्यायपूर्ण नहीं है। दुर्भाग्य से, कई बार लोग आगे निकलने के लिए धोखे का सहारा लेते हैं। कुछ लोग तो सिर्फ़ संयोग से ही सफल हो जाते हैं। लेकिन आप इस बारे में सोचने में जितना ज़्यादा समय लगाते हैं कि कौन सफलता का ''हक़दार'' है और कौन नहीं है, आपके पास किसी उपयोगी काम में लगाने के लिए उतना ही कम समय होगा।

प्रतिस्पर्धा के बजाय सहयोग पर ध्यान केंद्रित करें

जब आप दूसरे लोगों की सफलताओं पर ख़ुश होते हैं, तो आप सफल लोगों को विकर्षित करने के बजाय आकर्षित करेंगे। जो लोग अपने लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए कड़ी मेहनत कर रहे हैं, ऐसे लोगों से घिरे रहना आपके लिए अच्छा हो सकता है। आपको प्रेरणा, प्रोत्साहन और जानकारी हासिल हो सकती है, जिससे आपकी यात्रा में आपको मदद मिल सकती है।

सफलता की अपनी ख़ुद की परिभाषा गढें

हालांकि कई लोग सफलता को पैसे से जोड़ते हैं, लेकिन स्पष्ट रूप से हर व्यक्ति के मन में दौलतमंद बनने की इच्छा सबसे प्रबल नहीं होती। हो सकता है जीवन में सफलता की आपकी परिभाषा यह हो कि आप अपना समय और योग्यताएँ देकर समाज को फ़ायदा पहुँचाएँ। शायद आप अपने बारे में सर्वश्रेष्ठ तब महसूस करेंगे, जब आप कम घंटे काम करें और ज़रूरतमंद लोगों को अपना समय दे पाएँ। यदि यह सफलता की आपकी परिभाषा है, तो उस व्यक्ति से द्वेष करने की कोई ज़रूरत नहीं है, जिसने बहुत सा पैसा कमाने का विकल्प चुना है, क्योंकि यह सफलता की उसकी परिभाषा के सामंजस्य में है।

जब लोग कहते हैं, 'मेरे पास हर वह चीज़ है, जो मैं कभी चाहता था, लेकिन इसके बावजूद मैं खुश नहीं हूँ' तो एसा अक्सर इसलिए होता है, क्योंकि उनके पास दरअसल वह हर चीज़ नहीं है, जो वे चाहते थे। वे अपने प्रति सच्चे होने के बजाय सफलता की किसी दूसरे की परिभाषा के अनुरूप जी रहे हैं। डैन का ही प्रकरण लें। वह उन सारी भौतिक वस्तुओं को हासलि करने के लिए मेहनत कर रहा था, जो उसके पड़ोसियों के पास थीं। लेकिन इससे उसे कोई ख़ुशी नहीं मिल रही थी। उसने और उसकी पत्नी ने मिलकर यह विकल्प चुना था कि पत्नी घर पर रहकर बच्चों को सँभाले, क्योंकि यह उनके लिए अतिरिक्त नौकरी से मिलने वाले पैसे से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण था। लेकिन अपने मूल्यों पर से निगाह हटा ली और अपने पड़ोसियों की नक़ल करने लगा।

सफलता की ख़ुद की परिभाषा बनाने के लिए कई बार सबसे अच्छा यह रहता है कि आप सिर्फ़ मौजूदा अवस्था को ही न देखें, बल्कि अपने जीवन की बड़ी

तसवीर देखें। कल्पना करें कि आप अपने जीवन के अंत में पहुँच गए हैं और पलटकर इन बरसों को देख रहे हैं। नीचे दिए गए प्रश्नों के किन उत्तरों से आपको शांति का सबसे ज़्यादा अहसास होगा ?

जीवन में मेरी सबसे बड़ी उपलब्धियाँ क्या होगी ? क्या आपकी सबसे बड़ी उपलब्धियों में पैसा शामिल होगा ? आपने दूसरे लोगों के प्रति क्या योगदान दिया ? वह परिवार जो आपने बनाया ? वह कारोबार जिसे आपने खड़ा किया ? यह तथ्य कि आपने संसार में फर्क़ डाला ?

मैं यह पता कैसे लगाऊँ कि मैंने ये चीज़े हासिल कर ली है ? आपके पास क्या प्रमाण है, जिससे यह साबित होता है कि आप अपने लक्ष्यों तक पहुँच गए हैं ? क्या लोगा आपको बताते हैं कि वे आपके योगदानों की कद्र करते हैं ? क्या आपका बैंक अकाउंट यह साबित करता है कि आपने बहुत सा पैसा कमाया है ?

मेरे समय, पैसा और गुण ख़र्च करने के कौन से तरीक़े सर्वश्रेष्ठ हैं ? आपके जीवन की कौन सी यादें आपके लिए सबसे ज़्यादा महत्त्वपूर्ण होंगी ? कौन सी गतिविधियाँ आपकों गर्व और संतुष्टि का सबसे ज़्यादा अहसास देंगी ?

सफलता की अपनी परिभाषा को लिख लें। जब आपका मन दूसरे लोगों से द्वेष करने को ललचाए, जो सफलता की उनकी परिभाषा के अनुरूप काम कर रहे हों, तो ख़ुद को अपनी परिभाषा याद दिलाएँ। सफलता का हर व्यक्ति का मार्ग भिन्न होता है और यह पहचानना महत्त्वपूर्ण है कि आपकी यात्रा अनूठी है।

दूसरे लोगों की उपलब्धियों का जश्न मनाएँ

अगर आप सफलता की ख़ुद की परिभाषा के अनुरूप काम कर रहे हैं और आपने अपनी असुरक्षाओं को दूर कर लिया है, तो आप दूसरे लोगों की उपलब्धियों का जश्न बिना किसी द्वेष के मना सकते हैं। जब आप यह मान लेते हैं कि कोई आपका प्रतिस्पर्धी नहीं है, तो आपको यह चिंता नहीं सताएगी कि किसी दूसरे की सफलता से आप असफ़ल दिखेंगे। इसके बजाय, अगर कोई व्यक्ति कामयाबी के एक नए मील के पत्थर तक पहुँचता है, ज़्यादा पैसे कमाता है या कोई ऐसी चीज़ करता है, जो आपने नहीं की है, तो आपको उसके लिए सचमुच खुशी महसूस होगी।

दूसरों की उपलब्धियों को स्वीकार करने से आप शक्तिशाली बनते हैं

जब आप दूसरों की सफलता पर द्वेष करना छोड़ देते हैं, तो आप अपने ख़ुद के लक्ष्यों की दिशा में काम करन के लिए स्वतंत्र हो जाएँगे। आपमें अपने ख़ुद के मूल्यों के अनुसार जीने की इच्छा होगी और आप उन लोगों के प्रति नाराज़गी या धोखे की भावना महसूस नहीं करेंगे, जो उनके मूल्यों के अनुसार जीते हैं।

जब डैन सफलता की अपनी खुद की परिभाषा तक पहुँचने पर ध्यान केंद्रित करने लगा, तो उसे शांति और मुक्ति का अहसास हुआ। अपने पड़ोसियों के साथ प्रतिस्पर्धा करने के बजाय वह ख़ुद से प्रतिस्पर्धा करने लगा। वह हर दिन ख़ुद को थोड़ा बेहतर बनने की चुनौती देना चाहता था। डैन की तरह ही प्रामाणिक जीवनशैली जीना उस व्यक्ति के लिए अनिवार्य है, जो जीवन में सच्ची सफलता चाहता है।

समस्या-निवारण और कुछ बाधाएँ

जब आप ख़ुद सफल हो रहे हों, तो दूसरों की सफलता के प्रति द्वेष महसूस करने से बचना आसान होता है। लेकिन जीवन में संभवतः ऐसे पल भी आएँगे, जब आप संघर्ष कर रहे होंगे। तब दूसरे लोगों से न जलना बहुत मुश्किल हो सकता है। जब आप अपने लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए जूझ रहे हों और आपके आस-पास के लोग उनके लक्ष्यों तक पहुँच रहे हों, तो अपनी भावनाओं पर क़ाबू रखने के लिए कड़ी मेहनत और लगन की ज़रूरत होती है।

क्या सहायक है

सफलता की अपनी खुद की परिभाषा बनाना।

द्वेष उत्पन्न करने वाले नकारात्मक विचारों की जगह ज़्यादा तार्किक विचार रखना।

दूसरों की उपलब्धियों का जश्न मनाना।

अपनी शक्तियों पर ध्यान केंद्रित करना।

हर व्यक्ति के साथ प्रतिस्पर्धा करने के बजाय सहयोग करना।

क्या सहायक नहीं है

हर व्यक्ति के सपनों का पीछा करना।

यह कल्पना करना कि दूसरों का जीवन कितना बेहतर है।

अपने आस-पास के हर व्यक्ति से लगातार अपनी तुलना करना।

दूसरे लोगों की उपलब्धियों को कम करके बताना।

हर व्यक्ति के साथ ऐसा व्यवहार करना, मानो वह आपका प्रतिस्पर्धी हो।

सृष्टि का केंद्र

हम सभी में जीवन में अपना न्यायपूर्ण हिस्सा चाहने की प्रवृत्ति होती है। बहरहाल, यह विश्वास स्वस्थ नहीं है कि आप जो हैं या आप जिससे गुज़रे हैं, उसके लिए संसार आपको कोई चीज़ देने के लिए बाध्य या ऋणी है। क्या आप आगे दिए गए किसी बिंदु पर हाँ में जवाब देते हैं ?

आप सोचते हैं कि आप अपने ज़्यादातर काम औसत से बेहतर करते हैं, जैसे कार चलाना या दूसरों लोगों से बातचीत करना।

आपके परिणाम स्वीकार करने के बजाय बातचीत के ज़रिये समस्याओं से बाहर निकलने की ज़्यादा संभावना है।

आप विश्वास करते हैं कि आप सफल होने के लिए पैदा हुए हैं।

आप सोचते हैं कि आपका आत्म-मूल्य आपकी भौतिक दौलत से जुड़ा है।

आप विश्वास करते हैं कि आप ख़ुश रहने के हक़दार हैं।

आप सोचते हैं कि आप जीवन में अपने हिस्से की समस्याओं से निपट चुके हैं और अब समय आ गया है कि आपके साथ अच्छी चीज़ें हों।

आप दूसरे लोगों के बारे में सुनने के बजाय अपने बारे में बोलना पसंद करते हैं।

आप सोचते हैं कि आप इतने स्मार्ट हैं कि कड़ी मेहनत के बिना सफल हो सकते हैं।

आप कई बार ऐसी चीज़ें ख़रीद कर लेते हैं, जिनका ख़र्च आप नहीं उठा सकते, लेकिन खुद को यह बताकर इसे तर्कसंगत साबित करते है कि आप इतने मूल्यवान हैं।

आप खुद को बहुत सी चीज़ों में विशेषज्ञ समझते हैं।

यह विश्वास करना अच्छी बात नहीं है कि आपको हर व्यक्ति जितनी कड़ी मेहनत नही करना चाहिए या आपको हर व्यक्ति की तरह उस प्रक्रिया से नहीं गुज़रना चाहिए, क्योंकि आप नियम के अपवाद हैं। लेकिन आप यह सीख सकते हैं कि इस बारे में शिकायत करना कैसे छोड़ें कि आपको वह नहीं मिल रहा है, जिसके आप हक़दार हैं। अपना ध्यान मानसिक रूप से शक्तिशाली बनने पर केंद्रित करें, ताकि आप हक़दार महसून करें।

हम क्यों महसूस करते हैं कि संसार हमारा ऋणी है

ल्यूकास अकेले बच्चे के रूप में बड़ा हुआ था और उसके माता-पिता ने जिदंगी भर उसे यह विश्वास दिलाया था कि वह एक नैसर्गिक लीडर है, जो निश्चित रूप से सफल होगा। इसलिए जब वह कॉलेज की पढ़ाई पूरी करके निकला, तो उसे विश्वास था कि उसकी तकदीर में महान बनना लिखा है। उसने यह मान लिया था कि कोई भी नियोक्ता उसकी योग्यता को तुरंत परख लेगा और उसे अपनी टीम में शामिल करके ख़ुद को सौभाग्यशाली समझेगा।

कई बार दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियाँ झेलने वाला व्यक्ति सोचता है कि वह इसकी भरपाई का हक़दार है। कई बार कोई व्यक्ति सोचता है कि वह बाकी हर व्यक्ति से बेहतर है, इसलिए वह पुरस्कार का हक़दार है। चाहे स्थिति जो भी हो, ल्यूकास जैसे लोग हर जगह होते हैं। हालाँकि हम दूसरे लोगों में यह गुण बड़ी जल्दी पहचान लेते हैं, लेकिन सच्चाई यह है कि हम सभी किसी न किसी समय हक़दार महसूस करते हैं और अक्सर अपने इस दोष को नहीं पहचान पाते।

हम एक ऐसे संसार में रहते हैं, जहाँ अधिकारों और विशेषाधिकारों में अक्सर ग़लतफ़हमी हो जाती है। अक्सर लोग सोचते हैं कि उन्हें ''खुश रहने का अधिकार है'' या ''सम्मानजनक ढंग से व्यवहार किए जाने का अधिकार है,''भले ही अपनी मनचाही चीज़ पाने के लिए उन्हें दूसरों के अधिकारों का अतिक्रमण करना पड़े। विशेषाधिकार अर्जित करने के बजाय इस तरह व्यवहार करते हैं, मानो समाज किसी तरह से उनका ऋणी हो। विज्ञापन देने वाले भोग-विलास और भौतिकवाद को बढ़ावा देकर हमें प्रॉडक्ट्स ख़रीदने के लिए लुभाते हैं। ''आप इसके हक़दार हैं''

यह विचार, चाहे आप इसका ख़र्च उठा सकते हों या नहीं, हममें से कई को गहरे कर्ज़ में डुबा देता है।

संसार आपको कोई चीज़ देने के लिए बाध्य है, यह भावना हमेशा श्रेष्ठता के अहसास की वजह से नहीं होती। कई बार तो यह अन्याय के अहसास की वजह से होती है। मिसाल के तौर पर, जिस व्यक्ति बचपन मुश्किल रहा है, वह अपने क्रेडिट कार्ड का अधिकतम इस्तेमाल करके वे सारी चीज़ें ख़रीद लेता है, जो उसे बचपन में कभी नहीं मिली थीं। वह सोच सकता है कि संसार अच्छी चीज़ें पाने के अधिकार के लिए उसका ऋणी है, क्योंकि बचपन में उसने बहुत दुःख झेला था। इस तरह का हक़ समझना भी ख़ुद को श्रेष्ठ मानने जितना ही नुकसानदेह हो सकता है।

जेनरेशन मी और द नार्सिज़्म एपिडेमिक की लेखिका तथा मनोवैज्ञानिक जीन ट्विंगी ने आत्ममुग्धता और पात्रता पर कई अध्ययन किए हैं। अध्ययनों का निष्कर्ष था कि युवा पीढ़ियों में भौतिक दौलत की इच्छा बढ़ रही है, जबकि मेहनत करने की इच्छा घट रही है। वे इस विच्छेद के कई संभावित कारण सुझाती हैं, जिनमें ये शामिल हैं :

बच्चों में आत्म-गौरव बढ़ाने पर ज़रूरत से ज़्यादा ध्यान केंद्रित किया जाता है : आत्म-गौरव बेहतर बनाने वाले स्कूल प्रोग्राम बच्चों को यह सिखाते है वे सभी ख़ास हैं। बच्चों को ऐसी शर्ट पहनने देना जो कहती हैं कि यह सब मेरे बारे में हैं या उन्हें बार-बार बताना कि ''तुम सर्वश्रेष्ठ हो'' आत्म-महत्त्व के बारे में उनके फूले हुए विचारों को ईंधन देता है।

अति लाड़-प्यार भरी परवरिश बच्चों को यह सीखने से रोकती है कि वे अपने व्यवहार की ज़िम्मेदारी कैसे स्वीकार करें : जब बच्चों को उनकी हर मनचाही चीज़ दे दी जाती है और उन्हें ग़लत व्यवहार के परिणाम नहीं झेलने पड़ते, तो वे चीज़ों को अर्जित करने का मूल्य नहीं सीख पाते हैं। इसके बजाय उन्हें भौतिक चीज़ों और शाबाशी की अति प्रचुरता दे दी जाती है, चाहे उनका व्यवहार कैसा भी हो।

सोशल मीडिया स्व-महत्त्व के बारे में ग़लत विश्वासों को ईंधन देता है : युवा लोग ''सेल्फ़ी'' और स्व-प्रचार ब्लॉग्स के बिना किसी संसार की कल्पना नहीं कर सकते। यह अस्पष्ट है कि क्या सोशल मीडिया सचमुच आत्ममुग्धता को ईंधन देता है

या यह लोगों को श्रेष्ठता के अपने अंतर्निहित विश्वासों की घोषणा करने का ज़रिया देता है। लेकिन प्रमाण बताता है कि लोग अपने आत्म-गौरव को बढ़ाने के लिए सोशल मीडिया की ओर मुड़ते हैं।

पात्रता के अहसास के साथ समस्या

ल्यूकास का पात्रता का अहसास निश्चित रूप से ऑफ़िस में उसके दोस्त नहीं बना रहा था। यह भी संभावना नहीं थी कि इससे उसे जल्दी प्रमोशन पाने में मदद मिलेगी।

पात्रता की मानसिकता आपको योग्यता के आधार पर चीज़ें अर्जित करने से रोकती है। आपके कड़ी मेहनत करने की कम संभावना है, जब आप इस बारे में शिकायत करने में व्यस्त हो कि आपको वह नहीं मिल रहा है, जो मिलना चाहिए। इसके बजाय आप उम्मीद करते हैं कि आप जो हैं और आप जिन मिश्कलों से गुज़रे हैं, उसके आधार पर आपको चीज़ें मिलनी चाहिए। आप अपने व्यवहार की जिम्मेदारी स्वीकार नहीं कर पाएँगे, जब आप उस पर अपना दावा करने की कोशिश पर केंद्रित होंगे जो आपके हिसाब से संसार को आपको देना चाहिए।

आप लोगों से अयथार्थवादी माँगें भी करेंगे या ख़ुद को जिसका हक़दार मानते हैं, उसे हासिल करने पर बहुत ज़्यादा केंद्रित बन जाएँगे और इस वजह से किसी संबंध में सार्थक योगदान नहीं दे पाएँगे।

यदि आप हमेशा माँग करते हैं, ''मैं इस बात का हक़दार हूँ कि मेरी परवाह हो और मेरे साथ अच्छा व्यवहार हो,'' तो आपको वैसा प्रेम और सम्मान देने में मुश्किल आ सकती है, जो आपके साथ अच्छा व्यवहार करने वाले साझेदार को आकर्षित करे।

जब आप ख़ुद पर ध्यान केंद्रित कर लेते हैं, तो परानुभूतिपूर्ण बनना बहुत मुश्किल हो जाता है। दूसरे लोगों को समय और पैसे का दान क्यों देना, अगर आप ऐसी चीज़ें हमेशा सोच रहे हैं, मैं ख़ुद के लिए अच्दी चीज़े ख़रीदने का हक़दार हूँ ? देने के आनंद का अनुभव करने के बजाय आप लगातार यही सोचते रहेंगे कि आपको क्या नहीं मिल रहा है।

जब आपको हर मनचाही चीज़ नहीं मिलती है, तो पात्रता का अहसास कटुता की भावनाओं की ओर ले जा सकता है, क्योंकि आप सोचेंगे कि आपको किसी तरह शिकार बनाया जा है। आपके पास जो हैं और आप जो करने के लिए स्वतंत्र हैं, उसका आनंद लेने के बजाय आप उन चीज़ों पर ध्यान केंद्रित करेंगे, जो आपके पास नहीं है और जो आप नहीं कर सकते। संभावना है कि आप जीवन में कुछ सर्वश्रेष्ठ चीज़ें चूक जाएँगे।

ख़ुद से बाहर निकलें

ल्यूकास को यह समझने की ज़रूरत थी कि पात्रता का उसका अहसास किस तरह उसे और उसके आस-पास के लोगों को प्रभावित कर रहा है। एक बार जब उसने अपनी आँखें खोलकर देखा कि दूसरे लोग उसे किस तरह देखते हैं तो वह सहकर्मियों के बारे में सोचने और व्यवहार करने के तरीक़े को बदलने में सक्षम हुआ। कड़ी मेहनत करने की इच्छा और थोड़ी विनम्रता से ल्यूकास की नौकर सही-सलामत बच गई।

पात्रता के अहसास की आत्म-जागरूकता विकसित करें

हम सारे समय इसे मीडिया में देखते हैं- दौलतमंद लोग, मशहूर हस्तियाँ और नेता इस तरह व्यवहार करते हैं, मानो सामान्य नियम-क़ानून उन पर इसलिए लागू नहीं होते हैं, क्योंकि वे ख़ास हैं। या मिसाल के तौर पर, उस किशोर लड़के को लें, जिसने टैक्सस में शराब पीकर गाड़ी चलाकर दुर्घटना में चार लोगों को मार दिया था और जिस पर हत्या का मुकदमा चल रहा था। उसके वकील ने तर्क दिया कि लड़का एफ्लुएंजा (समृद्धिरोग) से पीड़ित था- जिसका मतलब यह था कि वह ख़ुद को क़ानून के उपर मानता था। तर्क यह था कि किशोर को इसलिए ज़िम्मेदार नहीं मानना चाहिए, क्योंकि वह एक दौलतमंद परिवार में बड़ा हुआ था, जिसके माता-पिता उससे लाड़ करते थे और उन्होंने उसे यह कभी नहीं सिखाया कि वह अपने व्यवहार की ज़िम्मेदारी स्वीकार करे। किशोर को अंततः मादक द्रव्य पुनर्वास कार्यक्रम और परिवीक्षा की सज़ा सुनाई गई, लेकिन उसे जेल नहीं भेजा गया। ऐसी कहानियाँ सुनने के बाद हमें ख़ुद से यह सवाल पूछना चाहिए कि क्या हमारा समाज इस विचार के

प्रति ज़्यादा सहनशील बन रहा है कि संसार कुछ निश्चित लोगों के प्रति दूसरों से ज़्यादा ऋणी है।

पात्रता के ज़्यादा सूक्ष्म संस्करण भी आम हो गए हैं। यदि आपको वह सपनों की नौकरी नहीं मिलती है, तो मित्र आम तौर पर यह बोलते हैं, ''देखो, तुम्हें इससे बेहतर नौकरी मिल जाएगी'' या ''इस सबके बाद तुम इस बात के हक़दार हो कि तुम्हारे साथ कुछ अच्छा होगा।'' हालाँकि ये बातें बोलने वालों के इरादे अच्छे होते हैं, लेकिन संसार इस तरह काम नहीं करता है। चाहे आप संसार के सबसे स्मार्ट इंसान हों या जीवन की सबसे मुश्किल परिस्थितियों में भी जीवट से डटे रहे हों, लेकिन इसके बावजूद आप सौभाग्य के किसी दूसरे से ज़्यादा हक़दार नहीं बनते हैं।

पात्रता के इन सूक्ष्म पलों के बारे में ज़्यादा जागरूक बनने की कोशिश करें। ऐसे विचारों की तलाश करें, जिनसे आपके निहित विश्वासों का पता चलता हो कि संसार आपका ऋणी है, जैसे :

मैं इससे बेहतर का हक़दार हूँ।

मैं इस क़ानून का पालन इसलिए नहीं कर रहा हूँ, क्योंकि यह मूर्खतापूर्ण है।

मैं इससे ज़्यादा महत्त्वपूर्ण हूँ।

मुझे बेहद सफल होने के लिए बनाया गया है।

अच्छी चीज़ें मेरे रास्ते में आ जाएँगी।

हमेशा मेरे बारे में कोई सचमुच ख़ास बात रही है।

जो लोग पात्रता का अहसास महसूस करते हैं, उनमें से ज़्यादातर में आत्म-जागरूकता की कमी होती है। वे सोचते हैं कि हर दूसरा व्यक्ति उन्हें उसी तरह देखता है, जिस तरह वे ख़ुद को देखते हैं। अपने मन के विचारों पर ध्यान दें और इन सत्यों को स्थायी रूप से स्मृति में सँजो लें :

जीवन न्यायपूर्ण नहीं होता है : कोई आसमानी शक्ति या धरती पर रहने वाला इंसान नहीं है, जो यह सुनिश्चित करता हो कि सभी इंसानों को न्यायपूर्ण या बराबरी से हक़ मिलेगा। कुछ लोगों को बाकी से ज्यादा सकारात्मक अनुभव मिलते हैं। यह

ज़िंदगी है, लेकिन अगर आपको बदक़िस्मती मिलती है, तो इसका यह मतलब नहीं है कि आप ख़ुशक़िस्मती के हक़दार हो जाते हैं। आपकी समस्याएँ अनूठी नहीं है : हालांकि किसी दूसरे का जीवन हूबहू आपके जैसा नहीं है, लेकिन दूसरे लोग भी आप जैसी समस्याओं, दुःखों और त्रासदियों का अनुभव करते हैं। संभवतः इस धरती पर कई लोग होंगे, जो आपसे बदतर परिस्थितियों का शिकार हुए होंगे। किसी ने भी आपसे यह वादा नहीं किया था कि जीवन आसान होगा।

आप निराशाओं पर कैसे प्रतिक्रिया करते हैं, इस बारे में आपके पास विकल्प होते हैः भले ही आप स्थिति को नहीं बदल सकते,लेकिन आप अपनी प्रतिक्रिया का तरीक़ा तो चुन ही सकते हैं। आप शिकार की मानसिकता रखे बिना अपने रास्ते में आने वाली समस्याओं परिस्थितियों या त्रासदियों से निपटने का निर्णय ले सकते हैं।

आप दूसरों के मुक़ाबले ज़्यादा हक़दार नहीं हैं : हालांकि आप हर व्यक्ति से भिन्न हैं, लेकिन आपमें ऐसी कोई चीज़ नहीं है, जो आपको दूसरे लोगों से बेहतर बनाती हो। ऐसा कोई कारण नहीं है कि आपके साथ अच्छी चीज़ें ही होनी चाहिए या लाभ पाने के लिए आपको समय और प्रयास लगाने की कोई ज़रूरत नहीं होगी।

(13 काम जो समझदार लोग नहीं करते[1])

जैन धर्म में प्रयुक्त कुछ अतिविशिष्ठ शब्द

(चाल :- आत्मशक्ति,क्या मिलिए...)

वस्तु स्वभावमय जैन धर्म है जो षट्द्रव्यमय होता है।
जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल षट्द्रव्य है।।
लोक-अलोक व मूर्तिक-अमूर्तिक अशुद्ध शुद्ध मय है।
अनादि अनन्त अकृत्रिम शाश्वत अनन्त गुण पर्यायमय है।। (1)

ऐसा सूक्ष्म व्यापक जैन धर्म के प्रतिपादक शब्द भी होते हैं।
ज्ञान-ज्ञेय, वाचक-वाच्य सम्बन्ध अनुसार होते हैं।।
अतएव जैन धर्म के कुछ शुद्ध अलौकिक व दुर्लभ होते हैं।
अन्यत्र इनके प्रयोग भी दुर्लभ या नहीं भी होते हैं।।(2)

इसलिए अनेक जैन धर्म के शब्द साधारण जन न जानते हैं।

विपरीत या अनाव्याप्ति या गलत रूप से भी जानते/(करते) हैं।।
द्रव्य, गुण, पर्याय व उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, देव,शास्त्र,गुरु व धर्म।
अनेकान्त, स्याद्वाद, प्रमाण, नय, निक्षेप, रत्नत्रय व मोक्षमार्ग।।(3)

आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा, मोक्ष व पुण्य, पाप, कर्म-वर्गणा।
तेइस-वर्गणायें, ग्राह्य, अग्राह्य, मिश्र व पंचविध-परिवर्तन।।
पंच परमेष्ठी, पंचकल्याण व पंचाश्चर्य व पंचास्तिकाय।
पंचलब्धि व गुणस्थान, मार्गणा, जीव-समास,लेश्या,संज्ञायें।।(4)

त्रस, स्थावर, संज्ञी, असंज्ञी, भव्य, अभव्य, सम्यक्त्व, मिथ्यात्व।
प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग व द्रव्यानुयोग।।
कर्मफल चेतना व कर्म-चेतना, ज्ञान-चेतना व सम्यग्ज्ञान।
बहिरात्मा, अन्तरात्मा व परमात्मा व ज्ञान-ज्ञेय सम्बन्ध।।(5)

द्रव्य कर्म, भाव कर्म, नोकर्म, घाती, अघाती, निकाचित, निधत्ती।
उत्कर्षण, अपकर्षण, संक्रमण, अध्यवसायस्थान, संक्लेश स्थान।।
अस्तित्व, वस्तुत्व, प्रमेयत्व,अगुरुलघुत्व, सूक्ष्मत्व, अव्याबाधत्व।
अस्ति, नास्ति, अव्यक्तव्य, सापेक्ष, निरपेक्ष, अनुजीवी, प्रतिजीवी।।(6)

अशुभ, शुभ, शुद्ध व सातिशय पुण्य व निरतिशयपुण्य।
हेय, उपादेय, करणीय, अकरणीय, भाव, अभाव, प्रध्वंस-प्राग् अभाव।।
अलौकिक गणित में प्रयोग प्रदेश, द्रव्याणु, कालाणु आदि ईकाई।
संख्यात, असंख्यात, अनन्त व उसके विभिन्न भेद-प्रभेदादि।(7)

श्रावकों के ग्यारह प्रतिमा, श्रमणों के भाव-व्यवहार सम्बन्धी।
अनेक शब्द है अतिविशिष्ठ उसके शब्दार्थ से ले भावार्थादि।।
अनुभाग प्रतिच्छेद, शक्त्यांश, षट् गुणहानिवृद्धि, उत्सर्पिणी।
अवसर्पिणी, लिंग, योनि, वीर्य, तीर्थ, पदार्थ, ईश्वरत्व।।(8)

पुरुषार्थ, पुरुष, आश्रम, निकम्मा, स्वार्थ, नियम व समय।
'अहं' 'सोऽहं' द्रव्य, गुण, धर्म, अधर्म, काल, सत्य, परमार्थ, अर्थ।।

इत्यादि लोक प्रचलित शब्द भी जैन धर्म में है अर्थ विशेष।
इसलिए जैन धर्म के रहस्य जानना होता है अति क्लिष्ट।।(9)

अनुभवी बहुविज्ञानी से ही जैन धर्म के रहस्य होते परिज्ञान।
अन्यथा होता अनर्थ 'सूरी कनकनन्दी' संक्षेप में किया वर्णन।।(10)

भीलूड़ा 20.01.2019 अपराह्न 05:50

पहला सबक मिले मातृभाषा में

विडंबना है कि स्कूली तंत्र बच्चों के स्कूल की दहलीज पर पांव रखते ही बेगानी भाषा में शिक्षण करने लगते हैं ताकि वे वर्चस्व की भाषा में शैक्षिक कारोबार कर सकें। असल में इसी हड़बड़ी के चलते बच्चे भाषायी रूप से ही नहीं, बल्कि अन्य विषयों व चिंतन-मनन के मामले में भी पिछड़ जाते हैं।

विगत दिनों जब पश्चिमी निमाड़ के आदिवासियों के बीच स्थापित लाभरहित आधारशिला लर्निंग सेंटर स्कूल में जाने का मौका मिला तो पाया कि वहां आदिवासी बच्चों को मातृभाषा में शिक्षा दी जाती है। इसके पीछे सटीक समझ यह हैं कि प्रारंभिक कक्षाओं में शिक्षण का माध्यम बच्चों की मातृभाषा होना चाहिए। हालांकि ऐसे स्कूल सरकारी तंत्र में भी मिलते हैं, पर इनकी संख्या कम है। इसका अर्थ यह नहीं है कि वहां हिंदी व अंग्रेजी को नजरअंदाज किया जा रहा है। वहां के बच्चे न केवल भाषायी क्षमता के मामले में, बल्कि अन्य विषयों में भी बेहतर सीख पाते हैं।

वर्तमान में देश इस समस्या से लगातार जूझ रहा है कि प्रारंभिक कक्षाओं में सीखना सिखाना बेहतर नहीं हो पा रहा है। शिक्षा जगत नई योजनाएं व रणनीतियां तो बनाता है लेकिन समस्याका समाधान के बजाय वे अधिक गाढ़ी हो जाती है। समस्या की वजह में बच्चे व शिक्षक गिनाए जाते हैं, लेकिन असली समस्या की अनदेखी होती रहती है। चूंकि मातृभाषा या घरेलू भाषा में ही बच्चों की भाषायी क्षमता का विकास होता है, उसे तजकर दूसरी या तीसरी भाषा पर छलांग लगाकर अपेक्षित सीखना समझना नहीं हो पाता। महात्मा गांधी ने आजादी के पहले स्वतंत्र भारत के लिए 'नई तालीम' या 'बुनियादी शिक्षा' की नींव रखी थी। नई तालीम की पहली शर्त यही थी कि बच्चों को मातृभाषा में सीखने के अवसर दिए जाएं। भाषा व संज्ञानात्मक

समझ का गहरा रिश्ता है। गांधीजी अंग्रेजी के खिलाफ नहीं थे, बल्कि वे सीखने के माध्यम के रूप में मातृभाषा की पैरवी कर रहे थे। उनका विरोध अंग्रेजीयत से था।

शिक्षण के दौरान समस्याओं के बारे में उत्तर भार के प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षक बताते हैं कि हम बच्चों को हिंदी में पढ़ाते हैं, मगर वे हिंदी जानते ही नहीं। जाहिर है कि हिंदी पट्टी में हम हिंदी को ही मातृभाषा मान बैठे हैं। वजह साफ है कि हमने ऐसे शिक्षक तैयार नहीं किए जो मातृभाषा में शिक्षण की मूल भावना को आत्मसात कर शिक्षण कर सकें। अगर आप मुख्यधारा के शिक्षा जगत से पूछे तो अधिकांश प्रदेश की भाषा ही मातृभाषा मानते हैं, जबकि वास्तविकता इससे जुदा है। दक्षिणी गुजरात के आदिवासी अंचल में कार्य करते हुए मैंने भलीभांति समझा कि वहां के आदिवासी इलाके में लोग कोंकणी बोलते हैं, जो गुजराती से एकदम भिन्न हैं। मोटे तौर पर मध्यप्रदेश के आदिवासी क्षेत्र निमाड़ की मातृभाषा निमाड़ी है, जबकि निमाड़ के ही दूरस्थ सतपुड़ा वाले क्षेत्र में बारेली व भीली बोली जाती है। इसी तरह हिंदी पट्टी के क्षेत्र राजस्थान में मारवाड़ी, मेवाड़ी, बांगड़ी, ढूंढाड़ी, हडोती, मेवाती, ब्रज, मालवी व रांगडी बोली जाती है। अक्सर भाषा व बोली में फर्क किया जाता रहा है। लिपि का न होना इसका एक कारण है। भाषाओं को समृद्ध व बोलियों को निकृष्ट माना जाता है।

मातृभाषा में जब हम शिक्षा की बात करते हैं तो तुरंत एक और सवाल उठ खड़ा होता है कि हमारे बच्चे हिंदी और अंग्रेजी कब सीखेंगे ? इसका हालिया उदाहरण हमें देखने को मिलता है जब कर्नाटक के मुख्यमंत्री ने सार्वजनिक तौर पर बयान दिया है कि बच्चो को अंग्रेजी में पढ़ाना चाहिए। इस मानसिकता का दायरा बहुत बड़ा है, यह जानते हुए भी कि भाषा ही सीखने का प्रमुख आधार है। शिक्षा नीतियों में इसे शुमार किया जाता रहा है, फिर भी 'कथनी और करनी' में भारी फर्क दिखाई देता है।

संविधान के अनुच्छेद 350 'क' के अनुसार किसी भी भाषायी अल्पसंख्यक समुदाय के बच्चे को प्राथमिक स्तर तक अपनी मातृभाषा के जरिए शिक्षण पाने का अधिकर है। इसमें कहा गया है कि भाषायी अल्पसंख्यक वर्गो के लिए एक विशेष अधिकारी होगा, जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा। विशेष अधिकारी, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे

और फिर वह इस संविधान के अधीन भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के लिए अपनी भाषा में शिक्षण के लिए राज्य सरकारों को निर्देशित करेगा। भारतीय संविधान में यह एकमात्र अनुच्छेद है, जो भारत के राष्ट्रपति को विशेष (इग्जेक्यटिव) अधिकार देता है।

विडंबना है कि स्कूली तंत्र बच्चों के स्कूल की दहलीज पर पांव रखते ही बेगानी भाषा में शिक्षण करने लगते हैं ताकि वे वर्चस्व की भाषा मैं शैक्षिक कारोबार कर सकें। असल में इसी हड़बड़ी के चलते बच्चे भाषायी रूप से ही नहीं बल्कि अन्य विषयों से चिंतन-मनन के मामले में भी पिछड़ जाती है। भाषा को अगर हम व्यापक दायरे में देखें तो यह न केवल संचार का जरिया है, बल्कि सोच-समझ व चिंतन-मनन का आधार है। बिना भाषा के हम सोच नहीं सकते भाषा ही इंसान को इंसान बनाती हैं।

बच्चों को अपनी भाषा को नकाराने का अर्थ उन्हें व उनकी अस्मिता को नकारता है। देखने में आता है कि दुनिया के कई देशोंमें अंग्रेजी भाषा बच्चों को पांच-छह कक्षाओं के बाद पढ़ाई जाती है, फिर भी उनकी अंग्रेजी बेहतर होती है। वजह साफ है कि जरूरत भाषा शिक्षण के नए तरीके ईजाद करने की है। स्कूली शिक्षा की सबसे बड़ी चुनौती शिक्षण के माध्यम की ही है। इसके लिए अपनी मातृभाषा छोड़ अंग्रेजी को चुनना सीखने की प्रक्रिया को कुंद कर देता है।

अगर हम जाने-माने भाषा शास्त्री प्रो. रेमा कांत अग्निहोत्री की अध्यक्षता में एनसीईआईटी द्वारा तैयार किए गए दस्तावेज 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण' पर नजर डालें तो इस बात को आसानी से समझा जा सकता है कि भाषायी क्षमता के विकास के साथ-साथ ही समझ व ज्ञान बनते हैं। इसी दस्तावेज में कहा गया है- 'भारत जैसे देश में सामाजिक सौहार्दता तभी संभव है जब लोग एक दूसरे की भाषा और संस्कृति की सम्मान दें। इस प्रकार का सम्मान ज्ञान के बिना संभव नहीं है। अन्यथा अज्ञानता, भय, घृणा और असहिष्णुता बढ़ती है, राष्ट्रीय अस्मिता की अखंडता के रास्ते में रोड़े अटकाने का कार्य करती है। अब जबकि हम बहुभाषिकता, संज्ञानात्मक विकास व शैक्षिक उपलब्धियों के बीच सकारात्मक रिश्ता पाते हैं तो स्कूलों में बहुभाषी शिक्षण को बढ़ावा देना बहुत जरूरी है।'

आज हम विचार के स्तर पर बहुभाषिकता या फिर हर बच्चे की अपनी

मातृभाषा में शिक्षा से सहमत हैं। नीतियों में हम कई कदम आगे बढ़ चुके हैं। जमीनी स्तर पर मातृभाषा का गुणगान तो करते हैं मगर शिक्षण में इसे अपनाने से कतराते हैं। सवाल क्रियान्वयन का है कि हम जड़ता को त्यागते हुए सही समझ के सहारे इसे कक्षाओं में स्थान दें।

आध्यात्मिक गुरु से महान् उपलब्धि

(सद्गुरु-कुगुरु का स्वरूप व फल)

(चाल :- क्या मिलिए...2. आत्मशक्ति...3. भातुकली...4. तुम दिल की।

- आचार्य कनकनन्दी

स्व-पर प्रकाशी सद्गुरु महान, जो सूर्य से भी ज्योतिर्वान्।
सूर्य तो भौतिक तम हरण करे, आध्यात्मिक गुरु मोह कुज्ञान तम।।
कामधेनु से भी सद्गुरु महान है, सद्गुरु कराते ज्ञानामृत पान।
कामधेनु देती है भौतिक वस्तु, सद्गुरु बताते/(देते) चैतन्य धाम।।(2)

कल्पवृक्ष से भी सद्गुरु महान् है, सदगुरु बताते।(देते) कल्पनातीत ज्ञान।
कल्पवृक्ष से न होता आत्मकल्याण, सद्गुरु से होता आत्मकल्याण।।
चिन्तामणि से मिले चिन्तित वस्तु, सद्गुरु से मिले आत्मचिन्तन।
चिन्तामणि से न होता आत्मउत्थान, आत्मचिन्तन से होता आत्मउत्थान।।(2)

लौकिक गुरु से होता जीविका निर्वाह, आध्यात्मिक गुरु से जीवन निर्माण।
जीविका निर्वाह तो क्षुद्र जीव भी करते, जीवन निर्माण से मिले परिनिर्वाण।।
सद्गुरु होते आत्मश्रद्धान सहित, आत्मज्ञान आत्मविशुद्धि युक्त।
समता-शान्ति व निस्पृहता युक्त, राग-द्वेष-मोह-काम से रहित।।(3)

ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा व मद रहित, ख्याति-पूजा-लाभ-वर्चस्व रहित।
शत्रु-मित्र-अपना-पराया रहित, संकल्प-विकल्प-संक्लेश रिक्त।।
धन-जन-भीड़-सत्ता-सम्पत्ति रहित, सरल-सहज निर्मलता सहित।
धनी-गरीब-छोटा-बड़ा रहित, हर जीव में परमात्मा दृष्टि सहित।।(4)

आत्मा को परमात्मा बनाने हेतु ही, जो नवकोटि से सदा प्रयत्नरत।

स्व-पर विश्वकल्याण भाव सहित, संकीर्ण स्वार्थ से भी रहित।।
आत्मा से परमात्मा बनने सम, त्रिकाल त्रिलोक में न कुछ महान्।
राजा-महाराजा-चक्री इन्द्र तक भी, परमात्मा के न अनन्तभाग समान।।(5)

ऐसी महान् उपलब्धि हेतु ही, जो करते हैं सच्चा मार्गदर्शन।
वे गुरु ही महान् सद्गुरु हैं, सदगुरु सम कोई न महान्।।
इनके अतिरिक्त अन्य सभी गुरु से, होता आध्यात्मिक पतन।
ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा-वैर-विरोध बढ़े, इह-पर लोक में मिले दुःख दैन्य।।(6)

ऐसा गुरु तो मिठा जहर सम है, किंपाक फल सम अहितकर।
सद्गुरु कुगुरु को सही जानकर, सद्गुरु को करो सदा स्वीकार।।
सद्गुरु की सेवा-संगति समान, अन्य न कोई महान् उपकारी।
सद्गुरु बिना न होता सम्यक्त्व, जिससे मिले मोक्षमार्ग मोक्षपुरी।।(7)

अतः हे! भव्य जीव भगवान् बनने हेतु, सद्गुरु की करो सेवा व संगति।
आत्मविशुद्धि आत्मविकास करो, आत्मविकास हेतु प्रयत्नरत 'कनक सूरी'।।(8)

संदर्भ-

तिरथ का है एक फल संत मिले फल चार।
सदगुरु मिले अनन्त, फल कहत कबीर विचार।।
लोभी गुरु तारे नहीं, तिरेसो तारण हार।
जो तूं तिरणो चाहत है, निर्लोभी गुरु संघ जाय।।
पुरा सद्गुरु सेवंता अन्तर प्रगटे आप।
मनसा वाचा कर्मणा मिटे सब सन्ताप।।
गुरु बिन ज्ञान न उपजे, गुरु बिन मिटे न भेद।
गुरु बिन संशय ना मिटे, जय जय गुरुदेव।।
देह छता जेनी दशा, वर्ते देहातित।
जे ज्ञानी ना चरण मां वंदन हो अगणित।।
गुरु दीवो गुरु देवता, गुरु बिन घोर अन्धार।
जे गुरुवाणी वेगला, रडवडिया संसार।।

इस त्रिभुवन के पूजित सम्यक्रत्नत्रय को द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावरूप सामग्री के अनुसार अंगीकार करके भव्य पुरुष शीघ्र ही कर्मों से छूटता है अर्थात् मुक्त होता है।

एतत्समयसर्वस्वं मुक्तेश्चेतन्निबन्धनम्।
हितमेतद्धि जीवानामेतदेवाग्रिमं पदम्।।22।। (ज्ञानार्णव)

अर्थ- यह रत्नत्रय ही सिद्धान्त का सर्वस्व है और यही मुक्ति का कारण है तथा यही जीवों का हित और प्रधान पद है।

ये याता यान्ति यास्यन्ति यमिनः पदमव्यम्।
समाराध्यैव ते नूनं रत्नत्रयमखण्डितम्।।23।।

अर्थ- निश्चय करके इस रत्नत्रय को अखंडित (परिपूर्ण) आराधन करके ही संयमी मुनि आज तक पूर्वकाल में मोक्ष गये हैं और वर्तमान में जाते हैं तथा भविष्य में जायेंगे।

साक्षादिदमनासाद्य जन्मकोटिशतैरपि।
दृश्यते न हि केनापि मुक्तिश्रीमुखपङ्कजम्।।24।।

अर्थ- इस रत्नत्रय को प्राप्त न होकर करोड़ों जन्म धारण करने पर भी कोई मुक्तिरूपी लक्ष्मी के मुखरूपी कमल को साक्षात् नहीं देख सकता है।।

अध्यात्मभावना करके शुद्ध निश्चयनय की प्रधानता से रत्नत्रय का वर्णन

दृग्बोधचरणान्याहुः स्वमेवाध्यात्मवेदिनः।
यतस्तन्मय एवासौ शरीरी वस्तुतः स्थितिः।।25।।

जो आध्यात्म के जानने वाले हैं वे दर्शन ज्ञान और चारित्र तीनों को एक आत्मा ही कहते हैं, क्योंकि परमार्थ दृष्टि से देखा जाय तो यह शरीरी आत्मा उन तीनों से तन्मय ही है, कुछ भी पृथक अर्थात् अन्य नहीं है; यद्यपि भाव-भाववान के भेद से तीन भेद किये गये हैं, तथापि वास्तव में एक ही हैं।।

निर्गितेऽस्मिन्स्वयं साक्षान्नापरः कोऽपि मृग्यते।
यतो रत्नत्रयस्यैषः प्रसूतेरग्रिमं पदम्।।26।।

इस आत्मा को स्वयं आपसे ही साक्षात् निर्णय करने से और कोई भी अन्य नहीं पाया जाता; केवल मात्र यह आत्मा ही रत्नत्रय की उत्पत्ति का मुख्य पद है।।

जानाति यः स्वयं स्वस्मिन्स्वस्वरूपं गतभ्रमः।

तदेव तस्य विज्ञानं तद्वृत्तं तच्च दर्शनम्।।27।।

जो पुरुष अपने में अपने से ही अपने निजरूप को भ्रम रहित होकर जानता है, वही उसके विज्ञान(विशिष्ट ज्ञान) है और वही सम्यक्चारित्र तथा सम्यग्दर्शन है, अन्य कुछ भी नहीं है।

स्वज्ञानादेव मुक्तिः स्याञ्जन्मबन्धस्ततोऽन्यथा।

एतदेव जिनोद्दिष्टं सर्वस्वं बन्धमोक्षयोः।।28।।

आत्मज्ञान से ही मोक्ष होता है, आत्मज्ञान के बिना अन्य प्रकार से संसार का बंध होता है, यही जिनेन्द्र भगवान का कहा हुआ बंध मोक्ष का सर्वस्व है।

आत्मैव मम विज्ञानं दृग्वृत्तं चेति निश्चयः।

मत्तः सर्वेऽप्यमी भावा बाह्याः संयोगलक्षणाः।।29।।

मेरा आत्मा ही विज्ञान है, आत्मा ही दर्शन और चारित्र है ऐसा निश्चय है। इससे अन्य सब ही पदार्थ मुझसे बाह्य और संयोगस्वरूप है। इस प्रकार अनुभव करने से रत्नत्रय में और आत्मा में कुछ भी भेद नहीं रहता।।

अयमात्मैव सिद्धात्मा स्वशक्त्याऽपेक्षया स्वयंम्।

व्यक्तिभवति सद्ध्यानवह्निनाऽत्यन्तसाधितः।।30।।

यह आत्मा संसार अवस्था मे अपनी शक्ति की अपेक्षा से सिद्धस्वरूप है और समीचीन ध्यानरूपी अग्नि से अत्यन्त साधन से व्यक्तरूप सिद्ध होता है अर्थात् अष्टकर्म नाश होने पर सिद्धस्रूप व्यक्त (प्रगट) होता है।

एतदेव परं तत्त्वं ज्ञानमेतद्धि शाश्वतम्।

अतोऽन्यो यः श्रुतस्कन्धः स तदर्थ प्रपञ्चितः।।31

यह आत्मा ही परम तत्त्व है और यही शाश्वत ज्ञान है अतएव अन्य श्रुत-स्कन्ध द्वादशांग शास्त्ररूप रचना इस आत्मा को ही जानने के लिये विस्तृत हुआ है।

अपास्य कल्पनाजालं चिदानन्दमये स्वयम्।

यः स्वरूपे लयं प्राप्तः स स्याद्रत्नत्रयास्पदम्।।32।।

जो मुनि कल्पना के जाल को दूर करके अपने चैतन्य और आनन्दमय स्वरूप में लय को प्राप्त हो, वही निश्चय रत्नत्रय का स्थान(पात्र) होता है।

सुप्तेष्वक्षेषु जागर्ति पश्यत्यात्मानमात्मनि।

वीतविश्वविकल्पोऽसौ सः स्वदर्शी बुधैर्मतः।।33।।

जो मुनि इन्द्रियों के सोते हुए तो जागता है तथा आत्मा में ही आत्मा को देखता है और समस्त विकल्पों से रहित है वही विद्वानों के द्वारा आत्मदर्शी माना गया है।

निःशेषक्लेशनिर्मुक्तममूर्त्तं परमाक्षरम्।

निष्प्रपञ्चं व्यतीताक्षं पश्य स्व स्वात्मनि स्थितम्।।34।।

हे आत्मन्! तू अपने आत्मा में ही रहता हुआ अपने को समस्त क्लेशों से रहित, अमूर्तिक, परम उत्कृष्ट अविनाशी, विकल्पों से और इन्द्रियों से रहित अर्थात् अतीन्द्रिय स्वरूप देख।

नित्यानन्दमयं शुद्धं चित्स्वरूपं सनातनम्।

पश्यात्मनि परं ज्योतिरद्वितीयमनव्ययम्।।35।।

फिर भी कहते हैं कि तू अपने आत्मा में ही अपने को इस प्रकार टिका हुआ देख कि मैं नित्य आनन्दमय हूँ, शुद्ध हूँ, चैतन्यस्वरूप हूँ और सनातन हूँ, अविनश्वर हूँ, परमज्योतिज्ञानप्रकाशरूप हूँ, अद्वितीय हूँ और अनव्यय कहिये व्यय बिना नहीं है अर्थात् पूर्वपर्याय के व्यय सहित हूँ।।

यस्यां निशि जगत्सुप्तं तस्यां जागर्ति संयमी।

निष्पन्नं कल्पनातीतं स वेत्त्यात्मानमात्मनि।।36।।

जिस रात्रि में जगत सोता है उस रात्रि में संयमी मुनि जागता है और अपने आत्मा में ही अपने को निष्पन्न, स्वयंसिद्ध तथा कल्पना रहित जानता है। **भावार्थ**-जगत अज्ञानरूपी रात्रि में सोता है और संयमी ज्ञानरूप सूर्य के उदय होने से जागता है।।

या निशा सर्वभूतेषु तस्यां जागर्त्ति संयमी।

यस्यां जाग्रति भूतानी सा निशा पश्यतो मुनेः।।37।।

जो समस्त प्राणियों में रात्रि मानी जाती है उसमें तो संयमी जागता है और जिस रात्रि में समस्त प्राणी जागते हैं वह अपने स्वरूपावलोकन करने वाले मुनि की रात्रि है। **भावार्थ**- जगत के जीवों को अपने स्वरूप का प्रतिभास नहीं है इस कारण इनको यही रात्रि है, इसमें सब जीव सोते हुए और संयमी मुनिजनों को अपने स्वरूप का प्रतिभास है, इस कारण वे इसमें जागते है और जगत के प्राणी अज्ञान में जागते

हैं, यह अज्ञान ही मुनि की रात्रि है, तात्पर्य यह कि मुनियों के अज्ञान है ही नहीं।।

यस्य हेयं न वाऽऽदेयं निःशेषं भुवनत्रयम्।
उन्मीलयति विज्ञानं तस्य स्वान्यप्रकाशकम्।।38।।

जिस मुनि के समस्त त्रिभुवन हेय अथवा आदेय नहीं है उस मुनि के स्वपरप्रकाशक ज्ञान का उदय होता है, क्योंकि जब तक हेय उपादेय बुद्धि में रहें तब तक ज्ञान निर्मलता से नहीं फैलता(बढ़ता)।।

शार्दूलविक्रीडितम् दृश्यन्ते भुवि किं न तेऽल्पमतयः संख्याव्यतीताश्चिरम्
ये लीलां परमेष्ठिनो निजनिजैस्तन्वन्ति वाग्भिः परम्।
तं साक्षादनुभूय नित्यपरमानन्दाम्बुराशिं पुन-
र्ये जन्मभ्रममुत्सृजन्ति सहसा धन्यास्तु ते दुर्लभाः।।39।।

जो पुरुष अपने वचनों से केवल परमेष्ठी की बहुत काल पर्यन्त लीला-गुणानुवाद का विस्तार करते हैं, ऐसे अल्पमती संसार में क्या प्रायः संख्यारहित देखने में नहीं आते ? अर्थात् ऐसे जीव असंख्य हैं, परन्तु जो पुरुष नित्य परमानन्द के समुद्र को साक्षात् अनुभवगोचर करके संसार के भ्रम को तत्काल ही दूर कर देते हैं, वे महाभाग्य इस पृथ्वी पर दुर्लभ हैं।।

इस प्रकार रत्नत्रय का वर्णन किया। यहाँ तात्पर्य ऐसा है कि जो सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र को निश्चय व्यवहाररूप भले प्रकार जान कर अंगीकार करता है उसके ही मोक्ष के कारण अपने स्वरूप के ध्यान की सिद्धि होती है; अन्यमती अन्यथा अनेक प्रकार से ध्यान का तथा ध्यान की सामग्री का स्वरूप स्थापन करते हैं; उनके किंचिन्मात्र लौकिक चमत्कार की सिद्धि कदाचित् हो तो हो सकती हैं, किन्तु मोक्षमार्ग या मोक्ष की सिद्धि कदापि नहीं हो सकती।

सम्यक्दर्शन ज्ञान व्रत, शिवमग भाख्यो नाम।
तीन भेद व्यवहारतैं, निश्चय आतम राम।।
रत्नत्रय धारे बिना, आतमध्यान न सार।
जे उमगैं नर करनको, वृथा खेद निरधार।।
अन्तर बाहर तत्त्व दोय परकार जु सोहै।
उपादेय निजरूप जानि अन्तर अवरोहै।।

बाहिर हेय बिसारि धारि सरधा दृढ करनी।
दुहुँकी रीति अनेक बानि जिनकी मधि बरनी।।
नय निश्चय अरु व्यवहार दो, पर्यय नय व्यवहार है।
लखि द्रव्यदृष्टि निश्चय भले चिन्मय निज यह सार है।।
चेतन के परिणाम निज, हैं असंख्य श्रुत भाख।
दृष्ट अल्प छद्मस्थके, शेष जिनेश्वर साख।।18।।

पर नियंत्रण से परे स्वनियंत्रक 'मैं' बनूँ

(स्व-नियंत्रक ही मालिक (मोक्ष, स्वतंत्रता) पर नियंत्रण से/(में) गुलाम (बन्धन, परतंत्रता)

(चाल :- छोटी-छोटी गैया...) - आचार्य कनकनन्दी

स्व नियंत्रक में सदा ही बनूँ, पर नियंत्रण से परे मैं बनूँ।
आदर्श का अनुकरण सदा ही करूँ, गुणी व दोषी से शिक्षा मैं लहूँ।।
इस हेतु मैं आत्मविश्वास करूँ, आत्मज्ञानी-आत्मानुशासी मैं बनूँ।
स्वावलम्बी आत्मानुभवी बनूँ, अपेक्षा-उपेक्षा प्रतीक्षा त्यजूँ।।(1)

अन्धानुकरण-पर प्रतिस्पर्द्धा त्यागूँ, शोध-बोध से सत्य-तथ्य मैं मानूँ।
पर अप्रभावी सत्यग्राही मैं बनूँ, उदार-सहिष्णु-क्षमावान् मैं बनूँ।।
धैर्यशाली-साहसी-संयमी बनूँ, गुणी व गुणग्राही साम्य मैं बनूँ।
गुण-गुणी कथक अनिन्दक बनूँ, निन्दनीय भाव-व्यवहार न करूँ।।(2)

इस हेतु राग-द्वेष-मोह मैं त्यजूँ, ईर्ष्या-द्वेष-घृणा-वर्चस्व त्यजूँ।
शुचिता-समता व शान्ति में रहूँ, आत्मविशुद्धि से आत्मविकास करूँ।।
सन्तुलित लचीला भाव मैं धरूँ, अनेकान्त भाव स्याद्वाद कथन करूँ।
स्व-पर-विश्व कल्याण भावना धरूँ,, नवकोटि से स्व-पर-अहित न करूँ
परदोष व कमियों को न स्वीकारूँ, तथापि उनसे क्षोभित न बनूँ।
राग-द्वेष-मोह-ईर्ष्या-घृणा-मात्सर्य, वाद-विवाद से ले निन्दा-चिन्ता न करूँ।।
इससे मैं दोषी का न गुलाम बना, दोषी के कारण स्व को दण्ड न दिया।
तनाव-दबाव-उदासीन न बना, तन-मन-आत्मा का रोगी न बना।।(4)

समय-शक्ति का दुरुपयोग न किया, उत्साह व कार्य क्षमता न घटाया।
ध्यान-अध्ययन मनन न घटाया, शोध-बोध-लेखन नहीं घटाया।।
यदि पर दोष व कमियों से प्रभावी बनूँ, उक्त गुण रहित दोषी मैं बनूँ।
तब तो मैं दोष का गुलाम बना, दोषी के कारण स्व-को दण्डित किया।।(5)

ऐसा काम तो दीन-हीन कायर(दुर्बल) करते, आत्मसम्मान रहित दंभी करते।
अन्धश्रद्धालु असभ्य बर्बर मूढ, आत्मद्रोही-आत्महत्यारे करते।।।
मैं तो इनसे विपरीत मुमुक्षु सन्त, महान् आत्मोपलब्धि मम परम लक्ष्य।
मैं हूँ अनन्त ज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्यवान्-स्वयंभू-स्वयंपूर्ण-अनन्तगुण सम्पन्न।।(6)
यथा सूर्य अन्धेरे से न बनता तम, सुमेरू न चलायमान होता बहे पवन।
सर्वज्ञ को न परास्त कर सकते अज्ञानीजन, मेरा स्वभाव ज्ञाता-दृष्टा अभिराम।।
मेरा कर्त्ता-धर्त्ता-भोक्ता-विधाता, मुझे छोड़कर कोई न हो सकता।
यह है निसर्गज शुद्ध आत्मस्वभाव, 'सूरी कनक' इस हेतु करे प्रयत्न।।(7)
पूर्णतः जब मैं हो जाऊँगा स्वतंत्र, द्रव्य-भाव-नोकर्म से मुक्त।
तब मैं बनूँगा शुद्ध-बुद्ध-आनन्द, जन्म-जरा-मृत्यु से भी विमुक्त।।
ऐसा ही परम स्वतंत्र होने हेतु, पाल रहा हूँ धार्मिक सिद्धान्त।
इस हेतु जो होते विरोध कारक, उन सभी से करता हूँ माध्यस्थ भाव।।(8)
इससे मुझे हो रहे हैं अनुभव, समता-शान्ति का हो रहा संवर्द्धन।
अन्तः प्रज्ञा-आत्मशक्ति की हो रही वृद्धि, उदारता-सहिष्णुता हो रही वृद्धि।।
इसे ही बढ़ाता जाऊँगा तब तक, जब तक मैं न बनूँ पूर्ण स्वतंत्र।
इस हेतु त्याग रहा हूँ सभी बन्धन, अन्तरंग-बहिरंग सभी बन्धन।।(9)

भीलूड़ा 25.01.2019 रात्रि 08:25 व 11:42 व 12:40 (गणतंत्र दिवस की पूर्व रात्रि में)

सन्दर्भ-

दूसरों को खुद पर काबू रखने की अनुमति देना

आप कैसा सोचते हैं, महसूस करते हैं और व्यवहार करते हैं, इसकी शक्ति यदि आप दूसरों को दे देते हैं, तो मानसिक दृष्टि से शक्तिशाली बनना यदि आप दूसरों

को दे देते है, तो मानसिक दृष्टि से शक्तिशाली बनना असंभव हो जाता है। क्या नीचे दी गई बातें जानी-पहचानी लगती हैं ?

आपको जो आलोचना या नकारात्मक फ़ीडबैक मिलता है, उससे आप गहरा अपमान महसूस करते हैं, चाहे स्रोत जो भी हो।

दूसरे लोग आपको इतना ज़्यादा गुस्सा दिला देते हैं कि आप ऐसी चीज़ें कर और कह जाते हैं, जिन पर बाद में आप पछताते हैं।

आपको अपने जीवन के साथ क्या करना चाहिए इस बारे में दूसरों की कहीं बातों के आधार पर आप अपने लक्ष्य बदल लेते हैं।

आपका दिन कैसा होगा, यह इस बात पर निर्भर होता है कि दूसरे लोग आपके साथ कैसा व्यवहार करते हैं।

जब दूसरे लोग आपको अपराधबोध का अहसास कराते हैं, तो आप अनिच्छा से उनका मनचाहा काम कर देते हैं, भले ही आप उसे नहीं करना चाहते।

आप अक्सर उन तमाम चीज़ों के बारे में शिकायत करते हैं, जो आपको जीवन में ''करनी पड़ती' हैं।

आप शर्मिंदगी या दुःख जैसे असहज भावों से बचने के लिए काफी दूर तक जाते हैं।

आपको सीमाएँ तय करने में मुश्किल आती है, लेकिन आप अपना समय और ऊर्जा लेने वाले लोगों के प्रति द्वेषपूर्ण महसूस

जब कोई आपको अपमानित या आहत करता है, तो आप मन में गाँठ बाँध लेते हैं।

क्या ऊपर किसी उदाहरण में आपको अपनी झलक दिखती है? अपनी शक्ति क़ायम रखना इस पर विश्वास रखने के बारे में है कि आप कौन है और आपके आस-पास के लोगों ओर परिस्थितियों के बावजूद आप कौन से विकल्प चुनते हैं।

जब भी आप अपने लिए स्वस्थ भावनात्मक और शारीरिक सीमाएँ तय नहीं करते हैं, तो यह जान लें कि आप दूसरे लोगों को अपने ऊपर शक्ति दे रहे हैं। जब कोई पड़ोसी अहसान माँगता है, तो आप मना करने की हिम्मत नहीं कर पाते हैं। या

शायद आप किसी दोस्त का फ़ोन आने पर दशहत में आ जाते हैं, क्योंकि वह लगातार अपना दुःखड़ा रोता रहता है, लेकिन इसके बावजूद उसके फ़ोन की पहली घंटी पर फ़ोन उठा लेते हैं। जिस चीज़ को आप सचमुच नहीं चाहते, जब भी आप उसे नहीं कहने से कतराते हैं, तो आप हर बार अपनी शक्ति गँवा रहे हैं। यदि आप अपनी ज़रूरतें पूरी कराने की कोई कोशिश नहीं करते हैं, तो एक तरह से आप लोगों को यह अनुमति देते हैं कि वे आपसे चीज़ें ले लें। भावनात्मक सीमाओं का अभाव भी इतना ही समस्याजनक हो सकता है। आप अपने साथ किसी के बरताव को पसंद नहीं करते हैं, लेकिन इसके बावजूद अगर आप अपनी बात दृढ़ता से नहीं रखते हैं, तो आप उस व्यक्ति को अपने जीवन पर शक्ति दे देते हैं।

अपनी शक्ति दूसरों को देने के साथ समस्या

अपनी शक्ति दूसरों को देने से कई समस्याएँ खड़ी हो जाती हैः

आप अपनी भावनाओं को क़ाबू में रखने के लिए दूसरों पर निर्भर होते हैंः जब आप अपनी शक्ति दूसरों को दे देते हैं, तो आप अपनी भावनाओं को नियंत्रित करने के लिए दूसरे लोगों और बाहरी परिस्थितियों पर पूरी तरह से निर्भर बन जाते हैं। जीवन अक्सर किसी रोलर कोस्टर जैसा बन जाता है- अगर चीज़ें अच्छी होती हैं, तो आप अच्छा महसूस करेंगे; लेकिन अगर आपकी परिस्थितियाँ बदल जाती हैं,तो आपके विचार, भावनाएँ और व्यवहार भी बदल जाएगा।

आप दूसरे लोगों को अपना स्व-मूल्य तय करने देते हैं : यदि आप दूसरों को अपना स्व-मूल्य तय करने की शक्ति देंगे, तो आप कभी पर्याप्त मूल्यवान महसूस नहीं करेंगे। आप बस उतने ही अच्छे होंगे, जितनी कि आपके बारे में किसी दूसरे की राय होगी। यदि आप दूसरों पर निर्भर रहते हैं कि वे आपको अपने बारे में अच्छा महसूस कराएँ, तो आप कभी इतनी प्रशंसा या सकारात्मक फ़ीडबैक पाने में सफल नहीं होंगे, जिससे आपकी आवश्यकताएँ पूरी हो जाएँ।

आप सच्ची समस्या का सामना करने से बचते हैं : आपनी शक्ति देना खुदबखुद असहायता की ओर ले जाता है। आप स्थिति की बेहतर बनाने के लिए क्या कर सकते हैं,, इस पर ध्यान केंद्रित कराने के बजाय आप अपनीसमस्याओं को तर्कसंगत साबित करने के लिए कोई न कोई बहाना खोज लेंगे।

आप अपनी परिस्थितियों के शिकार बन जाते हैं : आप जीवन में ड्राइवर के बजाय यात्री बन जाएँगे। आप कहेंगे कि दूसरे लोग आपको बुरा महसूस कराते हैं या इस तरह से व्यवहार करने के लिए मजबूर करते हैं, जिसे आप पसंद नहीं करते। अपने चयनों की जिम्मेदारी स्वीकार करने के बजाय आप दूसरों को दोष देंगे।

आप आलोचना के प्रति बहुत संवेदनशील बन जाते हैं : आपमें आलोचना का सही आकलन करने की क्षमता नहीं होगी। इसके बजाय आप किसी की भी कही बात दिल पर ले लेंगे। आप दूसरे लोगों के शब्दों को इतनी ज़्यादा शक्ति दे देंगे, जिसके वे हक़दार नहीं हैं।

आप अपने लक्ष्यों से निगाह हटा लेते हैं : अगर आप दूसरों को अपने लक्ष्यों के नियंत्रण में रहने की अनुमति देते हैं, तो आप अपने मनचाहे जीवन को बनाने में कामयाब नहीं होगें। अगर आप दूसरे लोगों को राह में आने और अपनी प्रगति में हस्तक्षेप करने की अनुमति देते हैं, तो आप सफलतापूर्वक अपने लक्ष्यों की दिशा में काम नहीं कर सकते।

आप संबंधों को बरबाद कर देते हैंः जब लोग आपकी भावनाओं को आहत कर देते हैं या वे अवांछित अंदाज़ में आपके जीवन में अतिक्रमण कर लेते हैं, तब भी अगर आप अपना मुँह नहीं खोलते हैं, तो दमित भावनाओं की वजह से संभवतः आप उनके प्रति द्वेषपूर्ण बन जाएँगे।

अपनी शक्ति दोबारा हासिल करें

आपमें अगर आत्मविश्वास नहीं है, तो आपका पूरा स्व-मूल्य इस बात पर निर्भर होता है कि दूसरे आपके बारे में कैसा महसूस करते हैं। अगर आपकी बात लोगों को बुरी लग गई, तो क्या होगा ? अगर उन्होंने आपको पसंद करना छोड़ दिया, तो क्या होगा ? यदि आप स्वस्थ सीमाएँ बनाने का विकल्प चुनते हैं, तो आपको थोड़ी विपरीत प्रतिक्रिया मिल सकती है। लेकिन यदि आपमें स्व-मूल्य का पर्याप्त शक्तिशाली अहसास है, तो आप ऐसी प्रतिक्रियाओं को सहन करना सीख सकते हैं।

उन लोगों को पहचाने जिन्होंने आपकी शक्ति ले ली है

स्टीवन मैकडॉनल्ड ऐसे व्यक्ति का अविश्वसनीय उदाहरण हैं, जिन्होंने अपनी शक्ति देने का विकल्प चुना। 1986 में न्यू यॉर्क सिटी के पुलिस अफ़सर के रूप में

काम करते समय उन्होंने हाल में हुई मोटर साइकल चोरियों के बारे में कुछ किशारों को सवाल-जवाब के लिए रोका। पंद्रह साल के जिन किशारों से वे सवाल पूछ रहे थे, उसने एक रिवॉल्वर निकाला और मैकडॉनल्ड के सिर और गर्दन में गोलियाँ मार दीं। इन गोलियों से उनकी गर्दन के नीचे का पूरा शरीर पंगु हो गया।

चमत्कारी रूप से अफ़सर मैकडॉनल्ड की जान बच गई। उन्होंने अस्पताल में अठारह महीने तक उपचार कराया और यह सीखा कि पूर्ण पंगु का जीवन कैसे जीना है। दुर्घटना के वक़्त उनकी शादी को सिर्फ आठ महीने ही हुए थे और उनकी पत्नी को छह महीने का गर्भ था।उल्लेखनीय बात यह थी कि अफ़सर मैकडॉनल्ड और उनकी पत्नी ने उन सब चीज़ों पर ध्यान न देने का विकल्प चुना, जो इस किशोर ने उनसे छीन ली थी। इसके बजाय, उन्होंने उसे क्षमा करने का चेतन विकल्प चुना। दअरसल, हादसे के कुछ साल बाद मैकडॉनल्ड पर हमला करने वाले ने जेल से फ़ोन करके उनसे क्षमा माँगी। अफ़सर मैकडॉनल्ड ने न सिर्फ़ उसे क्षमा कर दिया, बल्कि यह भी कहा कि किसी दिन वे दोनों पुरेदेश की यात्रा करके अपनी कहानी बताएँगे, ताकि बढ़ती हुई हिंसा को रोका जा सके। अफ़सर मैकडॉनल्ड को यह करने का मौक़ा कभी नहीं मिल पाया, क्योंकि जेल से छूटने के तीन दिन बाद ही मोटरसाइकल दुर्घटना में हमलावर युवक की मृत्यु हो गई।

अब अफ़सर मैकडॉनल्ड ने अकेले ही शांति और क्षमा का संदेश फैलाने का मिशन शुरू कर दिया। अपनी पुस्तक व्हाई फॉरगिव? मैं वे कहते हैं, ''मेरी रीढ़ में गोली से ज़्यादा बुरी एकमात्र चीज़ यह होती कि मैं अपने हृदय में प्रतिशोध पाल लेता।'' उस हमले में उनकी शारीरिक गतिशीलता खो गई थी, लेकिन उन्होंने उस हिंसक घटना या अपने हमलावर को अपना जीवन बरबाद करने की शक्ति नहीं दी। अब वे एक बहुत लोकप्रिय वक्ता हे, जो प्रेम, सम्मान और क्षमा के सबक़ सिखाते हैं। अफ़सर मैकडॉनल्ड ऐसे व्यक्ति की प्रेरक मिसाल हैं, जिन्होंने हिंसा के मूर्खतापूर्ण कार्य का शिकार होने के बावजूद अपने हमलावर को ज़्यादा शक्ति देने में समय बरबाद न करने का विकल्प चुना।

जिसने आपको भावनात्मक या शारीरिक चोट पहुँचाई है, उसे क्षमा करने का विकल्प चुनने का यह मतलब नहीं है कि आपको सामने वाले के व्यवहार को

बढ़ावा देना है; इसका मतलब तो यह है कि अपने क्रोध से स्वतंत्र होकर आप ज़्यादा सार्थक उद्देश्य पर अपनी ऊर्जा केंद्रित कर सकते हैं।

यदि आपने ज़्यादातर जिंदगी परिस्थितियों के शिकार जैसा महसूस करने में बिताई है, तो यह पहचानने में बहुत मेहनत की ज़रूरत होती है कि आपको पास जीवन में अपना ख़ुद का मार्ग चुनने की शक्ति है। पहला क़दम है आत्म-जागरूकता विकसित करना। इसके लिए आपको यह पहचानना होता है कि आप जैसा सोचते, महसूस करते और व्यवहार करते हैं, उसके लिए आप बाहरी परिस्थितियों और दूसरे लोगों को कम दोष देते हैं। ग़ौर से देखे कि आप किन लोगों पर अपना समय और ऊर्जा ख़र्च कर रहे है। क्या वे इस लायक़ है कि ऐसा किया जाए? अगर नहीं तो संभवतः आप उन्हें उससे ज्यादा शक्ति दे रहे हैं, जितनी शक्ति के वे हक़दार हैं।

आपका बॉस कितना अन्यायी हैं, अपने सहकर्मियों से इस बारे में जितनी ज़्यादा शिकायतें करेंगें,आप अपने बॉस को उतनी ही ज़्यादा शक्ति देंगे। आप अपनी सहेलियों को यह जितना ज़्यादा बताएँगी कि आपकी सास कितनी जालिम है, आप उसे ख़ुद पर उतनी ही ज़्यादा शक्ति देंगी। जिन लोगों के बारे में आप यह नहीं चाहते हैं कि वे आपके जीवन में कोई बड़ी भूमिका निभाएँ, उन लोगों को अपना समय और ऊर्जा देना छोड देने का संकल्प लें।

अपनी भाषा को बदलें

अपनी शक्ति बनाए रखने के लिए कईबार आपको स्थिति को देखने का अपना दृष्टिकोण बदलना होता है। आप अपनी शक्ति दूसरों के हवाले कर रहे हैं, यह बताने वाली भाषा के कुछ उदाहरणों पर ग़ौर करें :

''मेरा बॉस मुझे पगला देता है।'' हो सकता है कि आप अपने बॉस के व्यवहार को पसंद न करते हों, लेकिन क्या वे सचमुच आपको पगला देते हैं? शायद आपका बॉस ऐसा व्यवहार करता है जिसे आप पसंद नहीं करते हैं और इससे आपको बुरा महसूस हो सकता है, लेकिन दरअसल देखा जाएतो वे आपको कोई चीज़ महसूस करने के लिए मजबूर नहीं कर रहे हैं।

यदि आप सौ लोगों का सर्वेक्षण करें, तो यह संभव नहीं है कि उन सभी की एक ही राय होगी। एक व्यक्ति की रायअपने आप सच नहीं हो जाती। अपने बारे में

किसी एक व्यक्तिकी राय को अपना स्व-मूल्य तय करने की शक्ति न दें।

''मेरी माँ मेरी इतनी ज़्यादा आलोचना करती हैं कि मैं ख़ुद को बहुत बुरा महसूस करने लगता हूँ।'' वयस्क होने के बाद क्या आप माँ की आलोचनाबार-बार सुनने के लिए बाध्य हैं ? उनकी कही बातें आपको पसंद नहीं आती,क्या इसलिए आपको अपने आत्म-सम्मान को कम कर लेना चाहिए?

''मुझे हर रविवार की रात अपने ससुराल वालों को डिनर पर आमंत्रित करना पड़ता है।''आपके ससुराल वाले सचमुच आपको ऐसा करने के लिए मजबूर करते हैं या फिर आप यह विकल्प इसलिए चुनती है,क्योंकि यह आपके परिवार के लिए महत्त्वपूर्ण हैं?

प्रतिक्रिया करने से पहले सोचें

यदि कोई ऐसी बात कहता है, जो आपको पसंद नहीं आती और भड़ककर आप चिल्लाने लगते हैं या बहस करने लगते हैं, तो आप उन अप्रिय शब्दों को बहुत शक्ति दे देते हैं। आप कैसा व्यवहार करना चाहते हैं, इस बारे में सोचने का चेतन विकल्प चुनें; उसके बाद ही दूसरे लोगों पर प्रतिक्रिया करें। जब भी आप अपना आपा खोते हैं तो हर बार आप सामने वाले व्यक्ति को ख़ुद पर शक्ति देते हैं। यहाँ कुछ रणनीतियाँ बताई जा रही हैं, जिनसे नकारात्मक प्रतिक्रिया करने को मन ललचाने पर आपको शांत रहने में मदद मिलेगी।

गहरी साँसे लें : कुंठा और क्रोध शरीर के भीतर शारीरिक प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करते हैं - साँस लेने की गति बढ़ जाती है, हृदय गति बढ़ जाती है, पीसना आ जाता है आदि। धीरे-धीरे और गहरी साँसे लेने से आपकी मांसपेशियाँ तनावरहित होती हैं और शारीरिक प्रतिक्रिया कम हो जाती है, जिससे आपकी भावनात्मक प्रतिक्रियाघट सकती हैं।

ख़ुद को स्थिति से दूर कर लेंः आप जितना ज़्यादा भावनात्मक महसूस करते हैं, तार्किक दृष्टि से उतना ही कम सोच पाएँगे। आपको क्रोध आ रहा है, इस बारे में चेतावनी के संकेतों की पहचानना सीखें- जैसे काँपना या चेहरा लाल होना- और अपना आपाखोने से पहले ही ख़ुद को स्थिति से दूर हटा लें। आप ऐसी कोई बात कह सकते हैं, 'मैं अभी बात करने का इच्छक नहीं हूँ,'' या फिर आप उस जगह से दूर भी जा सकते हैं।

अपना ध्यान भटकाएँ : जब आप अति भावुक महसूस कर रहे हों, तो समस्या सुलझाने या उसके बारे में बातचीत करने की कोशिश न करें। इसके बजाय पैदल चलने या पढ़ने जैसी गतिविधि से ध्यान भटकाएँ, ताकि आप शांत रह सकें। जो चीज़ आपको परेशान कर रही है, उससे अपना दिमाग़ हटा लें, चाहे यह चंद मिनटों के लिए ही क्यों न हो। इससे आपको शांत रहने में मदद मिलेगी और तब आप ज़्यादा तार्किक अंदाज़ में सोच सकते हैं।

फ़ीडबैक का आलोचनात्मक मूल्यांकन करें

अपनी शक्ति कायम रखने लिए फ़ीडबैक का मूल्यांकन करें और यह तय करें कि यह सच है या नहीं। हालांकि आलोचना कई बार हमारी आँखें खोल सकती है कि दूसरे हमें कैसे देखते हैं और इसके फलस्वरूप हम सकारात्मक परिवर्तन कर सकते हैं- कोई मित्र हमारी किसी बुरी आदत की ओर इशारा करता है, जीवनसाथी हमारे स्वार्थपूर्ण व्यवहार की ओर संकेत करता है- लेकिन बाक़ी समय आलोचना आलोचक का प्रतिबिंब होती है। क्रोधित लोग नियमित रूप से कठोर आलोचना सिर्फ़ इसलिए करते हैं क्योंकि इससे उनका तनाव कम हो जाता है। या कम आत्मसम्मान वाले लोग अपने बारे में तभी बेहतर महसूस कर सकते हैं, जब वे दूसरों को नीचे रखें। इसलिए स्रोत पर सचमुच विचार करना महत्त्वपूर्ण होता है, इसके बाद ही इस बारे में कोई निर्णय लेना चाहिए कि आप कैसे आगे बढ़ना चाहते हैं।

जब दूसरे आपकी आलोचना करें या नकारात्मक फ़ीडबैक दें, तो प्रतिक्रिया करने से पहले पल भर ठहरें। यदि आप विचलित या भावनात्मक रूप से प्रतिक्रियाशील हैं, तो ठंडा होने का समय लें। फिर ख़ुद से वे सवाल पूछेः

यह सच है, इस बात का क्या प्रमाण है ? मिसाल के तौर पर, यदि आपकी बॉस कहती है कि आप आलसी हैं, तो उन मौक़ों के प्रमाण तलाशें, जब आपने ज़्यादा कड़ी मेहनत नहीं की थी।

यह सच नहीं है, इस बात का क्या प्रमाण है ? ऐसे मौकों की तलाश करें, जब आपने बहुत मेहनत की थी और मेहनती कर्मचारी रहे थे।

वह मुझे यह फ़ीडबैक क्यों दे रहा है ? एक क़दम पीछे हटकर पता लगाएँ कि वह व्यक्ति आपको यह नकारात्मक फ़ीडबैक क्यों दे रहा है। क्या यह आपके

व्यवहार के किसी छोटे से नमूने पर आधारित है, जिसे उस व्यक्ति ने देखा है? मिसाल के तौर पर, अगर आपके बॉस ने आपको उसी दिन काम करते हुए देखा था, जब आपको फ्लू था, तो वे यह निर्णय ले सकती हैं कि आप बहुत उत्पादक नहीं हैं। उनका निष्कर्ष बहुत सटीक नहीं होगा।

क्या मैं अपने किसी व्यवहार को बदलना चाहता हूँ ? कई मौक़ों पर आप अपने व्यवहार को इसलिए बदलने का चुनाव कर सकते हैं, क्योंकि आप सामने वाले की आलोचना से सहमत होते हैं। मिसाल के तौर पर, अगर आपकी बॉस कहती है कि आप आलसी हैं, तो शायद आप निणर्य लेंगे कि आप ऑफ़िस में उतनी ज़्यादा मेहनरत नहीं कर रहे हैं, जितनी कर सकते हैं। इसलिए आप ऑफ़िस ज़्यादा जल्दी आना और देर तक रुकना शुरू कर सकते हैं, क्योंकि वह अच्छा कर्मचारी बनने के लिए आपको कोई भिन्न चीज़ करने के लिए विवश नहीं कर रही है। आप इसलिए परिवर्तन कर रहे हैं, क्यांकि आप करना चाहते हैं, इसलिये नहीं क्योंकि ऐसा करना आपकी मजबूरी है।

ध्यान रखें, आपके बारे में एक व्यक्ति की राय हमेशा सच नहीं होती। आप सम्मानपूर्वक असहमत होने और आगे बढ़ने का चयन कर सकते हैं। आप सामने वाले की मानसिकता को बदलने में समय और ऊर्जा लगाए बिना भी आगे बढ़ सकते हैं।

आप जो भी करते, सोचते और महसूस करते हैं, उसमें आपके पास एक विकल्प होता है, यह याद रखने से आप बहुत स्वतंत्र हो जाते हैं। यदि आपने ज़्यादातर ज़िंदगी यह विश्वास किया है कि आप परिस्थितियों के शिकार हैं, तो यह समझने में बहुत मेहनत लगती है कि आप जैसा जीवन जीना चाहते हैं, आपके पास वैसा जीवन बनाने की शक्ति है।

अपनी शक्ति वापस लेने से आप ज्यादा शक्तिशाली बनेंगे

अपनी शक्ति दूसरों को देकर आप संसार के सबसे शक्तिशाली लोगों में शामिल नहीं हो सकते। अगर आपको यक़ीन नहीं है, तो ओपरा विन्फे से पूछ लें। वे बेहद गरीबी में बड़ी हुई थीं और बचपन में कई लोगों ने उनका यौन शोषण किया था। वे अपनी माँ, पिता और नानी के साथ थोड़े-थोड़े समय तक रहती थीं और किशोरावस्था में वे अक्सर घर से भाग जाती थी। वे चौदह साल की उम्र में गर्भवती हो गई थी,

हालांकि जन्म के कुछ समय बाद ही शिशु की मृत्यु हो गई थी।

हाई स्कूल के दौरान वे स्थानी रेडियो स्टेशन में काम करने लगी। उन्होंने मीडिया में कई नौकरियाँ की और अंततः टीवी न्यूज एंकर बन गई, लेकिन बाद में उन्हें नौकरी से निकाल दिया गया।

उन्हें नौकरी से निकालकर एक व्यक्ति ने यह राय दी कि उनका प्रसारण अच्छा नहीं है, लेकिन इस राय को ख़ुद को रोकने नहीं दिया। उन्होंने अपना ख़ुद का टॉक शो बनाया और बत्तीस साल की उम्र में उनका शो पूरे देश में मश्हूर हो गया। इकतालीस साल की उम्र में उनकी नेट वर्थ 340 मिलियन डॉलर से ज़्यादा हो गई। ओपरा ने अपनी पत्रिका, रेडियों शो और टीवी नेटवर्क शुरू किया है तथा पाँच पुस्तकों का सह-लेखन किया है। उन्होंने एक अकादमी पुरस्कार भी जीता है। उन्होंने ज़रूरतमंद लोगों की मदद के लिए बहुत सी परोपकारी संस्थाएँ शुरू की हैं, जिनमें दक्षिण अफ्रीका में लड़कियों के लिए नेतृत्व अकादमी शामिल है।

ओपरा ने अपने बचपन या पूर्व नियोक्ता को अपनी शक्ति नहीं छीनने दी। जिस महिला को कभी इसलिए चिढ़ाया जाता था, क्योंकि वह ग़रीबी की वजह से आलू के बोरे के कपड़े पहनती थी, उसे बाद में सीएनएन और टाइम दोनों ने ही संसार की सबसे शक्तिशाली महिलाओं में से एक घोषित किया था। उनकी परवरिश इतनी ख़राब थी कि आँकड़ों की दृष्टि से उनका उत्कर्ष बहुत कमज़ोर भविष्यवाणी होती। लेकिन ओपरा ने आँकड़ों का शिकार होने से इंकार कर दिया। उन्होंने शक्ति न देकर खुद तय किया कि वे जीवन में क्या बनेंगी।

जब आप यह जान जाते हैं कि किसी दूसरे में आपकी भावनाओं को नियंत्रित करने की शक्ति नहीं है, तो आपको शक्ति का अहसास होगा। यहाँ कुछ तरीक़े बताए जा रहे हैं कि अपनी शक्ति क़ायम रखने से आपको मानसिक दृष्टि से शक्तिशाली बनने में कैसे मदद मिलेगी :

जब आप इस आधार पर चयन करना छोड़ देंगे कि कौन सा विकल्प सबसेज़्यादा अप्रत्यक्ष परिणामों को रोकेगा और इस आधार पर चयन करेंगे कि आपके लिए क्या सर्वश्रेष्ठ है, तो आपको इस बात का बेहतर अहसास होगा कि आप कौन हैं।

जब आप अपने व्यवहार की पूरी ज़िम्मेदारी लेते हैं, तो आप अपने लक्ष्यों की

दिशा में प्रगति के लिए जवाबदेह बन जाएँगे।

आप पर कोई ऐसी चीज़ करने का कभी दबाव नहीं होगा, जो आप नहीं करना चाहते, लेकिन दूसरे लोग अपराध बोध के जाल में फँसाकर आपसे यह काम करना चाहते हैं या आपको ऐसा लगता है।

आप अपनी ख़ुद की चुनी चीज़ों में समय और ऊर्जा लगाने में सक्षम होंगे। आप अपना समय या दिन बरबाद करने के लिए दूसरों को दोष नहीं देंगे।

अपनी शक्ति कायम रखने से डिप्रेशन, दुश्चिंता विकार और अन्य मानसिक रोगों का जोखिम कम होता है : कई मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ निराशा और असहायता के अहसास से जुड़ी होती हैं। जब आप दूसरे लोगों और बाहरी परिस्थितियों को अपनी भाावनाओं तथा व्यवहार को नियंत्रित करने की शक्ति नहीं देते हैं, तो आपका अपनी मानसिक सेहत पर ज़्यादा नियंत्रण होगा।

जब आप कोई गाँठ रखते हैं, तो क्रोध और द्वेष की आपकी भावनाओं से सामने वाले को कोई नुक़सान नहीं होता है। इसके बजाय क्रोध और द्वेष रखने से उस व्यक्ति को आपके जीवन की गुणवत्ता कम करने की शक्ति मिल जाती है। क्षमा करने का विकल्प चुनने से आपको अपनी शक्ति वापस हासिल करने की अनुमति मिलती है- सिर्फ़ मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य पर ही नहीं बल्कि शारीरिक स्वास्थ्य पर भी। शोध दिखात है कि क्षमा करने से स्वास्थ्य इस तरह बेहतर होता है :

क्षमा आपके तनाव को कम करती है : वर्षों के अध्ययनों से यह पता चला है कि मन में मैल रखने से आपका शरीर तनाव की अवस्था में रहता है। जब आप क्षमा का अभ्यास करते हैं, तो आपका रक्तचाप और हृदय गति कम होती है, जो अच्छे स्वास्थ्य की निशानी है।

क्षमा करने से दर्द की सहनशक्ति बढ़ती है : 2005 में निचली कमर के दीर्घकालीन दर्द से परेशान रोगियों का अध्ययन किया गया। इसमें पाया गया कि क्रोध मनोवैज्ञानिक कष्ट को बढ़ता है और दर्द सहने की शक्ति कम करता है। क्षमा करने की इच्छा से दर्द सहन करने की शक्ति बढ़ती है।

बेशर्त क्षमा ज़्यादा लंबा जीवन जीने में आपकी मदद कर सकती है : 2012 में जनरल ऑफ़ बिहेवियरल मेडिसिन में एक अध्ययन प्रकाशित हुआ। इसमें यह

पाया गया कि जब लोग निश्चित शर्तों पर ही क्षमा करना चाहते थे- जैस जब सामने वाले ने क्षमा माँगी या वैसी हरकत दोबारा कभी न करने का वादा किया- तो जल्दी मरने का उनका जोखिम बढ़ गया। आपका इस बात पर कोई नियंत्रण नहीं होता कि सामने वाला कब क्षमा माँगेगा। जब तक सामने वाला क्षमा नहीं माँगता, तब तक माफ़ करने का इंतज़ार करने से आप उन्हें अपने जीवन पर ही नहीं, बल्कि शायद अपनी मृत्यु पर नियंत्रण दे देंगे।

समस्या-निवारण और कुछ बाधाएँ

अपनी व्यक्तिगत शक्ति की निगरानी करें और यह देखें कि आप इसे किन तरीक़ों से गँवा रहे हैं। इसमें बहुत मेहनत लगती है, लेकिन अपनी मानसिक शक्ति को बढ़ाने के लिए यह ज़रूरी है कि आप अपनी शक्ति के हर औंस को क़ायम रखें।

क्या सहायक है

स्वयं विकल्प चुनने वाली भाषा का इस्तेमाल करना, जैसे ''मैं...करने का चुनाव करता हूँ।''

लोगों के साथ स्वस्थ भावनात्मक और शारीरिक सीमाएँ तय करना।

आप दूसरों पर कैसी प्रतिक्रिया करेंगे, इस बारे में चेतन निर्णय लेकर प्रोएक्टिव तरीक़े से व्यवहार करना।

आप अपने समय और ऊर्जा को कैसे ख़र्च करने का विकल्प चुनते हैं, इस बारे में पूरी ज़िम्मेदारी लेना।

लोगों को क्षमा करने का चयन करना, चाहे वे क्षमा मांगे या न माँगे।

निष्कर्ष पर कूदे बिना फ़ीडबैक और आलोचना की जाँच करना।

क्या सहायक नहीं है

ऐसी भाषा का इस्तेमाल करना, जिसमें यह निहित हो कि आप परिस्थितियों के शिकार हैं, जैसे, ''मुझे यह करना ही होगा,'' या '-मेरे बॉस मुझे पगला देते हैं।''

उन लोगों के प्रति क्रोध और द्वेष महसूस करना, जिन्हें आप अपने अधिकारों पर अतिक्रमण करने की अनुमति देते हैं।

दूसरों पर प्रतिक्रिया करना और फिर अपने व्यवहार के लिए दूसरों को दोष देना।

ऐसी चीजें करना जिन्हें आप नहीं करना चाहते और फिर वे चीज़ें ''कराने'' के लिए दूसरों को दोष देना।

मन में मैल, क्रोध व द्वेष रखने का विकल्प चुनना।

फ़ीडबैक और आलोचना को अपनी भावनाओं व व्यवहार की बागडोर सौंपना।(ऐमी मॉरिन)

नीदरलैंड की आबादी पौने दौ करोड़ 2013 में सिर्फ 19 कैदी थे

नीदरलैंड में अपराध घटे, यहां बंद होंगी सभी जेलें

2000 जेलकर्मियों की नौकरी खतरे में पड़ी

दुनिया के हर देश में अपराध बढ़ रहा है, लेकिन पश्चिम यूरोप के नीदरलैंड में अपराध घट गया है। पौने दो करोड़ की जनसंख्या वाला नीदरलैंड दुनिया का पहला ऐसा देश बन गया है, जहां सभी जेल बंद की जा रही हैं। इन जेलों में अब शरणार्थी बसाए जा रहे हैं। 2013 में इस देश में केवल 19 कैदी थे। 2018 तक यहाँ कोई कैदी नहीं बचा है। नीदरलैंड के न्याय मंत्रालय के मुताबिक अगले 5 सालों में यहां हर साल कुल अपराध में 0.9% की गिरावट आएगी और हम सारी जेल बंद कर देंगे। इससे दो तरह के बदलाव होंगे। सामाजिक दृष्टिकोण से अपराध घटने से देश सुरक्षित होगा व रोजगार के दृष्टिकोण से जेलों में काम करने वालों की नौकरी जा सकती है। जेलकर्मियों की संख्या करीब दो हजार है। इनमें से 700 लोगों को सरकार ने दूसरे विभागों में तबादले का नोटिस दिया है। बचे 1300 कर्मचारियों के लिए काम की तलाश की जा रही है। यहां जेलें इतनी खाली हो गई थी कि नीदरलैंड को अपनी जेलें चलाने के लिए नॉर्वे से कैदी मंगवाने पड़े थे। यहां कैदियों के लिए इलेक्ट्रॉनिक एंकल मॉनिटरिंग सिस्टम है इस सिस्टम में उनके पैर में एक ऐसी डिवाइस पहनाई जाती है, जिससे उनकी लोकेशन ट्रेस की जा सके। ये डिवाइस रेडियो फ्रीक्वेंसी सिगनल पर काम करता है। यदि कोई अपराधी तय दायरे से बाहर जाता है, तो पुलिस को सूचना मिल जाती है। यहां कैदियों को जेल में रखने के बजाय काम करने और सिस्टम में वापस लाने पर जोर दिया जाता है।

जैल बंद कर शरणार्थियों के लिए खोला गया स्किल डेवलपमेंट सेंटर : नीदरलैंड में जेलों को बंद करने का सिलसिला 2016 से शुरू हुआ था। सबसे पहले एम्स्टर्डम और बिजल्मर्बज की जेल बंद की गई। इन जेलों को तोड़कर यहा एक हजार शरणार्थियों के लिए एक बड़ा सेंटर शुरू किया गया है। यहां शरणार्थियों के लिए स्किल डेवलपमेंट की कक्षाएं शुरू की गई हैं।

अपनी खुशियों का चुनाव खुद करें

अगर आप खुश रहना जानते हैं तो सफलता भी पा सकते हैं। खुश रहने के लिए आपको वर्तमान में रहने का अभ्यास करना होगा।

स्वास्थ्य और खुशी में से पहले क्या जरूरी है? आपका जवाब कुछ भी हो लेकिन यह तय है कि एक खुश इंसान एक अच्छे स्वास्थ्य को पा सकता है। एक लम्बी जिंदगी जीने से ज्यादा जरूरी है कि एक बेहतर जिंदगी जीना। इसलिए खुश रहना एक आदत है और यह आदत हम सब सीख सकते हैं। जब हम खुश रहते हैं तो सफलता पाने की संभावना भी प्रबल होती है। कुछ छोटी-छोटी बातों का ध्यान रखकर हम खुश रहने का अभ्यास कर सकते हैं।

अपने दिमाग का नियंत्रण स्वयं के पास रखें

किसी भी बात को सिर्फ इसलिए नहीं मानें कि अन्य लोग मान रहे हैं। हमारे दिमाग में 20 फीसदी नकलची न्यूरोन्स होते हैं और जो हमारे आस-पास घटित हो रहा है, उस से ये प्रभावित होते हैं। आपके आस-पास के लोग आपको जैसा महसूस करवाएंगे आप वैसा ही करेंगे। इसलिए हमें जागरूक रहना है कि यदि आस-पास नकारात्मक माहौल है तो तुरंत उससे अलग हो जाना है। कोई भी ऐसा व्यवहार तब तक नहीं अपनाना है, जब तक हम स्वयं पूरी तरह उससे अच्छा नहीं महसूस करते हैं।

स्वयं के साथ सवाल करने की आदत डालें

जब भी कोई नकारात्मक विचार या स्थिति या व्यक्ति हमारे आस-पास हो तो हमें अपने आप से कुछ सवाल करने चाहिए। क्या यह बात करना जरूरी है ? क्या इस सोच या बातचीत से मैं कुछ पाना चाहता हूं? क्या इस बातचीत से कुछ सकारात्मक होने वाला हैं ? रोज समय निकाल कर खुद से सवाल करें- मैं कैसा

महसूस कर रहा हूं ? जवाब कुछ भी आए, एक सवाल और करें। क्यों कर रहा हूं ? क्या मैं इसे बदलने के लिए कुछ कर सकता हूँ ? इन सवालों से मानसिक स्थिति को काबू करपाएंगे।

छोटी-छोटी खुशियां मनाने की आदत डालें

हमारा दिमाग किसी भी बात, इंसान, स्थिति को तभी समझ पाता है, जब वह उसका अभ्यस्त हो। इसलिए अपने दैनिक जीवनमें कुछ ऐसे पल, अवसर तय कीजिए जब आप कुछ भी काम पूर्ण करें या आपके साथी, परिवार के सदस्य करें, इन अवसरों को उनके साथ सेलिब्रेट करें। परवाह न करें कि लोग क्या कहेंगे। आप खुद तय कर सकते हैं कि वह अवसर काफी मायने रखता है। इन छोटी खुशियों पर ध्यान केंद्रित करने से हमें रोज नई ऊर्जा मिलेगी।

अभी यहां इसी वक्त का नियम अपनाएं

हम स्थिर शांत और खुश महसूस कभी भी कर सकते हैं। बस उसके लिए अपने ध्यान को वर्तमान समय में केन्द्रित करने की आदत डालनी है। जब भी आप बीते हुए समय में जाने लगें या आने वाले समय के बारे में बहुत विचार आएं तो अपने आप से पूछे कि मैं अभी क्या कर रहा हूं, कहा हूं, इस वक्त क्या हो रहा हैं और जवाब मिलने के बाद आपको लगातार इसी अवस्था में बने रहने की आदत डालनी है। धीरे-धीरे आप वर्तमान समय में ही रहने के आदी हो जाएंगे।

आपकी मर्जी के बिना कोई भी आपको तुच्छ होने का अहसास नहीं करवा सकता है। एलेयनोर रूजवेल्ट

आपके आस-पास के लोगों में से कोई भी जब आपके मानदंडों पर खरा न उतरे तो मान लीजिए कि अपने मानदंडों को फिर से परख लेने का समय आ गया है।

बिल लेमली

किसी काम को करने का अधिकार आपको हैं, इस बात का मतलब यह नहीं होता कि वह करना सही भी है। विलियम सेजयर

सम्पत्ति उस व्यक्ति की होती है, जो इसका आनन्द लेता है न कि उस व्यक्ति को जो इसे अपने पास रखता है। अफगानी कहावत

अनन्त पंच परिवर्तन परे स्वयं में ही रमण करूँ

(मेरी विश्व की यात्रा हो गई है अनन्त बार किन्तु स्व-उपलब्धि नहीं हुई एक भी बार)

(चाल :- आत्मशक्ति...2. क्या मिलिए...) - आचार्य कनकनन्दी

दव्य-क्षेत्र-काल-भव-भाव रूप में किया हूँ परिवर्तन पंच।।
किन्तु स्व-उपलब्धि एक बार भी नहीं किया हूँ अभी तक।।
विश्व के समस्त पुद्गल द्रव्यों को ग्रहण किया हूँ अनन्त बार।
ग्राह्य अग्राह्य-मिश्र रूप में ग्रहण किया हूँ अनन्त बार।।(1)
कर्म-नोकर्म व भोजन-पानी-औषधि रूप में किया ग्रहण।
शरीर-इन्द्रिय-मन-भोगोपभोग परिग्रह रूप में किया ग्रहण।।
ग्रहण करके अनन्त बार त्याग भी किया हूँ सभी पुद्गल।
अतएव विश्व के समस्त पुद्गल मेरे हैं वमन व मल।।(2)
अतएव ऐसे पुद्गल प्रति मैं कैसे हो सकता हूँ अनुरक्त।
इसलिए समस्त भौतिक द्रव्यों से मैं श्रद्धा-प्रज्ञा से विरक्त।।
भौतिक द्रव्य भले हो मम शरीर से ले सोना-चाँदी हीरा-मोती।
रुपया-डॉलर-जमीन मकान उपकरण से ले भोजन पानी।।(3)
साधना हेतु शरीर योग्य भले भोजन-पानी-औषध-पवन।
पिच्छी-कमण्डल-शास्त्रादि चाहिए तथापि इनसे भी अनासक्त।।
अनादि कालीन मोह के कारण पुद्गल में हुआ था आसक्त।
तन-मन-इन्द्रिय-द्रव्य प्राण आदि पुद्गल होने से हुआ था आसक्त।।(4)
किन्तु श्रद्धा-प्रज्ञा-अनुभवादि से जाना हूँ मैं अभौतिक द्रव्य।
मैं हूँ एक अमूर्तिक चैतन्य द्रव्य अनन्त ज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्य युक्त।।
लोकाकाश के हर प्रदेश में सूक्ष्म निगोदिया से ले उत्कृष्ट अवगाहना में ।
जन्म-मरण किया अनन्त बार अतः कोई क्षेत्र नहीं मेरा अपरिचित में।।(5)
द्रव्य-भावनोकर्म के कारण अनन्त भूतकाल में जन्मा व मरा।
हर उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी के हर समय में जन्मा व मरा।।
योगस्थान, अनुभाग बन्ध्याध्यवसायस्थान, कषायाध्यावसायस्थान।

स्थिति स्थानों परिवर्तन में भाव परिवर्तन किया हूँ मैं अनन्त।।(6)
हर खोटे-छोटे भाव किया हूँ अनन्त बार राग-द्वेष-मोह रूप में।
ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा-मद-कामदि रूप में अतः ये भाव हुए सुलभता से।।
चारों गति की जघन्य आयु से ले उत्कृष्ट आयु तक में जन्मा व मरा।
हर गति में अनन्त बार जन्मा मरा तथाहि अनन्त दुःखों को सहा।।(7)
अतएव ये सभी मेरे लिए हो गये बासी अति सुलभ व दुःखपूर्ण।
इससे परे स्व-आत्मिक द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव-भव हेतु कर रहा हूँ मैं पुरुषार्थ।।
आत्मश्रद्धान ज्ञान-चारित्र द्वारा स्वयं में ही स्वयं द्वारा स्व को मैं प्राप्त करूँ।
स्वयं में ही स्व स्वभाव में स्थिर होकर 'कनक' स्वयं में ही रमण करूँ।।(8)

भीलूड़ा 04.01.2019 रात्रि 07:54

मूर्ख V/S विवेकी

(पर चिन्ता करने वाले मूर्ख तो स्व-पर चिन्तन करने वाले विवेकी)

(चालः- 1. जिया बेकरार है...2. आत्मशक्ति...)

मूर्ख मेरा नाम है विवेक हीन काम है।
हिताहित ज्ञान रहित करूँ मैं सभी काम है। (स्थायी)
न जानूँ मैं सत्य-असत्य, सुकार्य व कार्य।
धर्म-अधर्म व पुण्य-पाप, न्याय तथा अन्याय।।
स्व-पर हित रिक्त करता हूँ मैं ही मनमाना काम।
फैशन-व्यसन-आडम्बर व देखादेखी आदि काम।।(1)

चिन्तन-मनन रहित करूँ मैं, चिन्ता तथा तनाव।
समय-शक्ति व साधनों का करूँ मैं सदा अपव्यय।।
स्व-स्वरूप को मैं नहीं जानूँ ''मैं हूँ चैतन्य द्रव्य''।
स्व-शरीर को ही 'मैं' मानूँ, यह मेरा बड़ा कुज्ञान।।(2)

स्वरूप बोध विपरीत से मेरे, सभी होते हैं विपरीत।
श्रद्धा-प्रज्ञा व लक्ष्य से ले भाव से ले व्यवहार प्रभृत।।
इसलिए मेरी सभी प्रवृत्तियाँ होती है पर आश्रित।

परको देखूँ पर को जानूँ, पर को मानूँ मैं पराश्रित।।(3)

इसलिए मुझे भीड़ चाहिए, करने हेतु गप्पाष्टक (विकथायें)।
पर निन्दा पर अपमान से ले, कलह विवाद कुर्तक तक।।
प्रतिस्पर्द्धा व पर प्रपंच पर से ईर्ष्या-द्वेष व घृणा करूँ।
पर को नीचा दिखाकर स्व-नीचता -अहंकार प्रकट करूँ।।(4)

इसलिए मैं जीवन में, न कर पाऊँ सही विकास।
मेरे से भिन्न होते विवेकी जिससे करते सही विकास।।
मेरे सभी दुर्गुण उनमें न होते, स्वरूप को माने चैतन्यमय।
अतः उनका लक्ष्य महान् होता, तदनुकूल भाव व काम।(5)

शान्त एकान्त प्रिय होते वे(जन) पर चिन्ता परे करे चिन्तन।
स्व-पर-विश्व हित हेतु करते काम सरल-सहज-सादा जीवन।।
स्व की प्रतिस्पर्द्धा स्व से करते, स्वयं ही स्वयं से करते चर्चा।(बातें)।
स्व दोष स्वयं घटाते स्व गुणों को भी बढ़ाते।।(6)

शोध-बोध व लेखन-पठन-प्रयोग-परीक्षण विविध करते।
अन्य कोई जाने या न जाने/(माने) उसकी चिन्ता वे नहीं करते।।
भेड़-भेड़िया चाल रहित स्व-आदर्श पथ में आगे बढ़ते।
ऐसे (विवेकी) जन ही तीर्थंकर-बुद्ध-ईसा-दार्शनिक-वैज्ञानिक होते।।(7)

मेरी प्रजाति में कोई महान् न होते भले होते रावण से कंस।
इसलिए मुझे 'कनकनन्दी', विवेकी बनाने हेतु बनाया काव्य।।(8)

भीलूड़ा 09.02.2019 रात्रि 08:28

(यह कविता आधुनिक वैज्ञानिक शोधों (Google) से भी प्रेरित है।)

संदर्भ-

पूर्ण नियंत्रण क़ायम रखने की कोशिश से तनाव बढ़ता है :अपने परिवेश की हर चीज़ को नियंत्रित करने की कोशिश करके चिंता कम करने के प्रयास नाकाम रहेंगे। स्थिति को नियंत्रित करने की आपकी कोशिशें जितनी ज़्यादा नाकाम होंगी, आप

उतने ही ज़्यादा चिंतित होते जाएँगे। जब आप देखते हैं कि आप परिणाम पूरी तरह नियंत्रित करने में सक्षम नहीं है, तो इससे अक्षमता की भावना भी पैदा हो सकती है।

हर चीज़ को नियंत्रित करने की कोशिश में समय और ऊर्जा बरबाद होती है : आपके नियंत्रण के बाहर की चीज़ों की चिंता करने से मानसिक ऊर्जा का क्षय होता है। परिस्थितियाँ अलग होने की कामना करना या लोगों से हर चीज़ अपने हिसाब से कराने की कोशिश करना और किसी बुरी चीज़ को होने से हमेशा रोकने की कोशिश इंसान को थका देती है। इससे आपकी ऊर्जा सक्रियता से समस्या सुलझाने पर केंद्रित नहीं हो पाती है और आप उन मुद्दों को अनदेखा कर देते हैं, जिन पर आपका नियंत्रण होता है।

नियंत्रण के जुनून से संबंधों को नुक़सान होता है : लोगों को क्या करना चाहिए या चीज़ों को सही कैसे करें, उन्हें यह लगातार बताने से ज़्यादा मित्र बनने की संभावना नहीं है। वास्तव में, जिन लोगों में नियंत्रण का जुनून होता है, वे लोगों से निकटता नहीं बना पाते, क्योंकि वे किसी भी तरह की ज़िम्मेदारी के मामले में दूसरों पर विश्वास नहीं करते हैं।

आप दूसरों का कठोरता से मूल्यांकन करेंगे : यदि आप जीवन में अपनी सारी सफलताओं का श्रेय अपनी योग्तयाओं को देते हैं, तो आप उन लोगों की आलोचना करेंगे, जिन्होंने वे सफलताएँ हासिल नहीं की हैं। वास्तव में नियंत्रण के उच्च आंतरिक बिंदु वाले लोग एकाकीपन से कष्ट उठाते हैं, क्योंकि वे इस बात से चिढ़ते हैं कि दूसरे लोग उनके पैमाने पर खरे नहीं उतरते हैं।

आप हर चीज़ के लिए ख़ुद को नाहक दोष देंगे : आप सारे समय बुरी चीज़ों को घटित होने से नहीं रोक सकते। लेकिन अगर आप सोचते हैं कि हर चीज़ आपके नियंत्रण के भीतर है, तो आपको यह विश्वास होगा कि जब भी जीवन आपकी योजना के अनुसार नहीं चलता है, तो इसके लिए हर बार आप ही सीधे ज़िम्मेदार हैं।

जो लोग नियंत्रण का सही संतुलन बना लेते हैं, वे इस बात को पहचानते हैं कि उनका व्यवहार किस तरह सफलता के अनके अवसरों को प्रभावित कर सकता है, लेकिन उन्हें यह भी पता होता है कि किस तरह सही समय पर सही जगह होने

जैसे बाहरी घटक भूमिका निभा सकते हैं। शोधकर्ताओं ने पाया है कि इन लोगों में नियंत्रण का पूरी तरह आंतरिक या बाहरी बिंदु नहीं होता है; इनमें नियंत्रण के दोनों बिंदु होते हैं। अपने जीवन में इस संतुलन को हासिल करने के लिए इस बारे में अपने विश्वासों की जाँच करें कि आप किसे सचमुच नियंत्रित कर सकते हैं और किसे नहीं कर सकते। उन समयों पर ग़ौर करें, जब आपने उन लोगों व परिस्थतियों पर बहुत ज्यादा ऊर्जा लगा दी थी, जिन्हें आप नियंत्रित ही नहीं कर सकते थे। खुद को याद दिलाएँ कि ऐसा बहुत कुछ है, जिसे आप नियंत्रित नहीं कर सकते :

आप एक अच्छी पार्टी दे सकते हैं, लेकिन आप इस बात को नियंत्रित नहीं कर सकते कि लोगों को मज़ा आता है या नहीं।

आप अपने बच्चे को सफल होने के साधन तो दे सकते हैं, लेकिन आप अपने बच्चे को अच्छा विद्यार्थी नहीं बना सकते।

आप अपनी नौकरी में अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास तो कर सकते हैं, लेकिन आप अपने बॉसको विवश नहीं कर सकते कि वह आपके काम को मान्यता दे। (जो समझदार नहीं करते, (ऐसी मॉरिन)

आपके हिसाब से दूसरे लोग जो चाहते हैं, उसके आधार पर अपने व्यवहार को बदलने से पहले अपने विचारों और भावनाओं का अकालन करें। जब आप सोचते हैं कि क्या आपकी अपनी राय व्यक्त करनी चाहिए, तो लोगों को खुश करने संबंधी इन सत्यों को याद रखेः

हर एक को ख़ुश करने की चिंता समय की बरबादी है : आप इस बात को नियंत्रित नहीं कर सकते कि दूसरे लोग कैसा महसूस करते हैं और आप यह सोचने में जितना ज़्यादा समय लगाते हैं कि क्या लोग ख़ुश होंगे, आपके पास उस बारे में सोचने के लिए उतना ही कम समय रहेगा, जो सचमुच मायने रखता है।

लोगों को ख़ुश करने वालों को उल्लू बनाकर दूसरे लोग अपना मतलब निकाल लेते हैंः दूसरे लोगों को ख़ुश करने लोलों को एक मील दूर से पहचान लिया जाता है। चालाक लोग अक्सर उनकी भावनाओं से फ़ायदा उठाने के लिए चालें चलते हैं और उनके व्यवहार को नियंत्रित करते हैं। उन लोगों की ताक में रहें, जो इस तरह की बातें कहते हैं, ''मैं आपसे यह करने को सिर्फ़ इसलिए कह रहा हूँ, क्योंकि आप

बससे अच्छा काम करेंगे'' या ''मुझे आपसे यह मांगते हुए नफ़रत है, लेकिन...''

दूसरे लोग नाराज़ या निराश रहें, तो ठीक है :ऐसा कोई कारण नहीं है कि लोगों को सारे समय ख़ुश रहने की ज़रूरत हो। हर व्यक्ति में बहुत सारी भावनाओं से निपटने की योग्यता होती है और यह आपका काम नहीं है कि आप उन्हें नकारात्मक भावनाएँ महसूस करने से रोकें। कोई नाराज़ हो जाता है, इसका हमेशा यह मतलब नहीं होता कि आपने कोई गलत चीज़ की है।

आप हर एक को ख़ुश नहीं कर सकते : यह असंभव है कि हर व्यक्ति एक ही चीज़ से खुश हों। स्वीकार करें कि कुछ लोगों को कभी ख़ुश किया ही नहीं जा सकता और उन्हें ख़ुश रखना आपका काम नहीं हैं।

अपने मूल्यों को स्पष्ट करें

जब जीवन में आपको निर्णय लेने होते हैं, तो सटीकता से यह जानना महत्त्वपूर्ण होता है कि आपके मूल्य क्या हैं, क्योंकि तभी आप सर्वश्रेष्ठ विकल्प चुन सकते हैं। क्या आप आसानी से अपने दिमाग़ में आने वाले शीर्ष पाँच मूल्यों की सूची बता सकते हैं ? ज़्याादातर लोग नहीं बता सकते। लेकिन अगर आपके मूल्य ही सचमुच स्पष्ट नहीं है, तो आपको कैसे पता चलेगा कि अपनी ऊर्जा कहाँ लगाना है और सर्वश्रेष्ठ निर्णय कैसे लेना है ? अपने मूल्यों को स्पष्ट करने में समय लगाना एक बहुत सार्थक अभ्यास हो सकता है।

वे अपने विचारों के साथ अकेले रहने से आतंकित होते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि वे परेशान करने वाली चीज़ों के बारे में सोच सकते हैं। यदि उनके पपास कुछ ख़ाली पल होंगे, तो उन्हें कोई दुःखद चीज़ याद आ जाएगी या भविष्य की चिंता होने लगेगी। इसलिए अपनी असहज भावनाओं को दूर रखने की कोशिश में वे अपने मन को ज़्यादा से ज़्यादा व्यस्त रखते हैं।

एकातं में रहने को अक्सर ग़लती से अकेला रहना मान लिया जाता है। अकेलेपन का संबंध ख़राब नींद, उच्च रक्तचाप, कमज़ोर प्रतिरोधक तंत्र और बढ़े हुए तनाव हॉर्मोनों के साथ जोड़ गया है। लेकिन अकेले रहने से हमेशा अकेलापन उत्पन्न नहीं होता है। वास्तव में कई लोग तो भीड़ भरे कमरे में दूसरों से घिरे होने के बावजूद अकेलापन महसूस करते हैं। अकेलापन तो यह अहसास है कि आपका वहाँ कोई नहीं

है। दूसरी ओर, एकांत अपने विचारों के साथ अकेले रहने की चयन हैं।

अकेलेपन से डरने के साथ समस्या

अगर हम ठहरकर ख़ुद के नवीनीकरण का समय न निकलें, तो दैनिक ज़िम्मेदारियों और संबंधों की सतत देखभाल भी हम पर हावी हो सकती है। दुर्भाग्य से, एकांत के लाभों को अक्सर नज़रअंदाज किया जाता है या कम माना जाता है। शोध बताता है कि हममें से जो लोग एकांत से डरते हैं, वे कुछ मुख्य लाभों से वंचित रह सकते हैं :

थोड़ा अकेले रहना बच्चों के लिए अच्छा है : 1997 में एक अध्ययन हुआ, ''द इमर्जेन्स ऑफ़ सॉलिट्यूड एज़ कंस्ट्रक्टिव डोमेन ऑफ़ एक्सपीरिएंस इन अर्ली एडोलेसेंस।'' इसमें यह पाया गया कि पाँचवी से लेकर नवे ग्रेड तक के जो बच्चे थोड़ा समय अकेले में गुज़ारते थे, उनमें व्यवहार की कम समस्याएँ होती थी। उन्हें डिप्रेशन भी कम होता था और उनके ग्रेड पॉइंट का एवरेज ज़्यादा था।

ऑफ़िस में एकांत उत्पादकता को बढ़ा सकता है : हालाँकि कई ऑफ़िस खुले कार्यस्थल और बडे विचारमंथन सत्रों को बढ़ावा देते हैं, लेकिन 2000 के अध्ययन ''कॉग्निटिव स्टिमुलेशन इन ब्रेनस्टॉर्मिंग'' ने पाया कि थोड़ा एकांत स्थान मिलने पर ज़्यादातर लोगों का प्रदर्शन बेहतर हुआ। हर एक से दूर कुछ समय बिताने को बढ़ी हुई उत्पादकता से जोड़ा गया है।

एकांत का समय आपकी परानुभति को बढ़ा सकता है : जब लोग ख़ुद के साथ समय गुज़ारते हैं, तो उनके दूसरों के प्रति संवेदनशील होने की ज़्यादा संभावना होती है। यदि आप अपने सामाजिक दायरे में बहुत समय बिता रहे हैं,तो यह बहुत संभव है कि आपमें एक ''हम बनाम वे'' मानसिकता विकसित हो जाएगी, जिसकी वजह से आप अपने सामाजिक दायरे के बाहर के लोगों से कम सहानुभूतिपूर्ण तरीक़े से व्यवहार कर सकते हैं।

अकेले समय गुजारने से सृजनात्मकता को चिंगारी मिलती है : कई सफल चित्रकार, लेखक और संगीतकार एकांत को अपने बेहतर प्रदर्शन का श्रेय देते हैं। शोध बताता है कि समाज की माँगों से दूर समय बिताने से सृजनात्मकता बढ़ सकती है।

एकाकी योग्यताएँ मानसिक स्वास्थ्य के लिए अच्छी होती है : हालाँकि

सामाजिक योग्यताओं के महत्त्व पर बहुत ज़ोर दिया जाता है, लेकिन प्रमाण सुझाता है कि एकाकीपन की योग्यताएँ भी स्वास्थ्य और कल्याण के लिए इतनी ही महत्त्वपूर्ण हो सकती हैं। अकेलेपन के समय को झेलने की योग्यता का संबंध बढ़ी हुई खुशी, जीवन संतुष्टि और बेहतर तनाव प्रबंधन से जोड़ा गया है। जो लोग अकेले खुश रहते हैं, उन्हें डिप्रेशन भी कम होता है।

एकांत मरम्मत का काम भी करता है : अकेले गुज़ारा गया समय आपको अपनी बैटरी को रिचार्ज करने का समय देता है। शोध दर्शाता है कि प्रकृति में अकेले समय बिताने से आराम मिलता है और नवीनीकरण होता है।

सचमुच प्रामाणिक जीवन का आनंद लेना शुरू करने से पहले आपके शब्दों और आपके व्यवहार को आपके विश्वासो के अनुरूप होना चाहिए। जब आप हर एक को ख़ुश करने की चिंता छोड़ देते हैं और अपने खुद के मूल्यों के अनुरूप जीने का साहस करते हैं, तो आपको कई लाभ होंगे :

आपका आत्मविश्वास आसमान छूने लगेगा : आपको लोगों को ख़ुश नहीं करना है, यह देखने में आप जितने ज़्यादा सक्षम होंगे, आप उतनी ही ज़्यादा स्वतंत्रता और आत्मविश्वास हासिल करेंगे। आप जो निर्णय लेते हैं, आप अनसे संतुष्ट महसूस करेंगे, भले ही आपके कार्यों से दूसरे लोग असहमत हो, क्योंकि आपको पताहोगा कि आपने सही निर्णय लिया है।

आपके पास अपने लक्ष्यों के लिए ज़्यादा समय और ऊर्जा होगी : दूसरे आपको जैसा बनाना चाहते हं, आप वैसा बनने में अपनी ऊर्जा बरबार नहीं करेंगे। इसलिए आपके पास अपने मनचाहे काम करने के लिए समय और ऊर्जा होगी। जब आप उस प्रयास को अपने लक्ष्यों की दिशा में लगाते हैं, तो आपके सफल होने की कहीं ज़्यादा संभावनाहोगी।

आप कम तनावग्रस्त महसूस करेंगे : स्वास्थ्य सीमाएँ तय करने पर आपको काफ़ी कम तनाव और चिढ़ का अनुभव होगा। आप ऐसा महसूस करेंगे, जैसे आपका अपने जीवन पर ज़्यादा नियंत्रण है।

आप ज़्यादा स्वस्थ संबंध बनाएँगे : जब आप दृढ़ अंदाज़ में व्यवहार करेंगे, तो दूसरे लोग आपका ज़्यादा सम्मान करेंगे। आपका संप्रेषण बेहतर हो जाएगा और

आप लोगों के प्रति क्रोध और द्वेष भी नहीं रखेंगे।

आपकी इच्छाशक्ति बढ़ जाएगी : 2008 में जर्नल ऑफ़ एक्सपेरिमेंटल साइकोलॉजी में एक रोचक अध्ययन प्रकाशित हुआ, जिसमें दिखाया गया कि जब लोग किसी दूसरे को ख़ुश करने के बजाय अपने हिसाब से विकल्प चुनते हैं, तो उनमें बहुत ज़्यादा इच्छाशक्ति होती है। यदि आप किसी दूसरे को ख़ुश करने के लिए कोई चीज़ कर रहे हैं, तो आप अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए जूझेंगे। आप अच्छा काम जारी रखने के लिए तभी प्रेरित होंगे, जब आपको यह विश्वास है कि यह आपके लिए सर्वश्रेष्ठ चयन है।

जोखिम से बचना

हम अपने जीवन में कई जोखिमों का सामना करते हैं-वित्तीय, शारीरिक, भावनात्मक, सामाजिक, व्यावसायिक जोखिम आदि, लेकिन अक्सर लोग डर की वजह से उन जोखिमों से बचते हैं, जो उन्हें उनकी पूरी संभावना तक पहुँचा सकते हैं। क्या आप नीचे दिए किसी बिंदु पर हाँ में जवाब देते हैं ?

आप अपने जीवन में महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने में संघर्ष करते हैं।

आप इस बारे में दिवास्वप्न देखने में बहुत समय लगाते हैं कि आप क्या करना चाहेंगे, लेकिन आप कोई क़दम नहीं उठाते हैं।

कईबार आप आवेग में कोई निर्णय इसलिए ले लेते हैं, क्योंकि सोच-विचार करने से बहुत ज़्यादा चिंता हो जाएगी।

आप अक्सर सोचते हैं कि आप जीवन में बहुत जोखिम भरी और रोमांचक चीज़ें कर सकते हैं, लेकिन डर आपको पीछे रोक देता है।

जब आप कोई जोखिम लेने के बारे में सोचते हैं, तो आप आमतौर पर सबसे बुरे परिदृश्य की कल्पना करते हैं और जोखिम न लेने का चयन करते हैं।

आप कई बार दूसरों को अपनी ख़ातिर निर्णय लेने की अनुमति इसलिए दे देते हैं, ताकि आपको निर्णय न लेना पडे।

आप अपने जीवन के कम-से कम कुछ क्षेत्रों- सामाजिक, वित्तीय या शारीरिक में जोखिमों से बचते हैं, क्योंकि आपको डर लगता है।

आप अपने डर के स्तर के अनुसार निर्णय लेते हैं। यदि आपके डर का स्तर कम है, तो आप कुछ कर सकते हैं। लेकिन अगर आपको सचमुच बहुत डर लग रहा है, तो आप निर्णय लेते हैं कि जोखिम लेना मूर्खतापूर्ण है।

आप सोचते हैं कि परिणाम काफ़ी हद तक भाग्य पर निर्भर होते हैं।

अगृहीत व गृहीत अन्धश्रद्धानी(लोकमूंढ, नकलची)

(कर्म संस्कार से अन्धश्रद्धानी व अन्धश्रद्धानीओं से अन्धश्रद्धानी)

(मोक्षमार्ग व संसार मार्ग)

(चालः- 1. जय हनुमान...2. छोटी-छोटी गैया...)

सम्यक्त्व मिथ्यात्व का स्वरूप जानो, सम्यक्त्व पाओ व मिथ्यात्व त्यजो।
इस हेतु भाव शुद्धि प्रमुख करो, देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति भी करो।।
तत्त्वार्थ श्रद्धान से सम्यक्त्व पाओ, निश्चय-व्यवहार से स्वयं(मैं) को मानो।
निश्चय से शुद्ध-बुद्ध आनन्द मानो, व्यवहार से कर्मसहित संसारी मानो।।(1)

व्यवहार से भले स्वयं को मानव मानो, निश्चय से स्वयं को शुद्धात्मा मानो।
तन-मन-धन-भाई बन्धु-स्वजन, ख्याति-पूजा-लाभ-वर्चस्व से परे स्व मानो (मैं) ।
ऐसा ही भाव व्यवहार कथन करो, निश्चय व्यवहार मोक्षमार्ग को वरो।
इससे परम्परा से मिलेंगे स्वर्ग-मोक्ष, इस हेत ही गृहस्थ-साधु के धर्म।।(2)

इससे विपरीत होता मिथ्यात्व, अगृहीत मिथ्यात्व व गृहीत मिथ्यात्व।
अनादिकालीन कर्म संस्कार के कारण, होता अगृहीत मिथ्यात्व कुज्ञान कारण।।
कुज्ञानी-मोही-स्वार्थी-कामी-दुर्जन, इर्ष्या-घृणा-तृष्णा-मत्सर सम्पन्न।
फैशनी-व्यसनी व ढोंगी-पाखण्डी, चापलूस धूर्त ठगी संकीर्ण दंभी।।(3)

इनके देखादेखी व उनके कारण, उनके वचन को जा मानते जन।
वे होते गृहीत मिथ्यात्वीजन/(लोक मूढ़), उनका मानना-कहना-करना, अधर्म।।

वे होते अन्धविश्वासी श्रद्धा-प्रज्ञा विहीन, भेड़-भेड़िया चाल वाले विवेकहीन।
वे न जानते सत्यासत्य हित-अहित, पुण्य-पाप से ले धर्म-अधर्म।।(4)

फैशन-व्यसन व दिखावा आडम्बर, करते हैं पर निन्दा व अनादर।
उल्लू, बगुला व गोमुखव्याघ्र सम, करते व्यवहार कैकयी-मंथरा शकुनी सम।।
इनकी बाह्य धार्मिक क्रियायें होती व्यर्थ, आत्मविशुद्धि बिन यथार्थ धर्म।

पापानुबन्धी पुण्य से आत्मपतन, संसारवर्द्धक तथा दुःख के कारण।।(5)
मिथ्यात्व सम न अन्य कोई अधर्म, सम्यक्त्व सम न अन्य कोई धर्म।
संसार का मूल कारण होता मिथ्यात्व, मोक्ष का मूल कारण सम्यक्त्व।।
जहाँ मिथ्यात्व वहाँ सभी कर्म (पाप) बन्धते, सम्यक्त्व बिन वें न पाप/(कर्म) नशते।
सम्यक्त्व बिन न पुण्य प्रारम्भ, सम्यक्त्वच बिन न धर्म प्रारम्भ।।(6)
इस हेतु अनुभवी सद्गुरु के द्वारा, सम्यक्त्व प्राप्त करो चारों अनुयोग द्वारा।
इससे प्राप्त करो ज्ञान-चारित्र, इससे ही मोक्ष मिले 'कनक' को विश्वास।।(7)

भीलूड़ा दि. 21.01.2019 रात्रि 08:15 व 01:27

(यह कविता सौ. राजकुमारी **w/o** श्रीपाल(भीलूड़ा) के कारण बनी।)

जीवन निर्वाह (v/s) नहीं जीवन निर्वाण

(जीवन-निर्वाण लक्ष्य रहित जीवन-निर्वाह करने वाले आत्मविकास रहित)

(चालः 1.छोटी-छोटी गैया...2. क्या मिलिए...)

<u>जीवन-निर्वाह</u> तो हर जीव करते, स्व-स्व कर्मानुसार सभी जीव करते।
जीवन में (से) निर्वाण तो मुमुक्षु करते, महान पुरुषार्थ से विरले करते।।
द्रव्य भाव-नोकर्म सह संसारी जीव, यथायोग्य तन-मन-इन्द्रिय युक्त।
आहार-भय-मैथुन-परिग्रह संज्ञा सहित, धन-जन-मान-रोग-शोक सहित।।

इस हेतु जो वे करते कार्यकलाप, वे सभी <u>जीवन निर्वाह</u> के निमित्त।

मनुष्य जो करते पढ़ाई-कृषि-वाणिज्य-सेवा, वे सभी जीवन निर्वाह (जीवन यापन) के निमित्त।।

इस दृष्टि से पशु-पक्षी से ले कीट पतंग, मनुष्य में राव रंक साक्षर-निरक्षर।
नेता-अभिनेता-खिलाड़ी से वैज्ञानिक, सभी करते काम जीवन निर्वाह निमित्त।।(2)

कुछ करते नैतिक से जीवन निर्वाह, कुछ करते अनैतिक से जीवन निर्वाह।
नैतिक-अनैतिक दृष्टि से भले अन्तर, जीवन निर्वाह दृष्टि से नहीं अन्तर।।
आध्यात्मिक दृष्टि से सभी बन्धकारक, निश्चय से सभी होते पाप बन्धकारक।
आरंभ-परिग्रह भोग-उपभोग से, पाप बन्ध होता (है) भाव-द्रव्य रूप से।।(3)

तद्भव मोक्षगामी भी हो महापुरुष, उक्त भाव-काम से बान्धते अवश्य पाप।
भले शुभ भाव अंशानुसार बान्धते पुण्य, जितने अंश में अशुभ बान्धते पाप।।
मोक्ष प्राप्ति हेतु जो होते भाव व काम, वे ही जीवन निर्वाण हेतु कारण।
गृहस्थों के दान-पूजा-व्रत परोपकार, साधु के ज्ञान-ध्यान-तप-आचरण।।(4)

गृहस्थों के आंशिक होते निर्वाण हेतु, साधु के अधिक होते जीवन निर्वाण हेतु।
गृहस्थों के पुण्य कर्म होते न्यून, साधु के पुण्य कर्म होते महान्।।
किमिच्छकदानकर्त्ता चक्रवर्ती से भी, जीवन निर्माण अधिक करते साधु ही।
गृहस्थों के धर्म तो गज स्नान समान, साधु की आत्मसाधना अति महान्।।(5)

सद्गृहस्थों तीर्थंकरों को भी न मिले निर्वाण, वीतरागी सन्तों को ही मिले निर्वाण।
राजा-महाराजा-चक्रवर्ती देवेन्द्र से भी, अतएव महान् होते निर्वाणगामी श्रमण।।
धर्म जो करते जीवन निर्वाह हेतु, वह भी नहीं धर्म वह जीविका हेतु।
सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि प्राप्ति के हेतु, नहीं धर्म वह राग-द्वेष-मोह के हेतु।।
तथाहि देखादेखी या प्रतिस्पर्द्धा सहित, ईष्या-घृणा-तृष्णा व मद सहित।

ख्याति-पूजा-लाभ-प्रसिद्धि-वर्चस्व हेतु, करते जो धर्म वह है पतन हेतु।।
आदिनाथ ने गृहस्थावस्था में जीवन निर्वाह हेतु, षट्कर्म बताया न निर्वाणहेतु।
केवलज्ञान के अनन्तर कहा निर्वाण हेतु, षट्कर्मों को कहा पाप बन्ध के हेतु।।(7)

सत्ता-सम्पत्ति व प्रसिद्धि-डिग्री आदि से, जीवन निर्वाह होता न जीवन विकास।
जीवन विकास (निर्वाण) बिना न जीवन श्रेष्ठ (श्रेय, पूज्य), निर्वाण प्राप्ति ही ' कनक-सूरी' का ध्येय।।(8)

भीलूड़ा दि. 31.01.2019 रात्रि 08:15 व 11:28

आहार-भय-मैथुन-परिग्रह के दास होते हैं मोही रागी,

(चारों संज्ञा से परिचालीत होते हैं आत्मानुशासन रिक्त प्राणी)

(चालः क्या मिलिए...)

आहार भय-मैथुन परिग्रह संज्ञा से संचालीत हैं मोही रागी।
इस हेतु ही हर कार्य करते पढ़ाई से ले धर्म व्यापार राजनीति।।
आहार हेतु परिग्रह चाहिए इस हेतु पढ़ाई से कृषि व्यापार राजनीति।
अन्याय अत्याचार शोषण मिलावट, शिकार से संग्रह वृत्ति आदि।।
आहार हेतु बर्तन ईन्धन चाहिए, तथाहि भोज्य वस्तु मसाले पानी।
षटरस व्यंजन से भक्ष्य-अभक्ष्य, तामसिक राजसिक सात्विक आदि
इस हेतु कल कारखाना चाहिए तथाहि निर्माण से ले ट्रासपोर्ट आदि।
रक्षा संवर्द्धन आदि चाहिए नियम कानून से ले पानी की व्यवस्था आदि।।
दैनिक भोजन से धार्मिक भोजन व विवाह मरण प्रिती भोज आदि।
मनुष्य से ले पशु-पक्षी कीट पतंग, स्व-स्व अनुसार आहार में प्रवृत्ति
सप्तभय से ग्रसित जीव करते, नाना विध भाव व व्यवहार।
सप्तभय से निवृत्ति हेतु करते, अस्त्रशस्त्रादि प्रयोग व अविष्कार।।
मंत्र यंत्र तंत्र टोटका से ले कवच, अंगरक्षक से ले सेना आदि।
आक्रमण युद्ध हत्या बन्दी जेल नियम कानून न्यायालय पुलिस आदि।

मैथुन हेतु करते विवाह से ले भोगोपभोग फैशन-व्यसन आदि।
अश्लील सिनेमा नाटक गाना नाचना, वेश्या बलात्कार अपहरण आदि।।
तीनों संज्ञा हेतु परिग्रह चाहिए, परिग्रह स्वरूप भी तीनों संज्ञायें।
परिग्रह चौबीस प्रकार अन्तरंग, चौदह बहिरंग दशविध भी।
मिथ्यात्व व स्त्री पुनपुंसक वेद राग हास्य रति अरति शोक भय।
जुगुप्सा तथा क्रोध मान माया लोभ ये होते चौदह अन्तरंग परिग्रह।।
स्वर्ण चाँदी धनधान्य क्षेत्र वास्तु, दास-दासी वस्त्र बर्तन आदि।
दशविध परिग्रह में गर्भित है, समस्त बाह्य परिग्रह तृष्णा वृत्ति।
अन्तरंग परिग्रह संज्ञा प्रमुख कारण, जिससे होते बाह्य परिग्रह।
दोनों परिग्रह से संचालित है, आहार भय व मैथुन।।
मोही रागी जीवों के समस्त लक्ष्य, साधना साध्य व विकास।
चारों ही संज्ञा की आपूर्ति हेतु करते नवकोटि से भाव व काम।
ऐसे जीव भले कोई भी हो, एकेन्द्रिय से ले मनुष्य तक।
चारों संज्ञा के गुलाम होकर, विवश से होते हैं संचालीत।।
ऐसी गुलामी से होते हैं मुक्त, जो आत्म श्रद्धान ज्ञान चर्यायुक्त।
निस्पृह निराडम्बर आत्मानुशासी, ख्यातिपूजा लाभादि मुक्त।
ऐसे मानव ही बनते महामानव श्रमण से ले भगवान् तक।
ये संक्षेप से वर्णन बन्ध मुक्त, मोक्ष चाहे ''सूरी कनक''।।

भीलूड़ा : दि. 27.02.2018, रात्रि-8.56

खतरनाक सामाजिक बुराई बन चुके हैं अवैध संबंध इनकी वजह से बढ़ रहे अपराधः हाईकोर्ट

केंद्र व तमिलनाडु सरकार से पूछा-अवैध संबंधों की वजह से पिछले 10 साल में कितने अपराध हुए

मद्रास हाईकोर्ट ने बुधवार को कहा कि अवैध संबंध खतरनाक सामाजिक बुराई बन चुके हैं। इनकी वजह से लगातार अपराध बढ़ रहे हैं। कोर्ट ने केंद्र और तमिलनाडु सरकारों से पिछले 10 साल में ऐसे अपराधों का ब्योरा मांगा है।

जस्टिस एन किरुबाकरन की अध्यक्षता वाली बेंच ने हत्या के मामले में एक आरोपी को हिरासत में रखने का आदेश रद्द करते यह टिप्पणी की।

अवैध संबंधों की वजह से 2017 में यह हत्याकांड हुआ था। कोर्ट ने कुछ सवाल उठाते हुए पूछा कि विवाहेत्तर संबंधों में इतनी तेजी के पीछे क्या मेगा टीवी सीरियल और सिनेमा वजह हैं ? कोर्ट ने कहा कि ऐसे गुप्त रिश्तों की वजह से ही नृशंस हत्या, हमले, अपहरण जैसे अपराध हो रहे हैं। इनकी संख्या चौंकाने वाले तरीके से लगातार बढ़ ही रही है। ज्यादातर मामलों में पति या पत्नी अपने रास्ते की अड़चनें हटाने के लिए अपने जीवन साथी की हत्या कर देते हैं। कई बार तो बच्चों को भी नहीं बख्शा जाता। इस मामले की अगली सुनवाई जून के तीसरे हफ्ते में होगी।

एड्स के वायरस से पूरी तरह मुक्त हुआ लंदन में मरीज

दवा खाने के बाद दो से तीन हफ्तों में सक्रिय हो जीता है एड्स वायरस

10 लाख लोग मारे जाते हैं एड्स से पीड़ित होने के कारण

एचआइवी पीड़ितों की संख्या के मामले में भारत तीसरे स्थान पर

यह किसी कारनामे से कम नहीं। ब्रिटेन में डॉक्टरों ने एचआइवी संक्रमित एक व्यक्ति को पूरी तरह ठीक कर दिया है। लंदन में रहने वाले इस मरीज का स्टेम सेल ट्रांसप्लांट से इलाज किया गया। एड्स के पूरी तरह इलाज का यह दूसरा मामला हैं।

सोमवार को 'नेचर पत्रिका' में इस पर रिपोर्ट प्रकाशित हुई। मरीज की पहचान जाहिर नहीं की गई है। मरीज को 2003 में पता चला था कि वह एचआइवी से गस्त है, लेकिन 2012 में कैंसर होने के बाद उसने इलाज कराना शुरू किया। अब डॉक्टरों का कहना कि बहुत जल्द एचआइवी का पूरी दुनिया से सफाया हो सकेगा।

भारत में 21 लाख लोग संक्रमित

पूरी दुनिया में फिलहाल करीब 3.7 करोड़ लोग एचआइवी से जूझ रहे हैं। 10 लाख लोग हर साल मारे जाते हैं एचआइवी पीड़ित। एचआइवी पीड़ित लोगों के लिए काम करने वाली संस्था नैको के मुताबिक, भारत में 21 लाख लोग एचआइवी पॉजिटिव हैं। देश में एचआइवी संक्रमित लोगों की तीसरी सबसे बड़ी आबादी है। द. अफ्रीका में 68 लाख लोग एचआइवी से ग्रसित हैं।

2008 में पहली बार हुआ था कमाल

इससे पहले 2008 में बर्लिन के टिमोथी ब्राउन को भी इसी तरह एड्स से मुक्त कराया गया था। 'बर्लिन पेशेंट' के नाम से चर्चित ब्राउन ने अपनी पहचान उजागर कर दी थी। बाद में अमरीका चले गए थे, जहां वे आज भी एचआइवी से मुक्त हैं। लंदन पेशेंट का इलाज करने वाली डॉक्टरों की टीम में शामिल प्रो. रविंद्र गुप्ता के अनुसार, पिछले कुछ वर्षों में ऐसी दवाओं का निर्माण हुआ है जो रोगियों के शरीर पर इस वायरस के प्रभाव को नियंत्रित रखते हैं। प्रो. रविंद कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी से जुड़े हैं।

दुर्लभ डोनर मिलने से जगी उम्मीद

लंदन पेशेंट का इलाज करने वाले डॉक्टरों ने बताया कि उन्हें स्टेमसेल का ऐसा डोनर मिला जिसके शरीर में एक दुर्लभ जीन हुआ था। यह प्राकृतिक तौर पर एचआइवी के खिलाफ प्रतिरोधक क्षमता मुहैया कराता है। डॉक्टरों को लगा कि कैंसर के साथ-साथ मरीज के एचआइवी का भी इलाज हो जाएगा। इस डोनर के बोन मैरो से एचआइवी पीड़ित के बोन मैरो को स्टेम सेल तकनीक के जरिए बदला गया। अब दवा बंद करने के 18 माह बीत चुके हैं पर मरीज में कोई इंफेक्शन नहीं मिला है।

चार संसाररूपी ज्वर से पीड़ित

अनाद्यविद्यादोषोत्थचतुः संज्ञाज्वरातुराः

शश्वत्स्वज्ञानविमुखाः सागारा विषयोन्मुखाः।।2।। सा.ध.

अन्वयार्थ - (अनाद्यविद्या दोषोत्थचतुःसंज्ञाज्वरातुराः) अनादिकालीन अविद्यारूपी दोषों से उत्पन्न होने वाली, चारों संज्ञारूपी ज्वर से पीड़ित, (शश्वत्सवज्ञानविमखः) निरंतर आत्म ज्ञान से विमुख। (विषयोन्मुखाः) विषयों के सन्मुख (सागारा) गृहस्थ होते हैं।

भावार्थ- इस श्लोक में आशाधरजी ने गृहस्थ का स्वरूप बताते हुये तीन विशेषण दिये हैं। इन तीनों विशेषणों से गृहस्थ के अंतरंग परिणामों का वर्णन किया गया है और ज्वर की उपमा देकर समझाया है कि गृहस्थ कैसे होते हैं।

जिस प्रकार वात, पित्त और कफ की विषमता से साध्य प्राकृत, असाध्यप्राकृत,

साध्यवैकृत, असाध्यवैकृत के भेद से चार प्रकार के ज्वर उत्पन्न होते हैं। उन ज्वरों से पीड़ित होने के कारण मनुष्य हिताहित के विवेक से शून्य हो जाते हैं और अपथ्यसेवी बन जाते हैं, उसी प्रकार अनित्य पदार्थों में नित्य, अपवित्र पदार्थों में पवित्र, दुःखों को सुख, हेय पदार्थों को उपादेय अपने से पृथक् स्त्री, पुत्र मित्रादिक बाह्य पदार्थों को अपना मानना, यही एक अनादिकालीन अविद्या है। उस अविद्यारूपी वात, पित्त, कफ की विषमता से उत्पन्न होने वाली आहार संज्ञा, भयसंज्ञा, मैथेनुसंज्ञा और परिग्रह संज्ञारूपी ज्वर से पीड़ित होकर यह प्राणी हिताहित के विवेक से शून्य होकर अपथ्यसेवी बन रहा है अतः अपने स्वरूप का ज्ञान नहीं रहा। जिससे निरंतर

एगो मे सासदो आदा, णाणदंसणलक्खणो।

सेसा में बाहिरा भावा, सव्वे संजोगलक्खण।।

एक ज्ञान दर्शन लक्षण वाला-ज्ञाता दृष्टा अविनाशी आत्मा ही मेरा है। और संयोग सम्बन्ध से होने वाले सम्पूर्ण वैभाविक भाव बाह्य भाव है और वे मुझसे सर्वथा भिन्न हैं। इत्यादि स्वानुभूति से पराङ्मुख होकर विषयसेवन को ही शांति का उपाय समझकर निरंतर रागद्वेष से इष्टानिष्ट विषयों की तरफ उन्मुख हो रहे हैं। उन्हें सागार, संपूर्ण, परिग्रह सहित घर में वास करने वाले गृहस्थ कहते हैं। दूसरे प्रकार से गृहस्थ का लक्षण कहते हैं।

अनाद्यविद्यानुस्यूतां ग्रंथसंज्ञामपातिसतुम।

अपरायन्तः सागाराः प्रायो विषयमूर्च्छिताः।।3।।

अन्वयार्थ- (अनाद्यविद्यानुस्यूतां) अनादिकालीन अज्ञान के कारण परम्परा से आनेवाली (ग्रन्थसंज्ञा) परिग्रह संज्ञा को।(अपासितु) छोड़ने के लिये (अपारयन्तः) असमर्थ(प्रायः) प्रायः करके (विषय मूर्च्छिता विषयभोगों में मूर्च्छित (सागाराः) गृहस्थ होते हैं।।

भावार्थ-जिस प्रकार बीज से अंकुर और अंकुर से बीज यह परम्परा अनादि काल से चली आ रही है, उसी प्रकार अनादिकालीन अज्ञानभाव से परिग्रहादि संज्ञा, परिग्रहादि संज्ञा से अज्ञान भाव(अर्थात द्रव्य कर्म से भावकर्म और भावकर्म से द्रव्य कर्म) इस प्रकार अनादि (जिसका प्रारंभ नहीं है) अविद्या से उत्पन्न हुई ग्रन्थ संज्ञा अर्थात् परिग्रह में यह मेरा है इस प्रकार के परिणामों के छोड़ने में असमर्थ होकर

प्रायःगृहस्थ स्त्री पुत्रादिक में मैं इनका भोक्ता हूँ, मैं इनका स्वामी हूँ, यह मेरे योग्य वस्तु है इस प्रकार के ममकार अहंकाररूप विकल्प जाल की परतंत्र से वशीभूत होकर विषयों में मूर्च्छित हो जाता है। इस श्लोक में प्रायः यह शब्द दिया है इससे यह सूचित होता है कि प्रायः सम्यग्दृष्टि भी चारित्र मोहनीय के वशीभूत होकर विषयों में मूर्च्छित हो जाते हैं, परन्तु कोई विरले सम्यग्दृष्टि जन्मान्तर में किये हुये रत्नत्रय के अभ्यास से भरतचक्रवर्ती आदि के समान चक्रवर्ती इन्द्रपद आदि का अनुभव करते हुये भी ''असतीनाथोपभोगन्याय'' से तत्त्वज्ञान देशसंयम आदि की तत्परता होने से नहीं भोगने वाले के समान है। यह व्यभिचार बताने के लिये प्रायः शब्द दिया गया है। असतीनाथ न्याय क्या है-

धात्रीबालासतीनाथ पद्मिनीजलवारिवत्।
दग्धरज्जुवदाभाति भुञ्जानोऽपि न पापभाक् ।।1

जिस प्रकार पालन पोषण करने वाली धाय में बच्चा आसक्त नहीं होता, अथवा पालने वाली धाय बच्चे में आसक्त नहीं होती है, वा व्याभिचारिणी स्त्री में उसके पति का विशेष प्रेम नहीं होता है, अथवा कमलिनी के पत्ते पर स्थित भी जल बिन्दु कमल में लिप्त नहीं होती है, उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि जीव विषयों को भोगता हुआ भी आसक्त नहीं होनेसे जली हुई रस्सी के समान पापभागी नहीं होता है। जिस प्रकार जली हुई रस्सी मे ऐंठ का केवल आकार दिखता है परन्तु वह किसी को बाँधने में समर्थ नहीं होता है, उसी प्रकार यद्यपि सम्यग्दृष्टि जीव विषयों को सेवन करता है परन्तु अरुचिपूर्वक सेवन करने से उसके विषय भोग कर्मों के बंध कराने में समर्थ नहीं हैं। अर्थात् जैसे मिथ्यादृष्टि जीव आसक्तिपूर्वक विषयों को सेवन करने से अनन्त संसार के कारणभूत मिथ्यात्वादि कर्मों का बंध करता है, वेसे सम्यग्दृष्टि जीव रूचिपूर्वक विषयों को सेवन न करने से अनन्त संसार के कारणभूत कर्मों का बन्ध नहीं करता है। इसलिये अनन्तानुबन्धी तथा मिथ्यात्वकृत पापकर्मों के बध का अभाव होने से सम्यग्दृष्टि जीव विषयों को भोगता हुआ भी अबन्धक कहा गया है; सर्वथा अबंधक नहीं है। अर्थात् कोई-कोई सम्यग्दृष्टि जीव अप्रत्याख्यानावरण चारित्रमोहनीय के तीव्र उदय से विषयों में मूर्च्छित हो जाते हैं और कोई-कोई तत्त्वज्ञानी देशव्रती सम्यग्दृष्टि देश संयम को पालन करने वाले वास्तव में विषयों को सेवन करना नहीं

चाहते हैं त्याज्य समझते हैं। फिर भी चारित्रमोह के उदय के वेग को सहन नहीं कर सकते हैं। इसलिये वेदना का प्रतिकार करने के लिये विषय सेवन में उनको प्रवृत्ति करनी पड़ती है। अतः उदासीन रूप से विषयों को सेवन करने वाले होने से उपचार से नहीं सेवन करने वाले के समान कहे जाते हैं, इस बात को बताने के लिये ग्रन्थकार ने ''प्रायः'' शब्द दिया है।

इस प्रकार गृहस्थों का लक्षण बता करके अब उनकी विषयों में प्रवृत्ति होने तथा नहीं होने में मूल कारण अज्ञान और ज्ञान है, उस अज्ञान वा ज्ञान के कारणभूत मिथ्यात्व और सम्यक्त्व के प्रभाव को कहते हैं-

नरत्वेऽपि पशूयन्ते मिथ्यात्वग्रस्तचेतसः।
पशुत्वेऽपि नरायंते सम्यग्त्वव्यक्तचेतनाः।।4।।

1. मुर्च्छित शब्द का अर्थ शरीरादि पर पदार्थ को अपना मानना।)

अन्वयार्थ- (मिथ्यात्वग्रस्तचेतसः) मिथ्यात्व से व्याप्त है चित्त जिन्हों का ऐसे मिथ्यादृष्टि जीव (नरत्वेऽपि) मनुष्य होकर के भी (पशूयन्ते) पशुओं के समान आचरण करते हैं और (सम्यक्त्वव्यक्तचेतनाः) सम्यक्त्व से युक्त है चेतना जिन्हों की ऐसे सम्यग्दृष्टि जीव (पशुत्वेऽपि) पशु होते हुए भी (नरायन्ते) मनुष्य के समान आचरण करते हैं।

भावार्थ-प्रायः मनुष्य विचार चतुर चित्त वाले होते हैं फिर भी जिन मनुष्यों का हृदय अतत्त्व श्रद्धान रूप मिथ्यात्व अर्थात् विपरीत श्रद्धान से व्याप्त है वे मनुष्यभव को प्राप्त करके भी हिताहित के विवेक से रहित होने से पशुओं के समान हैं और जो पर्याय की अपेक्षा पशु हैं, परन्तु जिनका हृदय तत्त्वार्थ श्रद्धान रूप सम्क्यत्व परिणामों से व्याप्त है अथवा जिनके हृदय में प्रशम, संवेग, अनुकम्पा और अस्तिक्य भाव रूप सम्पदा मौजूद है।

प्रशम-रागादि दोषों में मनोवृत्ति का नहीं जाना अथवा कषायों की मन्दता होना प्रशम भाव है।

संवेग-संसार शरीर और भोगों से विरक्त होना अथवा शारीरिक रोगादि रूप व्याधि को, मानसिक चिंतारूप आधि को और आगुन्तक आकस्मिक दुःखों को उत्पन्न कराने वाले तथा इन्द्रजाल के समान अस्थिर संसार से भयभीत होने को संवेग कहते हैं।

अनुकम्पा–सम्पूर्ण जीवों पर चित्तदयार्द्रता को अनुकम्पा कहते हैं।

अस्तिक्य– देव-शास्त्र -गुरु-व्रत और सात तत्त्वों में अस्तित्व बुद्धि वा श्रद्धान को आस्तिक्यभाव कहते हैं। इस प्रकार की परिणति वाले प्राणी जाति से तिर्यंच होते हुए भी सम्यक्त्व के महात्म्य से हेय उपादेय तत्त्व को जानने वाले होने से मनुष्यों के समान हैं।

सारांश- सम्यग्दृष्टि पशु होकर के भी श्रेष्ठ है, मिथ्यादृष्टि मनुष्य होकर भी हीन पशु के समान है। विद्या और अविद्या का मूल कारण क्रम से सम्यक्त्व और मिथ्यात्व है। इस श्लोक में पशु शब्द सामान्य तिर्यञ्चवायी है, फिर पंचेन्द्रिय संज्ञी पर्याप्त ग्रहण करना चाहिये। क्योंकि एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक तिर्चञ्चों को सम्यक्त्व नहीं हो सकता है।

सामान्य मिथ्यात्व का वर्णन कर विशेष रूप मिथ्यात्व के तीन भेदों का वर्णन करते हैं-

केषां चिदन्धतमसायतेऽगृहीतं ग्रहायतेऽन्येषाम्।
मिथ्यात्वमिह गृहीतं शल्यति सांशयिकमपरेषाम्।।5।।

अन्वयार्थ– (इह) इस लोक में (केषाञ्चित्) किन्हीं-किन्ही प्राणियों के (अगृहीतं) अगृहीत (मिथ्यात्वं) मिथ्यात्व (अन्धतम सायते) घोर अन्धकार के समान आचरण करता है। (अन्येषां) किन्ही दूसरों को (गृहीतं) गृहीत (मिथ्यात्वं) मिथ्यात्व (गृहायते) भूत के समान आचरण करता है। (अपरेषां) किन्ही को (सांशयिक) सांशयिक (मिथ्यात्वं) मिथ्यात्व (शल्यति) शल्य के समान दुःख देता है।।5।।

भावार्थ– मिथ्यात्व के तीन भेद हैं(गृहीत मिथ्यात्व (2) अगृहीत मिथ्यात्व और (3) सांशयिक मिथ्यात्व।

दूसरों के उपदेश के बिना अनादि सन्तान रूप से जो जीवों को तत्त्व में अरुचि रूप चेतना की परिणति को अगृहीत मिथ्यात्व कहते हैं। वह मिथ्यात्व एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के जीवों को होता है। जिस प्रकार गाढ़ अन्धकार से आच्छादित वस्तु के स्वरूप का अवलोकन नहीं होता है, उसी प्रकार अगृहीत मिथ्यात्व के उदय से जीवों को अपने हिताहित का विचार नहीं होता है, इसलिये इसकी उपमा गाढ अन्धकार की दी जाती है।

गृहीतमिथ्यात्व-गृहीतं परोपदेशादुपात्तं अतत्त्वाभिनिवेशलक्षणं चिद्वैकृतं गृहीतमिथ्यात्वं।

दूसरों के उपदेश से ग्रहण किये गए अतत्त्वाभिनिवेशरूप मिथ्यात्व को गृहीत मिथ्यात्व कहते हैं। अपने कुल परम्परा से आये हुये मिथ्या धर्म को स्वीकार करना भी गृहीतमिथ्यात्व है। यह संज्ञी पंचेन्द्रिय के होता है। इसकी उपमा आचार्य ने पिशाच की दी है। क्योंकि जिस प्रकार जब किसी पुरुष को भूत लग जाता है तब वह भूत उस पुरुष की स्वाभाविक दशा को भुला कर उसको नाना तरह से नचाता है, नाना प्रकार के विपरीत कर्मों को करवाता है उसी प्रकार यह गृहीतमिथ्यात्व जीवों को तत्त्वों में विपरीत एकान्त रूप से श्रद्धान कराता है। अतत्त्वों में तत्त्वों का श्रद्धान करा करके तदनुकूल अनुष्ठान कराता है। इसके उदय से जीव असन्मार्ग का ही पक्ष लेते हैं। गृहीत मिथ्यादृष्टि जीव एकान्त विपरीत आदि रूप से पदार्थों का श्रद्धान करके नाना प्रकार के धर्माभासरूप अनुष्ठान करते हैं।

सांशयिक मिथ्यात्व-मिथ्यात्व कर्मोदये सति ज्ञानावरणोदयविशेष वशात् किमिदं जीवादि वस्तु यथा जैनेरनेकान्तात्मकमुच्यते तथा स्यातुतस्विदन्यथेति चलिता प्रतीतिः संशयः संशये भव सांशयिकं।

मिथ्यात्व कर्म के उदय होने पर ज्ञानावरणी कर्म के विशेष उदय से क्या जीवादि वस्तु जिस प्रकार जैनाचार्यों ने अनेकान्तात्मक कही है उसी प्रकार से है या अन्यथा रूप से है अर्थात् जैन महर्षियों के द्वारा निरूपित यह अनेकान्त न जाने सत्य है या असत्य है, इस प्रकार की चलित प्रतीति को संशय कहते हैं और इस प्रकार के संशय में होने वाले श्रद्धान को सांशयिक मिथ्यात्व कहते हैं। इस मिथ्यात्व को ग्रन्थकार ने शल्य(बाण) की उपमा दी है, अर्थात् जिस प्रकार शरीर के भीतर घुसा हुआ बाण बहुत दुःख देता है वह जब तक शरीर के बाहिर नहीं निकलता है तब तक शांति नहीं लेने देता है, कुछ भी काम करो सदैव उसकी तरफ चित्त दुःख देता है अर्थात् जिन जीवों के सांशयिक मिथ्यात्व पाया जाता है, वे कोई भी अनुष्ठान करें परन्तु संशय होने के कारण उनका चित्त अनुष्ठात्व्य विषय की ओर न जाकर सदैव अशांत ही रहता है। इसलिये पदार्थों के यथार्थ अयथार्थ दोनों स्वरूपों में से किसी एक भी स्वरूप का निश्चय न कर सकने के कारण यह मिथ्यात्व नाना दुःखों का हेतु है

और प्राणियों को सदा व्यथित करता रहता है।

किन्ही-किन्ही आचार्यों ने मिथ्यात्व के पाँच भेद माने हैं और उनके उत्तर भेद 363 माने हैं। दौलतरामजी ने गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व के भेद से दो प्रकार का मिथ्यात्व माना है, परन्तु इन सब मिथ्यात्वों के भेद गृहीत अगृहीत इन दो भेदों के अथवा गृहीत अगृहीत और सांशयिक इन तीन भेदों में गर्भित होते है। गृहीत अगृहीत का दूसरा नाम निसर्गज और अधिगमज भी है। गृहीतमिथ्यात्व वा अधिगमज मिथ्यात्व क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी के भेद से चार प्रकार का है एकान्त, विपरीत, संशय, विनय और अज्ञान मिथ्यात्व के भेद से पाँच प्रकार का है। एकान्त-इदमेव, इत्थमेव धर्मिधर्मयोर्विषयेऽभिप्रायः पुमानेवेदं सर्वमिति नित्यः एवानित्य एवेति वाभिनिवेशः एकान्त मिथ्यादर्शनं भवति। धर्मधर्मि के विषय में यह ऐसा ही है, इस प्रकार ही है, नित्य ही है, अनित्य ही है, इस प्रकार एकान्तरूप अभिनिवेश श्रद्धान को एकान्त मिथ्यात्व कहते हैं।

सपरिग्रही निष्परिग्रही पुमान् स्त्री कवलाहारी केवली होते हैं आदि विपरीत मानना विपरीत मिथ्यात्व है। सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र मोक्ष के मार्ग हैं या नहीं इस प्रकार का संशय होना संशय मिथ्यात्व है।

सर्व देव, सर्व गुरु वन्दना करने योग्य है, सबको ही नमस्कार करना चाहिये ऐसा मानना विनयमिथ्यात्व है।

हिताहित की परीक्षा नहीं करना अज्ञान मिथ्यात्व है।

असिसदिसदं किरियाणं अक्किरियाणं च आहु चुलसीदी।
सत्तट्ठिण्णाणीणं वेणयियाणं तु बत्तीसं।

-गोम्मटसार कर्मकाण्ड गा. 873

क्रियावदियों के 180 भेद हैं, अक्रियावादियों के 84 भेद हैं, अज्ञानियों के 67 और विनयवादियों के 32 भेद हैं इस प्रकार 363 भेद वा तीन प्रकार के मिथ्यात्व वा दो प्रकार के मिथ्यात्व में गर्भित हो जाते हैं।

इसलिये ग्रन्थकार ने तीन प्रकार के मिथ्यात्व का वर्णन किया है, अर्थात् अभेद-विवक्षा से एक दो-तीन आदि भेद हैं और भेद विवक्षा से चार-पाँच 363 असंख्यात भेद हैं।

अब अज्ञान के प्रधान कारणभूत मिथ्यात्व के नाश करने में समर्थ जो सम्यग्दर्शन है, उस सम्यग्दर्शन के उत्पन्न होने की सामग्री को बताते हैं-

आसन्नभव्यता कर्म-हानिसंज्ञित्वशुद्धिभाक्।
देशनाद्यस्तमिथ्यात्वो जीवः सम्यक्त्वमश्नुते।।6।।

अन्वयार्थ- (आसन्नभव्यताकर्महानिसंज्ञिस्त्वशुद्धिभाक्)आसन्न भव्यपना, सम्यक्त्व का प्रतिबंधक मिथ्यात्वादि कर्मों का उपशम, क्षयोपशम और क्षय तथा संज्ञीपना और विशुद्धि परिणामों का सेवन करने वाला (देशनाद्यस्तमिथ्यात्वः) सच्चे गुरु के उपदेशादि से जिसका मिथ्यात्व नष्ट हो गया है, ऐसा (जीवः) जीव (सम्यक्त्वं) सम्यक्त्व को (अश्नुते) प्राप्त होता है।

भावार्थ-आसन्नभव्यता, कर्महानि, संज्ञित्व और विशुद्ध आदि परिणामों का धारण करनेवाला ये चार सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति में अन्तरंग कारण हैं। तथा सच्चे गुरु का उपदेश, जातिस्मरण, जिन प्रतिमा का दर्शन और वेदनादि सम्यग्दर्शन में बाह्य कारण हैं।

आसन्नभव्यता-जिस जीव में रत्नत्रय प्रकट होने की शक्ति है उसको भव्य कहते हैं। थोड़े ही काल में मोक्षपद प्राप्त करने वाला है उसको आसन्न कहते हैं। आसन्न जो भव्य वह आसन्नभव्य कहलाता है और आसन्नभव्यपने को आसन्नभव्यता कहते हैं।

कर्महानि-सम्यग्दर्शन के घातक मिथ्यात्व, सम्यक्त्वमिथ्यात्व, सम्यक्त्वप्रकृति और अनंतानुबंधी क्रोध मान, माया, लोभ, इन सात प्रकृतियों के क्षय, उपशम और क्षयोपशम होने को कर्महानि कहते हैं। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के निमित्त से कर्मों की शक्ति की अनुद्भूति को उपशम कहते हैं। वर्तमान निषेकों में सर्वघाति स्पर्द्धको काउदयाभावी क्षय तथा देशघातिस्पर्द्धकों का उदय और आगामी काल में उदय आने वाले निषेकों का सदवस्था रूप उपशम ऐसी कर्मों की अवस्था को क्षयोपशम कहते हैं। कर्मों की अत्यन्तिक निर्वृत्ति को क्षय कहते हैं।

यद्यपि यहाँ पर ''कर्म'' शब्द सामान्य रूप से सम्पूर्ण कर्मों का वाचक है तथापि यहाँ पर सम्यक्त्व का प्रकरण होने से सम्यक्त्व घाति कर्मों को ही ग्रहण करना चाहिये।

संज्ञित्व-शिक्षा क्रियालापोदशेग्रहात्विं संज्ञा संज्ञाऽस्यातीति संज्ञी संजिनो भावः संजित्वं।

वीर्यान्तराय और नोइंद्रियावरण कर्म के क्षयोपशम होने पर शिक्षा, क्रिया, आलाप, उपदेशादि ग्रहण करने की शक्ति को संज्ञा कहते हैं। इस प्रकार संज्ञा जिसमें हो वह संज्ञी है और संज्ञी के भाव को संज्ञित्व कहते हैं। जैसे कहा भी है-

मनोऽवष्टम्भतः शिक्षा क्रियालापोपदेशवित्।
येषां ते संजिनो मर्त्या वृषकीरगजादयः।।

शिक्षा-जिसके द्वारा हित का ग्रहण और अहित का त्याग किया जाय उसको शिक्षा कहते हैं।

क्रिया-बुद्धिपूर्वक हस्त पैर आदि चलाने को क्रिया कहते हैं।

आलाप-श्लोकादि के पढ़ने को आलाप कहते हैं।

उपदेश-वचन अथवा चाबुक आदि के द्वारा समझाये गये कर्तव्य कर्म को उपदेश कहते हैं।

मन के अवलम्बन से शिक्षा, क्रिया, आलाप और उपदेश के समझने वाले ज्ञान को संज्ञा कहते हैं। संज्ञा जिसमें हो वह संज्ञी कहलाता है- जैसे बैल, तोता, हाथी, सर्प, मनुष्य, देव, नारकी ,मयूर वगैरह।

शुद्धिभाक्विशुद्धपरिणामः शुद्धिः। पणिामों की विशुद्धि होना अर्थात कषायों की मन्दता होने को विशुद्धि कहते हैं।

देशना-सम्यग्गुरुपदेशः देशना-समीचीन गुरु के उपदेश मिलने को देशना कहते हैं।

आदि शब्द से जातिस्मरण, जिनबिम्बदर्शन, वेदना, देवर्द्धि दर्शन ग्रहण करना चाहिये। कार्योत्पत्ति में दो प्रकार के कारण होते हैं। उपादान कारण दूसरा निमित्त कारण। वस्तु में परिणमन करने की शक्ति को उपादान कारण कहते हैं और उपादान शक्ति के विकास में सहायक देने वाले या उसकी असमर्थता नाश कर शक्ति प्रदान करने वाले को निमत्त कहते हैं। वह निमित्त कारण दो प्रकार का है। अन्तरंग निमित्तकारण और बहिरंगनिमित्तकारण। सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति में उपादान कारण आत्मा स्वयं है। क्योंकि भव्यात्मा में ही दर्शन मोहादिका क्षयोपशमक्षयादि होता है। परन्तु उसकी उत्पत्ति में सहकारी कारण अवश्य होना चाहिये, क्योंकि एक कारण से

कार्य की उत्पत्ति नहीं हो सकती। वह सहकारी कारण (निमित्तकारण) दो प्रकार का है। आसन्नभव्यता, कर्म हानि, संज्ञित्व, विशुद्धपरिणाम यह सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति में अंतरंग कारण हैं। शास्त्रश्रवण आदि बहिरंग कारण है। इस प्रकार अंतरंग और बहिरंग करण कलापों के मिलने पर भव्यजीव अनादिकालीन मिथ्यात्व का नाश कर सम्यग्दर्शन को प्राप्त करता है।

आचार्यों ने सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति में कारणभूत पाँच लब्धियाँ कहीं हैं, उन पाँच लब्धियों का संकेत भी ग्रन्थकर्त्ता ने इस श्लोक में किया है। क्षयोपशमलब्धि,, विशुद्धिलब्धि, देशनालब्धि, प्रायोग्यलब्धि और करणलब्धि के भेद से लब्धियाँ पाँच प्रकार की हैं। क्षयोपशम-अशुभ कर्मों के अनुभाग की हानि होना अथवा स्थावर पर्याय से निकलकर संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त पद प्राप्त होने को क्षयोपशमलब्धि कहते हैं। विशुद्धिलब्धि-कषायों की मन्दता वा शुभ कर्मों के अनुभाग के वृद्धि को विशुद्धि लब्धि कहते हैं। देशनालब्धि-गुरुपदेश प्राप्त होने को देशनालब्धि कहते हैं। प्रयोग्यलब्धि-आयु कर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों की स्थिति को अंतःकोटाकोटी प्रमाण करने को प्रायोग्य लब्धि कहते हैं। ये चारों लब्धियाँ इस जीव को यद्यपि अनन्त बार हुई हैं, परन्तु जब तक पाँचवी करणलब्धि नहीं हुई हो, तब तक इस जीव को सम्यक्त्व का लाभ नहीं होता है। क्योंकि करणलब्धि के बिना सम्यक्त्व की प्राप्ति नहीं होती है, ऐसा नियम है। 'करण' नाम परिणामों का है। जब मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व के सम्मुख होता है उस समय उसके परिणाम अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप होते हैं।

अंधःकरण-जिस करण में उपरितन समयवर्ती तथा अधस्तन समयवर्ती जीवों के परिणाम सदृश तथा विसदृश होते हों उसे अधःकरण कहते हैं। अपूर्वकरण-जिनमें उत्तरोत्तर अपूर्व ही अपूर्व परिणााम होते जावें अर्थात् भिन्नसमयवर्ती जीवों के परिणाम सदा विसदृश ही हों और एक सयमवर्ती जीवों के परिणाम विसदृश भी हों और सदृश भी हों उसको अपूर्वकरण कहते हैं। पहिले अधःकरण में गुणश्रेणि, गुणसंक्रम, स्थितिकांडघात और अनुभागकांडघात नहीं होता है। परन्तु इस कारण में समय-समय में अनंतगुणी विशुद्धता बढ़ती आती है। इसलिये इसमें गुणश्रेणि, गुणसंक्रम, स्थितिकांडघात और अनुभागकांडघात होता है। इन चारों का स्वरूप विस्तार से लब्धिसार से जानना

चाहिये। अनिवृत्तिकरण-जिसमें भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम विसदृश ही हों और एक समयवर्ती जीवों के परिणाम सदृश ही हों, उसको अनिवृत्तिकरण कहते हैं।

ये तीनों प्रकार के परिणााम उत्तरोत्तर अधिक विशुद्धि होते जाते हैं। इसलिये इनमें भेद माना गया है। इन तीन करणों के करने के बाद ही सम्यक्त्व होता है पहिले नहीं। इसलिये क्षयोपशमलब्धि, विशुद्धिलब्धि देशनालब्धि और प्रयोगिकलब्धि यह चार लब्धि भव्य और अभव्य के समान है। परन्तु करणलब्धि ''भव्य'' के ही होती है और उसके होने के बाद में सम्यक्त्व नियम रूप से होता ही है।

इस समय सम्यक्त्व की सम्पूर्ण सामग्रियों के होने पर भी सम्यगुरूपदेश की परम आवश्यकता है। क्योंकि गुरुपदेश (द्रव्यश्रुत) के बिना सम्यक्त्व नहीं हो सकता है। कोई शंका करे कि निसर्गज सम्यक्त्व में गुरुपदेश कार्यकारी नहीं है। निसर्गज सम्यक्त्व गुरूपदेश बिना हो सकता है, ऐसा कहना शास्त्रोक्त नहीं है। क्योंकि निसर्गज सम्यक्त्व में भी परम्परा से गुरुपदेश कारण होता ही है। बिना जिनसूत्र सुने किसी भी जीव को सम्यक्त्व नहीं हो सकता। सो ही आचार्य सोमदेव ने यशस्तिलक वा तत्त्वार्थवृत्ति में कहा है-'नैसर्गिकमपि सम्यग्दर्शनं गुरोरक्लेश कारित्वात्स्वाभाविकमुच्यते न तु गुरुपदेशं बिना प्रायेण जायते, जिसमें गुरुओं को विशेष परिश्रम न करना पड़े थोड़े में ही शिष्य समझ जाय उसको निसर्गज सम्यक्त्व कहते हैं। सम्यग्दर्शन सर्वथा गुरु के उपदेश बिना नहीं होता है।

समीचीनोपदेश देने वाले इस पंचम काल में दुर्लभ हैं, ऐसा खेद प्रगट करते हुए ग्रन्थकार कहते हैं।

कलिप्रावृषि मिथ्यादिङ् मेघच्छन्नासु दिक्ष्विह।
खद्योतवत्सुदेष्टारो हा द्योतन्ते क्वचित् क्वचित्।।7।।

अन्वयार्थ-(हा) बड़े दुःख की बात है कि (इह) इस भरम क्षेत्र में (कलिप्रावृषि) पंचम कालरूपी वर्षाकाल में (दिक्षु) सदुपदेशरूपी दिशाओं के (मिथ्यादिङ् मेघच्छन्नासु) मिथ्या उपदेशरूपी बादलों से व्याप्त हो जाने पर (सदुष्टारः) सदुपदेश देने वाले गुरु (खद्योतवत्) जुगनुओं के समान (क्वचित् क्वचित्) कहीं कहीं पर (द्योतन्ते) दीखते हैं। अर्थात् सब जगह नहीं मिलते हैं।

भावार्थ- इस श्लोक में 'हा' शब्द ग्रन्थकर्ता के अन्तस्ताप को प्रकट करता है

खेदसूचक है। जिस प्रकार वर्षा काल में बादलों से दशोदिशाओं के आच्छादित हो जाने पर सूर्य चन्द्र आदि के प्रकाश का अभाव हो जाता है, ऐसी दशा में कहीं-कहीं पर खद्योत चमकते हुए दृष्टिगोचर होते हैं, उसी प्रकार इस विकराल पंचम कालरूपी वर्षा काल में सर्वथा एकान्तवादी, बौद्ध, नैयायिक आदि मेघों से अनेकान्तवादी जिनधर्मरूपी दिशाओं के आच्छादित हो जाने से सम्पूर्ण जीवादि तत्त्वों का समीचीन उपदेश देने वाले सच्चे गुरु इस भरत क्षेत्र में कहीं-कहीं जुगनुओं के समान विरले दृष्टिगोचर होते हैं। चतुर्थ काल में जैसे जगह-जगह सुलभतया केवली, श्रुतकेवली मिलते थे, वैसे केवली, श्रुतकेवलीरूपी सूर्य का इस पंचम काल में अभाव है। इसलिए सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति का निमित्तभूत सदुपदेश का अभाव हो जाने से सम्यग्ज्ञान का अभाव सा हो गया है, इस बात के दुःख को प्रकट करते हुए ग्रन्थकार ने ''हा'' शब्द का प्रयोग कर अपने अन्तस्ताप को प्रदर्शित किया । इस पंचम काल में सर्वत्र मिथ्यामार्ग का ही प्रचार हो रहा है। सांसारिक भोग के उपदेश देने वाले पण्डितों का मिलना सुलभ है। परन्तु वीतरागता का उपदेश देने वाले सद्गुरु दुर्लभ हैं, सो ही लिखा है-

विद्वन्मन्यतया सदस्यतितरामुद्दण्डवाग्डंबराः,
शृङ्गारादिरसैः प्रमोदजनकव्याख्यानमातन्वते।
ये ते च प्रतिसद्म संति बहवो व्यामाहविस्तारिणो,
येभ्यस्तत्परमात्मतत्त्वविषयं ज्ञानं तु ते दुर्लभाः।।

कुधर्मी सुधर्मी का स्वरूप व फल

(चालः- 1.इतनी शक्ति हमें देना...2. भातुकली...3.जिन्दगी इक सफर...)

वह है मिथ्यादृष्टि-कुधर्मी, जिनकी होती सदा बाह्य दृष्टि।
न जानता है सत्य-असत्य, न जानता आत्मा परमात्मा।।(स्थायी)
शरीर को ही स्व-स्वरूप(मैं) माने, मैं हूँ धनी गरीब काला-गोरा।
नर-नारी बाल व वृद्ध दीन, साक्षर-निरक्षर ग्रामीण-शहरी।।
रागी-द्वेषी-कामी-क्रोधी-मोही, ईष्यालु-झगडालू निन्दक अज्ञानी।
देशी-विदेशी नारकी पशु, ऐसा आत्मस्वरूप माने कुज्ञानी।।(1)

सत्ता-सम्पत्ति विभूति डिग्री, जन्म-मरण व सुख-दुःखादी।

शत्रु-मित्र व अपना-पराया, इन्हें अपना माने सो कुदृष्टि।।
ये सभी है कर्मज-विभाव, ये नहीं है स्वशुद्ध स्वरूप।
स्वशुद्ध स्वरूप है तो चैतन्य, अनन्त ज्ञान-दर्शन-सुख वीर्य।।(2)

ऐसी होती है जिनकी श्रद्धा, वह है सम्यग्दृष्टिसुज्ञानी।
देव-शास्त्र-गुरु के जो श्रद्धानी, वह है सुदृष्टि तत्वार्थज्ञानी।।
अष्टगुण व अष्ट अंगधारी, सप्तमद सप्तभय परिहारी।
मैत्री-प्रमोद-करुणा-साम्यधारी, गुणगणी प्रशंसा निन्दा परिहारी।।(3)

संसार शरीर भोग विरक्त, कमलदल यथा जल से निर्लिप्त।
अन्याय अत्याचार से विरक्त, दयादानपूजा सेवा रक्त।।
उत्तरोत्तर भाव-विशुद्धि से, श्रावक से बनता है श्रमण।
आत्मध्यान-ज्ञान-समता से, कर्मनाश से पाता निर्वाण।।(4)

इससे विपरीत होता कुदृष्टि, आत्मविशुद्धि बिन भाव विकृति।
जिससे अनन्त दुःखों को पात, स्वकुकृत्यों का फल भोगता।।
यह है संक्षेप से धर्मी-अधर्मी, इसे श्रद्धान करे सम्यग्दृष्टि।
मिथ्यादृष्टि इसे न मानता 'सूरी कनक' को स्वआत्मा भाता।।(5)

भीलूड़ा दि. 20.02.2019 प्रातः 10:33

सम्यक्त्व रहित जीव का लक्षण

उग्गो तिव्वो दुट्ठो दुब्भावो दुस्सुदो दुरालावो।
दुम्मदरदो विरूद्धी सो जीवो सम्मउम्मुक्को।। 43 रयण.
पद्य- उग्र-तीव्र-दृष्ट-दुर्भाव-दुश्रुत, दुर्भाषण, दुर्मद रत (जीव)।
होता है सम्यक्त्व रहित जो विरोध से सहित।।(1)

क्षुद्र स्वभावी व दुर्भावना युक्त जीव सम्यक्त्व हीन हैं

खुद्दो रुद्दो कट्ठो अणिट्ठपिसुणा सग्गत्थि असूयो।
गायण जायण भंडण दुस्सुणसीलो दु सम्मउम्मुक्को।। 44 रयण.
पद्य-क्षुद्र, रौद्र-रूष्ट-अनिष्ठ-पैशुन्य, अहंकारी-ईर्ष्या युक्त।

गायक, याचक, कलह युक्त, दूषण युक्त वह सम्यक्त्व मुक्त।।(1)

जिन-धर्म विनाशक जीवों के स्वभाव

वाणर गद्दह साण गय वग्ध वराह कराह।
पक्खि जलूय सहावणर जिणवरधम्म विणासु।। 45 रयण.
पद्य-वानर, गर्दभ, कुत्ता, हाथी, व्याघ्र, शूकर, ऊँट, पक्षी।
जोंक स्वभाव वाले मानव होते हैं जिनेन्द्र धर्म ध्वंशी।।(1)

सम्यक्त्व की हानि का कारण

कुतव कुलिंग कुणाणी कुवय कुसीले कुदंसण कुसत्थे।
कुणिमित्ते संथुय थुई पसंसण सम्महाणि होइ णियमं।। 46 रयण.
पद्य-कुतप, कुलिंग, कुज्ञानी, कुव्रत, कुशील, कुदर्शन, कुशास्त्र।
कुनिमित्त से स्तुति, प्रशंसा करे जो, सो सम्यक्त्व करे विनाश(1)

निर्णय स्वयं का

सम्मत्तगुणाई सुग्गइ मिच्छादो होइ दुग्गइ णियमा।
इदि जाण किमिह बहुणा जं ते रुच्चइ तं कुण हो।।66 रयण.
पद्य- सम्यक्त्व गुण से सुगति मिथ्यात्व से नियम से दुर्गति।
ऐसा जानकर जो तुम्हें रूचे सो करो क्या अधिक कहने से।।
समीक्षा- दीपक सम होते आध्यात्मिक गुरु जो स्व-पर प्रकाशी है।
किन्तु होते हैं समताधारी किसी को भी न करते विवश है।।
विवशता से न होता है धर्म, धर्म होता आत्मविश्वास से।
पर को विवश करने से समता-शान्ति रूपी धर्म नशता है।।

मोही जीव के भवतीर नहीं

मोह ण च्छिज्जइ अप्पा दारूण कम्मं करेइ बहुवारं।
णहु पावइ भवतीरं किं बहु दुक्खं वहेइ मूढमइ।। 67 रयण.
पद्य- हे! मूढात्मा! मोह त्यागे बिन बहुत किया तू दारूण भाव।
किन्तु न पाया तू संसार पार क्यों सह रहा है बहु दुःख।।
समीक्षा- मोह त्याग बिन दारूण तप-त्याग से भी नहीं मिलता है मोक्ष ।

किन्तु कठोर तप-त्याग से केवल मिलते इह-पर-लोक में दुःख।।
अतएव आत्म श्रद्धा प्रज्ञा सहित यथा शक्ति तप-त्याग श्रेष्ठ।
अन्यथा आत्मश्रद्धा प्रज्ञा रहित कठोर तप-त्याग से मिले दुःख।।

मिथ्यात्व के नाश बिना मोक्ष नहीं

मोक्खणिमित्तं दुक्खं वहेइ परलोयदिट्ठितणुदिहि।
मिच्छाभाव ण च्छिज्जइ किं पावइ मोक्खसोक्खं हि।।69 रयण.
पद्य-मोक्ष निमित्त दुःखसहन करे परलोक (स्वर्ग) व शरीर में दृष्टि।
किन्तु मिथ्याभाव नहीं त्यागे क्या पायेगा मोक्ष शान्ति (सुख)।।
समीक्षा- मिथ्याभाव त्यागे बिना मोक्ष न मिले दुःख सहने से।
नारकी सम केवल कष्ट सहन मात्र से ही नहीं मिले स्वर्ग मोक्ष।।

बामी को पीटने से क्या लाभ

ण हु दंडइ कोहाइं देहं दंडेइ कहं खवइ कम्मं।
सप्पो किं मुबइ तहा वम्मिउ मारिउ लोए।। 70. रयण.
पद्य-क्रोधादि को दंडित किये बिना देह दण्ड से न कर्मक्षय।
बामी को मारने मात्र से सर्प क्या मरेगा लोक में।।
समीक्षा- कर्म क्षय होता है समता-शान्ति व आत्मविशुद्धि से।
इसके अतिरिक्त केवल देह दण्ड से न होता कर्मक्षय कभी।।
इससे शिक्षा मिले भाव विशुद्धि ही मोक्ष के कारण।
इस हेतु ही धर्म करणीय केवल देह दण्ड न करणीय।।
सन्दर्भ-

दंसणमूलो धम्मो, उपइट्ठो जिणवरेहिं सिस्साणं।
तं सोऊण सकण्णे, दंसणहीणो ण वंदिव्वो।।2।। दर्शनपा.

श्री जिनेंद्र भगवान् ने शिष्यों के लिए दर्शनमूल धर्म का उपदेश दिया है इसलिए उसे अपने कानों से सुनो। जो सम्यग्दर्शन से रहित है वह वंदना करने योग्य नहीं है।

दंसणभट्ठा भट्ठा, दंसणभट्ठस्स णत्थि णिव्वाणं।
जिज्झंति चरियभट्ठा, दंसणभट्ठा ण सिज्झंति।।3।।

जो सम्यग्दर्शन से भ्रष्ट हैं वे ही वास्तव में भ्रष्ट हैं, क्योंकि सम्यग्दर्शन से भ्रष्ट मनुष्य को मोक्ष प्राप्त नहीं होता। जो सम्यक्चारित्र से भ्रष्ट हैं वे सिद्ध हो जाते हैं परंतु जो सम्यग्दर्शन भ्रष्ट है वे सिद्ध नहीं हो सकते।।

सम्मत्तरयणभट्ठा, जाणंता बहुविहाइं सत्थाइं।
आराहणाविरहिया, भमंति तत्थेव तत्थेव।।4।।

जो सम्क्यत्वरूपी रत्न से भ्रष्ट हैं वे बहुत प्रकार के शास्त्रों को जानते हुए भी आराधनाओं से रहित होने के कारण उसी संसार में भ्रमण करते रहते हैं।।

सम्मत्तविरहियाणं, सुट्ठु वि उग्गं तवं चरंताणं।
ण लहंति बोहिलाहं, अवि वाससहस्सकोडीहि।।5।।

जो मनुष्य सम्यग्दर्शन से रहित हैं वे भले ही करोड़ों वर्षों तक उत्तमतापूर्वक कठिन तत्पश्चरण करें तो भी उन्हें रत्नत्रय प्राप्त नहीं होता है।

सम्मत्तणाणदंसणबलवीरियवड्ढमाण जे सव्वे।
कलिकलुसपावरहिया, वरणाणी होंति अइरेण।।6।।

जो पुरुष सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, बल और वीर्य से वृद्धि को प्राप्त हैं तथा कलिकाल संबंधी मलिन पाप से रहित है वे सब शीघ्र ही उत्कृष्ट ज्ञानी हो जाते हैं।

सम्मत्तसलिलपवहे, णिच्चं हियए पवट्टए जस्स।
कम्मं वालुयवरणं, बंधुच्चिय णासए तस्स।।7।।

जिस मनुष्य के हृदय में सम्क्यत्वरूपी जल का प्रवाह निरंतर प्रवाहित होता है उसका पूर्व बंध से संचित कर्मरूपी बालू का आवरण नष्ट हो जाता है।

जे दंसणेसु भट्ठा, णाणे भट्ठा चरित्तभट्ठा य।
ऐदे भट्ठविभट्ठा, सेसंपि जणं विणासंति।।8।।

जो मनुष्य दर्शन से भ्रष्ट हैं, ज्ञान से भ्रष्ट हैं और चारित्र से भ्रष्ट हैं वे भ्रष्टों से भ्रष्ट हैं- अत्यंत भ्रष्ट है तथा अन्य जनों को भी भ्रष्ट करते हैं।

जो कोवि धम्मसीलो, संजमतवणियमजोयगुणधारी।
तस्स य दोस कहंता, भग्गा भग्गत्तणं दिंति।।9।।

जो कोई धर्मात्मा संयम, तप, नियम और योग आदि गुणों का धारक है उसके

दोषों को कहते हुए क्षुद्र मनुष्य स्वयं भ्रष्ट हैं तथा दूसरों को भी भ्रष्टता प्रदान करते है।

जह मूलम्मि विणट्ठे, दुमस्स परिवार णत्थि परवड्ढी।
तह जिणदंसणभट्ठा, मूलविणट्ठा ण सिज्झंति।।10।।

जैसे जड़ के नष्ट हो जाने पर वृक्ष के परिवार की वृद्धि नहीं होती वैसे ही जो पुरुष जिनदर्शन भ्रष्ट है वे मूल से विनष्ट हैं- उनका मूल धर्म नष्ट हो चुका है, अतः ऐसे जीव सिद्ध अवस्था को प्राप्त नहीं हो पाते हैं।

जह मूलाओ खंधो, साहापरिवार बहुगुणो होई।
तह जिणदंसणमूलो, णिद्दिट्ठो मोक्खमग्गस्स।।11

जिस प्रकार वृक्ष की जड़ से शाखा आदि परिवार से युक्त कई गुणा स्कंध उत्पन्न होता है उसी प्रकार मोक्षमार्ग की जड़ जिनदर्शन-जिनधर्म का श्रद्धान है ऐसा कहा गया है।

सम्यग्दृष्टि जीवों की दुर्लभता

अज्जवसप्पिणि भरहे पंचमकाले मिच्छ पुव्वया सुलया।
सम्मत्तपुव्व सायारणयारा दुल्लहा होंति।। 59 रयण.
अभी अवसिर्पणी भरत क्षेत्र में मिथ्यादृष्टि जीव सुलभ।
सम्यक्त्वपूर्वक श्रावक व श्रमण होते हैं दुर्लभ।।

अवसर्पिणी काल में भी धर्मध्यान होता है

अज्जवसप्पिणि भरहे धम्मज्झाणं पमाद रहियमिदि।
जिणुदिट्ठं णहुमण्णइ मिच्छादिट्ठी हवे सोहु।। 60 रयण.
आज भरत क्षेत्र में अवसिर्पणी में होता है धर्म ध्यान अप्रमत्त में।
जिनेन्द्र देव कहा हुआ जो न मानता वह होता है मिथ्यादृष्टि।।
समीक्षा- अभी भरत क्षेत्र में होते हैं मुनि छट्ठें-सप्तम गुणस्थान में।
वे करते हैं धर्मध्यान ऐसी जिनवाणी को जो न माने सो मिथ्यात्वी।।

शुभ भाव रूप परिणाम

दव्वत्थकायछप्पण तच्चपयत्थेसु सत्तणवएसु।
बंधणमोक्खे तक्कारणरूवे वारसणुवेक्खे।। 64 रयण.

रयणत्तयस्सरूवे अज्जाकम्मे दयाइसद्धम्मे।
इच्चेवमाइगो जो वट्टई सो होइ सुहभावो।। 65 रयण.
पद्य-षट् द्रव्य, पंचास्तिकाय, सप्त तत्त्व व नव पदार्थों में।
बन्ध मोक्ष व उसके कारण में बारह अनुप्रेक्षाओं में।
पद्य -रत्नत्रय स्वरूप में दानादि आर्य कर्मों में दयादि सद्धर्म में।
इत्यादि उक्त भावों मे जो वर्तता है वह शुभ भाव है।
समीक्षा- जितने अंशों में अशुभ होता दूर उतने अंशों में शुभ भाव।
जितने अंशों में शुभ भाव होता उतने अंशों में नहीं अशुभ भाव
सभी अशुभ भाव होते नकारात्मक भाव सभी शुभ भाव सकारात्मक।
अशुभ त्याग से शुभ भाव होते जिससे होता आत्मविकास।।

क्रिएटिविटी बढ़ाने के लिए अपनाएं साइंटिफिक तरीके

वर्क प्लेस में आप अधिक से अधिक सक्रिय रहें, यह आपके रचनात्मक होने पर निर्भर करता है। अगर आप खुद को सकारात्मक और सक्रिय रखना चाहते हैं तो आपको लगातार कुछ प्रयोग करने होंगे। चूंकि एक जैसे और उबाऊ काम आपको जल्दी थका देते हैं और आप अपनी क्षमता के अनुसार काम नहीं कर पाते, ऐसे में कुछ वैज्ञानिक तरीके हैं जो आपके अपने आप में सक्रिय व रचनात्मक बने रहने में मदद कर सकते हैं।

खुद को चुनौतियां दें: नई स्थितियों में खुद को अधिक से अधिक चुनौतियां देते रहें, साथ ही अपने आपको परखते भी रहें। इस तरह आप एनर्जेटिक और क्रिएटिव बने रहेंगे। ऐसा करना इसलिए भी जरूरी है,क्योंकि चुनौतियां हमारे दिमाग को उत्तेजित करके नए आइडिया या सॉल्यूशन्स के लिए तैयार करती हैं। जैसे वर्कप्लेस पर आप किसी काम को कम समय में करने की चुनौती को पूरा करके भी सक्रिय बने रह सकते हैं।

रचनात्मक अभ्यास करें : रिसर्च कहते है कि जब आप हमेशा क्रिएटिव सोचने की कोशिश करते हैं, तो यह आपकी आदत में शामिल हो जाता है और आप

हमेशा कुछ नया सोच पाते हैं। जैसे आप नियमित एक्सरसाइज से अपनी मसल्स को मजबूत बना सकते हैं।

डिस्ट्रैक्शन्स से दूर रहेः अपने दिन का कुछ समय फोन और नोटिफिकेशन्स से दूर रहकर बिताएं। ध्यान रखें कि इस दौरान आप ईमेल, सोशल मीडिया आदि से भी दूरी बनाते हुए क्रिएटिव सोचने पर फोकस कर पा रहे हों।

आसपास बदलाव करते रहे : अमेरिकन इंस्ट्रीट्यूट फॉर बिहेवियरल रिसर्च एण्ड टेक्नोलॉजीमें सीनियर रिसर्च साइकोलॉजिस्ट रॉबर्ट एप्सटिन के अनुसार, हम चारों और भौतिक और सामाजिक बदलाव होते देखना चाहते हैं। डेटा भी पुष्टि करते हैं कि जब भी हम अपने आसपास कुछ बदलाव करते हैं, तो हमारी रचनात्मकता भी सक्रिय हो जाती है।

लक्ष्य हासिल करने में मददगार है डोपामाइन

कई बार ऐसा होता है कि हम अपने वर्क एनवायरनमेंट के चलते अपने लक्ष्य हासिल करने में सफल नहीं हो पाते, लेकिन अच्छी खबर यह है कि इसके लिए आप सही हार्मोन्स को ट्रिगर करके आगे बढ़ सकते हैं। उदाहरण के लिए डोपामाइन को लक्ष्यों से जुड़ा हार्मोन समझा जाता है। यह शरीर में जितना ज्यादा होगा, आप उतने ही ज्यादा सजग,केंद्रित, रचनात्मक और एकाग्र रहेंगे। यह हार्मोन लक्ष्य प्राप्त करने व पुरस्कृत होने के लिए प्रेरित करता है जिससे आप सफल होने के प्रयास करते हैं। शरीर में डोपामाइन का स्तर बढ़ा रहे, इसके लिए जानें कि आपको कौनसे पुरस्कार अच्छे लगते हैं और फिर उन्हें अपने लक्ष्यों से जोड़ें।

ऑक्सीटोसिन बढ़ाता है निष्ठा व भरोसा

ऑक्सीटोसिन से आप अपने कार्यस्थल पर निष्ठा, भरोसा, हमदर्दी और उदारता बढ़ा सकते हैं। अपने अंदर इस हार्मोंन का स्तर बढ़ाने के लिए दफ्तर में लोगों की मदद करें, उन्हें प्रोत्साहन दें या फिर तारीफ भी कर सकते हैं।

बेहतर नेतृत्व के लिए सेरोटोनिन

यह हार्मोन इच्छाशक्ति, आत्म सम्मान, संतुष्टि, आत्मविश्वास और उद्देश्य की भावना को बढ़ाता है। यह तनाव भी कम करता है। धूप का सेवन करने से या

धन्यवाद का इस्तेमाल करने से इसका स्तर बढ़ाया जा सकता है।

संकल्पवान और खुश बनाए रखता है एंडोर्फिन

इसका सम्बन्ध आपके संकल्पों और खुशी से है। यह आपके मूड को अच्छा करने के साथ ही फिजिकल और मेटल तनाव को कम करता है। यह दिमाग के कार्य करने की क्षमता बढ़ाता है। इसका स्तर बढ़ाने के लिए मजेदार गतिविधियों में भाग लें। जब आप हंसते हैं, तो एंडोर्फिन तुरंत रिलीज होता है।

भाव हिंसक ही आत्महत्यारे-(पु. सिद्ध के आधार से)

विविध प्रकार के आत्महत्यारे व पर हत्यारे

(आत्महत्या सहित ही पर हत्या करते हैं)

(आत्महत्या बिन पर हत्या असंभव)

(चालः- 1. आत्मशक्ति...2. क्या मिलिए...)

आत्महत्यारे हैं रागी-द्वेषी-मोही, आत्मपरिणाम हिंसा से।
आत्म परिणाम हिंसा ही प्रमुख हिंसा, भाव हिंसा सहित ही द्रव्य हिंसा।।
आत्मपरिणाम हिंसा ही प्रमुख हिंसा, भाव हिंसा सहित ही द्रव्य हिंसा।।
आत्मपरिणाम-हिंसन हेतुत्वात्सर्वमेव हिंसैतत्।
अमृत वचनादि-केवलमुदाहृतं शिष्य-बोधाय।।(42) पु. सिद्धि)
राग-द्वेष-मोह व काम-क्रोध-मद, ईर्ष्या-घृणा व तृष्णा से।
आत्मपरिणाम होता मलीन, तथाहि परनिन्दा अपमान से।।(1)

यत्खलुकषाय-योगात् प्राणानां द्रव्य भावरूपाणां।
व्यपरोपणस्य करणं सुनिश्चित भवति सा हिंसा।।(43)
ऐसे आत्मपरिणाम हिंसा के कारण, जीव करते हैं स्व-पर हिंसा।
पर हिंसा रहित भी भाव हिंसक ही, निश्चय से होता महाहिसंक।।
निगोदिया जीव न करते बाह्य पाप, हिंसा-झूठ-चोरी-कुशील-परिग्रह।
असिमसिकृषिवाणिज्यसेवा रहित, भाव कलुष से वे करते महान् पाप।।(2)

क्रूर सिंह से भी होते वे महान् पापी, बिना शिकार व मांस खाये बिना।

नारकी से भी होते वे महान् पापी, आक्रमण युद्ध हत्या किये बिना।।।
यथा तन्दुलमत्स्य जीव खाये बिना, महामत्स्य सम जाता सप्तम नरक।
बिना जीव मारे भी धीवर (डाकू) हिंसक, द्रव्यहिंसा युक्त भी कृषक (डॉक्टर)
(अहिंसक (3)

भावहिंसा रहित मुनिश्वरों से, ईर्यापथ समिति से जो मरते जीव।
उससे उन्हें हिंसात्मक पाप न होता, युक्ताचरण से युक्त होने से।।
युक्ताचरणस्य सतो रागाघावेशमंतेरणाणि।
न हि भवतिजातु हिंसा; प्राणव्यपरोपणादेव।।(45)
कषाय से पहले मोही स्व-हत्या करे; द्रव्य स्व-पर हत्या को किये बिना।
शुद्ध भाव से पूर्व ज्ञानी स्व-हित करे, बाह्य दिखावा धर्म किये बिना।।
व्युत्थानावस्थायां, रागादीनां वश प्रवृत्तनाम्।
म्रियतां जीवो मा वा धावत्यग्रे ध्रुवं हिंसा।।(46)
यस्मात्सकषाय सन् हन्त्यात्मा- प्रधममात्मनाऽऽत्मानम्।
पश्चाज्जायेत न वा हिंसा प्राव्यंतराणां तु ।।(47)
ज्ञानी-वैरागी-मुमुक्षु सन्तों को, पाप न बन्धे परिवार त्याग से।
वे न होते पलायनवादी प्रमादी, (अतः) परिवार दुःखी से न होते अपराधी
अन्याय अत्याचार व शोषण ठगी, धनार्जन से जो परिवार पालन करे।
तो भी वह होता है महान् पापी, भावहिंसक भी वह होने से।।(5)

आरंभ-परिग्रह व भोगोपभोग से, श्रावक, व्रती को भी बन्धता है पाप।
उस पाप के प्रक्षालन हेतु भी, श्रावक करते हैं पूजादानादिक।।
दानपूजादि में भी होता किंचित् पाप, वह पाप न होता संसार कारण।
किन्तु भाव हिंसा से जो होता है पाप, वह पाप होता है संसार कारण।।(6)

अपरिहार्य बड़ा पाप से भी, छोटा भाव पाप होता है विशाल पाप।
पांचों समिति से जो होते हैं पाप, एक छोटा भाव पाप से भी छोटा पाप।
मद्यमान से जो होता है पाप, उससे भी महापाप है मोहमद।
मद्य का नशा तो रहता कुछ क्षण, मोहमद का नशा अनन्त काल।। (7)

आतन्कवादी व क्रूर हिंसक भी, मद्यपान बिन भी करते हिंसा।
मोहमहामद पियो अनादि (से) भूल आपको भरमत वादि।।
आत्मश्रद्धान ज्ञान आचरण से, समता-शान्ति आत्मविशुद्धि से।
होती है भावहिंसा जीवों में, 'कनक' चाहे भाव अहिंसा आत्मा में।(से)।।(8)

रागादि भावहिंसा समेत, द्रवित त्रस थावर मरण खेत।
जे क्रिया तिन्हें जानहु कुधर्म, तिन सरधै जीव लहै अशर्म।। छह ढाल।
जो ख्याति-लाभ-पूजादि चाह, धरि करन विविध देहदाह।
आतम अनात्म के ज्ञान हीन, जे जे करनी तन करन छीन।।
जो भाव मोहतैं न्यारे, दृग-ज्ञान-व्रतादिक सारे।
सो धर्म जबै जिय धारै, तब ही सुख अचल निहारे।।

भीलूड़ा दि. 15.02.2017 मध्याह्न 01:40 (केशलोंच के दिन)

एकदेश चारित्र और सकल चारित्र के स्वामी

निरतः कात्स्न्र्य-निवृत्तौ भवतियातिः समयसारभूतोऽयम्।
यात्वेकदेश विरतिः निरतस्तस्यमुपासको भवति।।41 पु. सि.

When engaged in complete abstention one becomes a saint, the personification of oure Jiva. He who is engaged in partial restraint only would be a disciple.

जो मुनि हिंसादि पापों को पूर्णतः त्याग करता है वह जिनमत में समयसार स्वरूप है। एक देश विरति रूप श्रावक मुनियों के उपासक है। श्रावक त्रस हिंसा से विरक्त है तथा स्थावर हिंसा से अविरक्त है। इसी प्रकार अन्य पाँचों का त्याग भी आंशिक रूप से करता है इसलिये वह विरताऽविरत रूप है।

हिंसा का विश्वस्वरूप

आत्म-परिणाम-हिंसन हेतुत्वातत्सर्वमेव हिंसैतत्।
अनृत-वचनादि-केवलमुदाहृतं शिष्य-बोधाय।।42।।

All this indulgence is 'Himsa' because it injures the real nature of Jiva. Falsehood etc. are only given by way of illustravation for the instruction of the desciple.

जिससे आत्मपरिणाम का हिंसन/हनन होता है वह सब हिंसा ही है। असत्य आदि पापों का कथन प्राथमिक कम बुद्धि वाले शिष्यों को समझाने के लिए उदाहरण के रूप में बताया गया है। प्रमाद से युक्त कषाय से संयुक्त जीव के परिणाम ही हिंसा के लिये कारण होता है। असत्य आदि पाप हिंसा की ही अवस्थान्तर है। तथापि शिष्यों को समझाने के लिए असत्य आदि पापों का भी कथन किया जाता है। पन्द्रह प्रकार के प्रमादों से आत्मा के परिणाम कलुषित होते हैं, मलिन होते हैं इसलिये यह प्रमाद ही हिंसा है।

हिंसा का विश्व लक्षण

यत्थलुकषाय योगात् प्राणानां द्रव्य भावरूपाणां।
व्यपरोपणस्य करणं सुनिश्चिता भवति सा हिंसा।।43।।
इघ्नन्नापि भवेत्पापीः निघ्नन्नापि न पाभाक्।
परिणाम -विशेषेण यथा धीवर कर्षको ।।1।।
स्वयमेवाऽऽत्मनाऽऽत्मानं हिनस्त्यात्माप्रमादतः।
पूर्वं प्राण्यंतराणां च पश्चात्स्याच्च न वा वधः।।2।।
सा हिंसा प्राणिनां अधर्मकारणं ज्ञातव्यमिति भावार्थः।

Any injury whatsover to the material or conscious vitalities caused through passionate activity of mind[body or speech is HimsA. assuredly.

निश्चय से कषाय के योग से द्रव्य भाव रूप प्राणों का हनन होना हिंसाा है। निश्चय से कषाय के योग से अर्थात् क्रोध, मान आदि चार कषाय हास्यादि नोकषाय के योग से इन्द्रिय श्वासोच्छ्वास शरीर आदि द्रव्य प्राण तथा ज्ञान आदि भाव प्राणों का हनन करना या उन्हें पीड़ा देना हिंसा है। इन द्रव्य एवं भाव प्राणों का प्रमत्त योग से व्यपरोपण करना, विनाश करना, वियोजन करना निश्चय से हिंसा है। गोम्मट्टसार में कहा है-

पाँच इन्द्रिय प्राण, मन, वचन, काय, रूप तीन बल प्राण श्वासोच्छ्वास एवं आयु मिलकर के दस प्राण होते हैं। इस गाथा कथित यथायोग्य दसों प्राण का वियोग करना या उन्हें क्षति पहुँचाना हिंसा है। यहाँ पर परिणाम को प्राधान्यता दी गई है। धर्म संग्रह में भी कहा गया है-

जिससे कोई जीव का घात नहीं हुआ वह भी पापी हो सकता है तथा जिससे जीव का घात हुआ है वह भी पाप से रहित हो सकता है। जिस प्रकार धीवर ने जाल बिछाया परन्तु एक भी मछली नहीं पकड़ पाया तो भी वह हिंसक ही है और खेत में काम करते हुए किसान से अनेक क्षुद्र जीव मर जाते हैं तो भी वह अहिंसक है। क्योंकि धीवर का परिणाम मछली पकड़ने का है और किसान का परिणाम अन्न उत्पादन करने का है। दोनों के परिणाम भिन्न-भिन्न होने के कारण उसके फल भी भिन्न-भिन्न होते हैं। प्रमाद के कारण स्वयंमेव ही स्वयं की आत्महत्या पहले कर लेता है। पश्चात् दूसरों की हिंसा करे या न करे। प्राणियों की हिंसा अधर्म का कारण है ऐसा जानना चाहिए।

अहिंसा और हिंसा का भावात्मक लक्षण

Assuredly, the non-appearance of attachment and other (passions) is Ahimsa, and their appearance is Himsaa. This is a summary of the Jaina scripture.

राग-द्वेष आदि दूषित परिणाम का आत्मा में उत्पन्न नहीं होना निश्चय से अहिंसा है। इसी ही राग-द्वेष आदि दूषित परिणामों का उत्पन्न होना जिनागम में संक्षिप्त से हिंसा कहा है। जिनागम का संक्षेप या सार यह है कि अप्रयत्न रूप से आचरण करना हिंसा है एवं प्रयत्नपूर्वक आचरण करना अहिंसा है।

प्राणघात से भी यत्नाचारी हिंसक नहीं

युक्ताचरणस्य सतो रागाद्यावेशमंतेरणापि।
न हि भवतिजातु हिंसा, प्राणव्यपरोपणादेव।।45।।

There never is Himsa when vitalities are injured, if a person is not moved by and kind of passion and is carefully following Right conduct.

जो प्रयत्न आचरण से युक्त है तब रागादि आवेश से रहित है उससे हिंसा नहीं होती है। युक्त आचरण से सहित मुनीश्वरों के रागादि भावों के आवेश के बिना कदाचित् प्राण व्यपरोपण होने पर भी हिंसा नहीं होती है।

अयत्नचारी प्राणघात के बिना भी हिंसक

व्यत्थानावस्थायां, रागादीनां वश प्रवृत्तानाम्।
मिय्रतां जीवो मा वा धावत्यग्रे ध्रुवं हिंसा।। 46।।

And, if one acts carelessly, moved by the influence of passions, there certainly advances Himsa in front of him whether a living being is killed or not.

राग आदि परिणाम से वशीभूत जीव प्रमाद अवस्था में रहते हुए दूसरे जीव मरे या नहीं मरे अवश्य हिंसक होता है। आचार्य श्री ने इस प्रकरण में कहा है राग आदि परिणाम से वशीभूत जीवों के तथा प्रमाद से सहित जीवों के आगे-आगे हिंसा दौड़ती रहती है। इसका रहस्य यह है कि वह अवश्यमेव हिंसक होता है अर्थात् त्रस-स्थावर जीवों के प्राणों का हनन करने वाले या नहीं करने वाले भी प्रमादी जीव अवश्य ही हिंसक होते हैं।

समीक्षा :- आचार्य कुन्कुन्द देव ने भी प्रवचनसार(सत्यसाम्यसुखामृतम्) में कहा भी हैं :-

मरदुव व जियदु व जीवो अयदाचारस्स णिच्छिदा हिंसा।
पयदस्स णत्थि बंधो हिंसामेत्तेण समिदस्स।।217।।

(जीवो मरदु व जियदु) जीव मरे या जीता रहे (आयदाचारस्य) जो यत्नपूर्वक आचरण से रहित है उसके (णिच्छिदा हिंसा) निश्चय हिंसा है (समिदस्स) समितियों में (पयदस्स) जो प्रयत्नवान् है उसके (हिंसामेत्तेण) प्राणों की हिंसा मात्र से (बंधो णत्थि) बंध नहीं होता है।

बाह्य में दूसरे जीव का मरण हो या मरण न हो जब कोई निर्विकार स्वसंवेदन रूप प्रयत्न से रहित है तब उसके निश्चय शुद्धचैतन्य प्राण का घात होने से निश्चय हिंसा होती है। जो कोई भी भली प्रकार अपने शुद्धात्मस्वभाव में लीन है, अर्थात् निश्चियसमिति को पाल रहा है तथा व्यवहार में ईर्ष्या, भाषा, एषणा, आदान निक्षेपण, प्रतिष्ठपना इन पाँच समितियों में सावधान है, अंतरंग बहिरंग प्रयत्नवान है, प्रमादी नहीं है उसको बंध नहीं होता है। यहाँ यह भाव है कि अपने आत्मस्वभाव रूप निश्चयप्राण का विनाश करने वाली रागादि परिणति निश्चय हिंसा कहीं जाती है। रागादिक उत्पन्न करने के लिये

बाहरी निमित्त रूप जो परजीव का घात है सो व्यवहार हिंसा है, ऐसे हो दो प्रकार हिंसा जाननी चाहिए, किन्तु विशेष यह है कि बाहरी हिंसा हो या न जब आत्मस्वभाव रूप निश्चय प्राण का घात होगा तब निश्चय हिंसा ही मुख्य है।

अथ तमेवार्थं दृष्टान्तद्राष्टान्ताभ्यां दृढ़यति-
उच्चलियम्हि पाए इरियासमिदस्स णिगमत्थाए।
आबाधेज्ज कुलिंगं अरिज्जं तं जोगमोसेज्ज।।(217/1)
ण हि तस्स तण्णिमित्ते बंधो सुहुमो य देसिदो समये।
मुच्छापरिग्गहोच्चिय अज्झप्पमाणदो दिट्ठे।।(217) प्रवचनसार

आगे इस ही अर्थ को दृष्टान्त से दृढ़ करते हैं :-

(इरियासमिदस्स) ईर्या समिति से चलने वाले मुनि के (णिग्गमत्थाएं) किसी स्थान से जाते हुए (उच्चालियम्हि पाए) अपने पग को उठाते हुए (तं जोगमासेज्ज) उस पग के संघट्टन के निमित्त से (कुलिंग) कोई छोटा जन्तु (आवाधेज्ज) वाधा को पावे(मरिज्ज) या मर जावे (तस्स) उस साधु के (तण्णिमित्तो सुहमो य बंधो) इस क्रिया के निमित्त से जरासा भी कर्म का बंध (समये) आगम में (णहि देसिदो) नहीं कहा गया है। जैसे (मुच्छापरिग्गहोच्चिय) मूर्छा को परिग्रह कहते हैं सो (अज्झयप्पमाणदो दिट्टो) अंतरंग भाव के अनुसार मूर्च्छा देखी गई हैं।

आचार्य श्री ने इस गाथा में हिंसा एवं अहिंसा की यथार्थ सूक्ष्म व्यापक आगमोक्त परिभाषा दी है। धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य निश्चय से स्वयं के ऊपर अवलम्बित है दूसरों पर अवलम्बित नहीं है। भले निमित्त और भी कुछ हो सकता हैं। स्वशुद्ध आत्मस्वरूप से विचलित होना च्युत होना ही हिंसा है। आत्मस्वरूप से च्युत होना ही अयत्नाचार है, प्रमाद है। इसलिये कहा गया है कि 'प्रमत्तयोगात् प्राणव्यपरोपणं हिंसा'' प्रमाद के योग से भाव प्राण एवं द्रव्य प्राणों को क्षति पहुँचाना, नष्ट करना हिंसा है। प्रमाद योग से रहित वस्तुतः हिंसा होती नहीं भले द्रव्य हिंसा हो, क्योंकि आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष भाव के ऊपर ही अवलम्बित है, भले इसके लिये बाह्य निमित्त और कुछ भी हो। कुन्दकुन्द देव ने समयसार में कहा भी है :-

अज्झवसिदेण बंधो सत्ते मारेहिं मा व मारे हि।
एसो बंधसमासो जीवाणं णिच्छयणयस्स।।(274)

निश्चयनय का कहना है कि जीवों को मारो या न मारो, किन्तु जीवों के मारने रूप भाव से कर्मों का बंध तो होता है। यही बंधत्व का संक्षेप है।

निश्चयनय से प्रत्येक जीव अजर, अमर, शाश्वतिक है। इसलिये कोई किसी को नहीं मार सकता है। अशुद्धनिश्चयनय से स्वयं की हिंसा स्वयं ही कर सकता है क्योंकि अशुद्ध निश्चय नय से रागद्वेष, मोह परिणाम होते हैं उनसे स्वस्वरूप की हिंसा हो जाती है। इसलिये अशुद्ध निश्चयनय से स्वयं की हिंसा स्वयं करता है और इसभाव से दूसरों के द्रव्यप्राण एवं भावप्राण को क्षति पहुँचाता है अतः उसे हिंसा कहते हैं। इसलिये वस्तुतः स्वअध्यवसाय, स्वप्रमाद या स्वअयत्नाचार ही हिंसा है।

उपर्युक्त समस्त सिद्धान्तों से यह सिद्ध होता है कि भाव निर्मलता/पवित्रता ही वस्तुतः अहिंसा है और भावों की मलिनता, अपवित्रता ही हिंसा है। जिनकी भावों में निर्मलता होगी अर्थात् भाव अहिंसा होगी वे द्रव्य हिंसा भी नहीं कर सकते हैं। कथंचित् उनसे द्रव्य हिंसा हो जाती है परन्तु जो भाव हिंसक हैं उनसे द्रव्य हिंसा हो या नहीं हो वे निश्चय ही हिंसक है। जिस प्रकार आत्मा को पवित्र करने के लिए जो उपवास करते हैं उस उपवासके कारण उदर व शरीरस्थ अनेक जीव मरते हैं। छद्मस्थ के शरीर में अनंत बादर निगोदिया जीव व अनेक त्रस जीव भी मरते हैं। छद्मस्थ के शरीर में अनंत बादर निगोदिया जीव व अनेक त्रस जीव भी रहते हैं। परन्तु वहीं जीव जब केवली बन जाता है तो उनके शरीरस्थ अनंत जीव ध्यानरूपी अग्नि से कुछ निकल भी जाते हैं कुछ मर भी सकते हैं तथापि आत्मकल्याण के लिए उपवास करने वालों को एवं शुक्लध्यान करने वालों को जीवंहिंसा जनित दोष नहीं लगता है न पाप बन्ध ही होता है परन्तु जो स्वयंभूरमण समुद्र में महामत्स्य रहता है उसके कान में रहने वाला तन्दुल मत्स्य नरक जाता है। भले वह जीवन में एक जीव को भी नहीं मारता है न मांस खाता है केवल महामत्स्य के कान के मैल को खाता है । इससे सिद्ध होता है कि भावों की पवित्रता ही यथार्थ से अहिंसा हैं परन्तु वर्तमान में देखने में आता है कि कुछ व्यक्ति जो अहिंसा का उपदेश करते हैं दूसरों को अहिंसा का पाठ पढ़ाते हैं वे ही अधिक कुटिल, मायाचारी, दूसरों को ठगने वाले, धूर्त, अच्छी चीज में नकली मिलावट करने वाले, अधिक ब्याज लेकर दूसरों का शोषण करने वाले, घी में डालडा तथा चर्बी मिलाने वाले, शराब एवं चर्म का व्यापार करने

वाले, मुर्गी पालन करने वाले, हिंसात्मक सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री का व्यापार व प्रयोग करने वाले होते हैं। ऐसे व्यक्ति जीवन में एक भी द्रव्य हिंसा न करें व एक भी माँस का टुकड़ा न खायें तो भी हिंसक हैं, पापी हैं, क्योंकि जब भावों में अहिंसा होगी तो ऐसी विचित्र हिंसा इनसे हो ही नहीं सकती है। इसका मतलब यह नहीं द्रव्य हिंसा करें या द्रव्य हिंसा की छूट है। परन्तु भाव अहिंसा के लिए भावों की निर्मलता के लिए द्रव्य हिंसा भी सर्वथा वर्जनीय है क्योंकि जो जानबूझकर द्रव्य हिंसा करेगा वह अवश्य ही भाव हिंसक ही होगा। इसलिये भावों की निर्मलता के लिए भावहिंसा एवं द्रव्यहिंसा दोनों त्यजनीय है। करुणा के अवतार महात्माबुद्ध ने अप्रमाद को अमृत कहा है एवं प्रमाद को मृत्यु कहा। उन्हीं का यह कथन यथार्थ है। क्योंकि अप्रमाद से हिंसा नहीं होती है और यह अहिंसा ही अमृत (अन्+मृत=न मरना, अमर, विकार न होना, क्षति न होना) है। तथा प्रमाद ही मृत्यु (विनाश, घात, दुःख, मरण) है। अतएव अप्रमादी अमृतपद (मोक्ष, शाश्वतिक, निर्वाण) को प्राप्त करता है और प्रमादी मृत्युपद (मरण, दुःख, संसार) को प्राप्त करता है। धम्मपद में उन्हीं का अमर संदेश निम्न प्रकार से लिपिबद्ध है-

अप्पमादो अमतपदं पमादो मच्चुनो पदं।
अप्पमत्ता न मीयन्ति ये पमत्ता यथा सता।।

प्रमाद न करना अमृत पद का साधक है और प्रमाद करना मृत्युपद का साधक। अप्रमादी नहीं मरते, किन्तु प्रमादी तो मरे तुल्य ही है।

उट्ठानेनप्पमादेन सञ्ञमे न दमेन च।
दीपं कयिराथ मेधावी यं ओघो नाभिकीरति।।5।।

मेधावी पुरुष उद्योग, अप्रमाद, संयम और दम (इन्द्रिय दमन) द्वारा अपने लिए ऐसा द्वीप बनावे, जिसे बाढ़ नहीं डुबा सके।

पमादमनुयुञ्जन्ति बाला दुम्मेधिनो जना।
अप्पमादञ्च मेधावी धनं सेट्ठं व रक्खति।।6।।

मूर्ख, अनाड़ी लोग प्रमाद में लगते हैं, बुद्धिमान श्रेष्ठ धन की भाँति अप्रमाद की रक्षा करता है।

मा पमादमनुयुञ्जेय मा कामरतिसन्थवं।

अप्पमत्तो हि ज्ञायन्तो पप्पोति विपुलं सुखं।।7।।

मत प्रमाद में फँसो, मत काम-रहित में लिप्त हो। प्रमाद रहित पुरुष ध्यान करते हुये महान् सुख को प्राप्त होता है।

पमादं अप्पमादेन यदा नुदति पण्डितो।

पञ्ञापासादमारुह असोको सोकिनिं पजं।।8।।

जब पण्डित प्रमाद को अप्रमाद से हटा देता है तब वह शोक रहित हो, शोकाकुल प्रजा को, प्रजारूपी प्रासाद पर चढ़कर जैसे पर्वत पर खड़ा पुरुष भूमि पर स्थित वस्तु को देखता है, वैसे ही वीर पुरुष अज्ञानियों को देखता है।

अप्पमत्तो पमत्तेसु सुत्तेसु बहुजागरो।

अबलस्सं व सीघस्सो हित्वा याति सुमेधसो।।7।।

प्रमादी लोगों में अप्रमादी तथा(अज्ञान की नींद में) सोये लोगों में (प्रज्ञा से) जागरणशील बुद्धिमान उसी प्रकार आगे निकल जाता है, जैसे तेज घोड़ा दुर्बल घोड़े से आगे हो जाता है।

आत्मघाती दूसरों के प्राणघात के बिना भी हिंसक

यस्मात्सकषायः सन् हन्त्यात्मा प्रथममात्मनाऽऽमानम्।

पश्चाज्जायेत न वा हिंसा प्राणव्यंतराणां तु।।47।।

Because under the influence of passion, the person first injures the self through the self; wheather there is subsequently an injury caused to another being or not.

व्याख्या-भावानुवाद : कषाय से युक्त जीव सर्वप्रथम स्व आत्म स्वरूप की हिंसा करता है। पश्चात् अन्य जीवों की हिंसा हो या नहीं हो। सकषाय आत्मवध होने के पश्चात अन्य जीवों का वध हो भी सकता है नहीं भी हो सकता है।

प्रमादयोग में नियम से हिंसा होती

हिंसायामविरमणं हिंसापरिणमनमपि भवति हिंसा।

तस्मात् प्रमत्तयोगे प्राण-व्यपरोपणं नित्यम्।।48।।

विकहा तहा कसाया, इंदियणिद्दा तहेव पणयो य।

चदु चदु पणमेगेगं होंति पमादा हु पण्ण रसा।

अथ प्रमादावस्थायां एव हिंसा प्रवर्तन इत्यर्थः।

The want of abstinence from Himsa, and indulgence, in Himsa both constitute Himsa; and thus whenever threre is careless activity of mind, body or speeh, thre always is injury to vitralities.

हिंसा से प्रतिज्ञापूर्वक विरक्त नहीं होना भी हिंसा ही है। जीव वध से अविरमण हिंसा होती है। हिंसा का परिणाम भी हिंसा ही है। मानसिक हिंसात्मक परिणाम ही हिंसा है। इसलिए प्रमत्त योग से प्राण व्यपरोपण (भाव हिंसा) अवश्य होता है। गोम्मट्टसार में पंद्रह प्रकार के प्रमादों का वर्णन निम्न प्रकार किया गया है-

चार प्रकार कि विकथा, चार प्रकार के कषाय, पाँच प्रकार की इन्दियाँ, एक निद्रा तथा एक प्रणय इस प्रकार प्रमाद पंद्रह प्रकार के हैं।

हिंसा के निमित्तों को हटाना चाहिये

सूक्ष्मऽपि न खलु हिंसा परवस्तु-निबंधना भवति पुंसः।

हिंसाऽऽयतन-निवृत्तिः परिणाम-विशुद्धये तदपि कार्या।।49।।

A more conduct with external objects, will not make a person guilty of Himsa. Even then for the purification of thought, one ought to avoid external caues leading to Himsa.

पर वस्तु के सम्बन्ध से मनुष्य को सूक्ष्म भी हिंसा नहीं लगती है। निश्चय से पर पदार्थ के कारण सूक्ष्म जीव वध का पाप भी जीव को नहीं लगता है। हिंसा आत्मपरिणाम से जनित होती है इसलिये हिंसा आत्मनिष्ट है। इसलिये आत्मपरिणाम की विशुद्धि के लिये हिंसा के आयतन स्वरूप छुरी, अस्त्र-शस्त्र, सूक्ष्म जीवों से युक्त स्थान का भी त्याग करना चाहिये। अस्त्रादि धारण करने से आत्मस्वभाव में मलिनता आती है। अतः शस्त्रों के समूह को त्याग करके यत्नपूर्वक विचरण करने से आत्म परिणाम में निर्मलता आती है।

अनिश्चयज्ञ का निश्चय के आश्रय से चारित्र घाती

निश्चयमुबुद्ध्यमानो यो निश्चय तस्तमेव संश्रयते।

नाशयति करण चरणं स बहिः करणालसो बालः।।50।।

He, who, ignorant of the real point of view, takes shelter therein in practive, is a fool, and being in different to external conduct, he destroys all practical discipline.

जो निश्चय को नहीं जानकर निश्चय से उसका ही आश्रय लेता है ऐसा मूर्ख निश्चय से क्रिया रूप चारित्र को अर्थात् व्यवहार चारित्र का नाश कर देता है। आचार्य श्री ने उसे मूर्ख, आलसी कहा है जो निश्चय व्यवहारात्मक मोक्षमार्ग को नहीं जानकर बाह्य चारित्र का पालन करने में प्रमादी होकर एकान्ततः निश्चय का ही आश्रय लेता है, मानता है। ऐसा व्यक्ति श्रावक चारित्र एवं मुनि चारित्र रूप व्यवहार चारित्र का नाश करता हैद्व लोप करता है।

अहिंसक भी हिंसक एवं हिंसक भी अहिंसक

अविधायाऽपि हि हिंसा हिंसा-फल-भाजनं भवत्येकः।
कृत्वाऽप्यपरोहिंसां हिंसाफल-भाजनं न स्यात्।।51

One who does not actually commit Himsa[be comes responsible for the consequences of Himsa and another who actually commits Humsa, would not be liable for the fruit of Himsa.

एक जीव निश्चय से जीव बधादि रूप हिंसा को नहीं करता हुआ भी हिंसा के फल को भोगता है। हिंसा के फलस्वरूप दुःख, दुर्भाग्य इष्टावियोग, रोगादि को मिथ्यादृष्टि/भाव हिंसक जीव भोगता है। जिस प्रकार जाल बनाने वाले धीवर मछली को बिना पकड़े ही अशुभ परिणाम से पाप का भागी बन जाता है। अन्य ज्ञानवान् काय संचालन आदि हिंसा करता हुआ भी हिंसा के फल को नहीं भोगता है। जिस प्रकार कृषक कृषि कार्य करते हुए अनेक जीवों का हनन करता हुआ भी हिंसा के फल को नहीं भोगता है क्योंकि उसका परिणाम निर्मल होता है। इसलिये हिंसा और अहिंसा में परिणाम की प्राधान्यता रहती है।

रूढ़ि-अनिती-नीति से ले आध्यात्मिक

(चालः- तुम दिल की...)

सुनासुनी बोलते हैं सभी मातृभाषा, व्याकरण शुद्धता बिना भाषा।
ऐसी भाषा होती क्षुद्र (बोली) भाषा, व्याकरण शुद्ध युक्त श्रेष्ठ भाषा।।

अन्धानुकरण करते देखादेखी, भेडभेडिया चाल सम होती प्रवृत्ति।
शोध-बोध आगमनिष्ठ सत्य, तथ्य, आदर्श अनुकरण होती सही प्रवृत्ति।।(1)
आत्मश्रद्धान ज्ञान चारित्र रिक्त, करते जो धर्म वह मिथ्यात्व युक्त।
राग-द्वेष-मोह-ईर्ष्या-घृणा सहित, होता अधर्म जो ख्याति-पूजा-लाभ सहित।।
स्वसुधार ही परम कर्त्तव्य, इसके बिना व्यर्थ परोपदेश।
प्रज्वलीत दीप सम स्वसुधार वाले, अप्रज्ज्वलीत दीप सम परोपदेशी।।(2)
स्वनिन्दा- गर्हा करते महानुभाव, परनिन्दा अपमान करते दुष्ट दुर्जन।
महानुभाव होते स्वपरोपकारी, परनिन्दक ईर्ष्या-घृणादि से अहितकारी।।
गुणगुणी प्रशंसा करते गुणानुरागी, गुणगुणी नाशक होते परनिन्दक।
गुणप्रशंसक होते निर्मलचित्त, पर निन्दक होते दूषित चित्त।।(3)
कबीरा निन्दक ना मिलो, पापीन मिलो हजार।
एक निन्दक के माथे पे, लाख पापीन को भार।।
देखादेखी करने वाले व निन्दक, होते लोकानुगतिक व पापी।
इनसे परे होते गुणग्राही प्रशंसक, दुर्लभ व निर्मलचित्त ज्ञानी।।
लीक लीक गाड़ी चले, लीक ही चले कपूत।
लीक छोड़ तीनों चले, शायर शूर सपूत।।
बवंडर से उड़ती हलकी वस्तु, न उड़ता है, सुमेरु पर्वत।
देखादेखी करते कुज्ञानी स्वार्थी, महान् होते गुणग्राही प्रशंसक।।(4)
पक्षीणां काक चाण्डालः, पशु चाण्डाल गर्दभः।
मुनिनां कोप चाण्डालः, सर्व चाण्डाल निन्दकः।।
आत्मविश्वास युक्त समता शान्ति, होती विश्व की श्रेष्ठ उपलब्धि।
इसके बिना सभी उपलब्धि, शव के शृंगार समान होती।।
क्षमा सम तपो नास्ति, न सन्तोषात् परं सुखम्।
न तृष्णाया सम व्याधि, न च धर्मः दया परम्।।
स्वयं में ही सभी निहीत है, धर्म अधर्म व पुण्य-पाप।
स्वर्ग-नरक से ले मोक्ष तक, स्व उपलब्धि चाहे अतः कनक।।(5)

भीलूड़ा दि. 20.02.2019 रात्रि 08:42

संन्दर्भ-

चुपचाप बैठकर दूसरे लोगों को वह व्यवहार करते देखना मुश्किल होता है, जो हमें पसंद नहीं है, ख़ास तौर पर अगर हम उस आत्म-विनाशकारी मानते हैं। लेकिन माँग करने, तंग करने और भीख माँगने से मनचाहे परिणाम नहीं मिलेंगे।यहाँ दूसरों को बदलने के लिए विवश किए बिना उन्हें प्रभावित करने की कुछ रणनीतियाँ बताई जा रही हैं :

पहले सुनें, बाद में बोलें : दूसरे लोग अक्सर कम रक्षात्मक होते हैं, जब उन्हें यह दिख जाता है कि आपने उनकी बात सुनने का समय दे दिया है।

अपनी राय और चिंताएँ जताएँ, लेकिन सिर्फ़ एक बार : चिंताओं को बार-बार दोहराने से आपके शब्द ज़्यादा प्रभावी नहीं होंगे। वास्तव में, इसका विपरीत असर हो सकता है।

अपना व्यवहार बदले : यदि कोई पत्नी नहीं चाहती कि उसका पति शराब पिए, तो उसकी बियर की बोतलों को तो तोड़कर नाली में बहाने से उसे शराब छोड़ने की प्रेरणा नहीं मिलेगी। लेकिन उसके नशे में नहीं रहने पर वह उसके साथ समय बिता सकती है और नशे में रहने पर उससे दूर रह सकती है। यदि पति को पत्नी के साथ समय बिताने में मज़ा आता है, तो वह ज़्यादा बार नशे से दूर रहने का विकल्प चुन सकता है।

सकारात्मक को इंगित करें: यदि कोई परिवर्तन करने की सच्ची कोशिश कर रहा है, चाहे यह सिगरेट छोड़ना हो या व्यायाम शुरू करना हो, तो सच्ची प्रशंसा करें। अति न करें या ऐसी बात न कहें, ''देखा, मैंने आपसे कहा था ना कि अगर आप जंक फूड छोड़ देंगे, तो आप बेहतर महसूस करेंगे।'' अप्रत्यक्ष आलोचना या ''मैंने आपसे पहले ही कहा था'' से लोग बदलने के लिए प्रेरित नहीं होते।

जब आप अपने जीवन के हर पहलू को नियंत्रित करने की कोशिश छोड़ देते हैं, तो आपके पास उन चीज़ों में लगाने के लिए अधिक समय और ऊर्जा होगी, जिन्हें आप नियंत्रित कर सकते हैं। यहाँ कुछ लाभ बताए जा रहे हैं, जो आपको मिलेंगे :

ख़ुशी में वृद्धि : ख़ुशी का अधिकतम स्तर तब हासिल होता है, जब लोगों

में नियंत्रण का संतुलित बिंदु होता है। ''संतुलित बिंदु वाली अपेक्षा'' का मतलब यह है कि इंसान यह समझता है कि वह अपने जीवन को नियंत्रित करने के लिए बहुत से क़दम उठा सकता है, लेकिन वह अपनी योग्यताओं की सीमाओं को भी पहचानता है। ऐसे लोग उन लोगों से ज़्यादा ख़ुश रहते हैं, जो सोचते हैं कि वे हर चीज़ को नियंत्रित कर सकते हैं।

बेहतर संबंध- जब आप नियंत्रण की आवश्यकता को छोड़ देते हैं, तो आपके संबंध बेहतर हो जाएँगे। आपको विश्वास करने में कम समस्या आएगी और आप अपने जीवन में ज़्यादा लोगों का स्वागत करेंगे। आप सहायता माँगने के लिए ज़्यादा तैयार होंगे और दूसरे लोग आपको कम आलोचनात्मक मानेंगे। शोध दर्शाता है कि जो लोग हर चीज़ को नियंत्रित करने की कोशिश छोड़ देते हैं, वे जुड़ाव और सामाजिकता का बढ़ा हुआ अहसास महसूस करते हैं।

कम तनाव- जब आप संसार का बोझ लादकर चलना छोड़ देते हैं, तो आप कम तनावग्रस्त महसूस करेंगे। नियंत्रण छोड़ने से आप ज़्यादा अल्पकालीन चिंता तो अनुभव कर सकते हैं, लेकिन आगे चलकर आपको बहुत कम तनाव और चिंता होगी।

नए अवसर- जब चीज़ों को नियंत्रित करने की आपकी प्रबल आवश्यकता होती है, तो इस बात की कम संभावना होती है कि आप अपने जीवन में परिवर्तन को आमंत्रित करेंगे क्योंकि सकारात्मक परिणाम की कोई गारंटी नहीं है। जब आप हर चीज़ को नियंत्रित करने की अपनी आवश्यकता छोड़ने का विकल्प चुनते हैं, तो आपको नए अवसर सँभालने की अपनी योग्यता में ज़्यादा आत्मविश्वास का अनुभव होगा।

ज़्यादा सफलता-जो लोग हर चीज़ को नियंत्रित करना चाहते हैं, हालाँकि उनमें से ज़्यादातर में सफल होने की गहरी इच्छा होती है, लेकिन नियंत्रण का आतंरिक बिंदु दरअसल सफलता की आपकी संभावनाओं में हस्तक्षेप कर सकता है। शोध दर्शाता है कि आप सफल होने पर इतने ज़्यादा केंद्रित हो सकते हैं कि आप दरअसल उन अवसरों को ही नज़रअंदाज, कर दे, जो आपको आगे बढ़ा सकते हैं। जब आप हर चीज़ को नियंत्रित करने की इच्छाछोड़ देते हैं, तो आप अपने आस-

पास देखने को ज़्यादा इच्छुक होंगे और आप अपनी राह में आने वाली खुशक़िस्मती को पहचान सकते हैं भले ही यह आपके व्यवहार से सीधे संबद्ध नहीं है।

समस्या-निवारण और कुछ बाधाएँ

जब आप इस बात पर ध्यान केंद्रित करते हैं कि संसार के साथ क्या गलत है, और यह नहीं देखते कि आप अपने नज़रिये और व्यवहार को कैसे नियंत्रित कर सकते हैं, तो आप ख़ुद को अटका हुआ पाएँगे। तूफ़ान को रोकने की कोशिश में ऊर्जा बरबाद करने के बजाय इस बात पर ध्यान केंद्रित करें कि आप इसके लिए कैसे तैयारी कर सकते हैं।

क्या सहायक है

दूसरे लोगों को काम और ज़िम्मेदारियाँ सौंपना।

ज़रूरत होने पर मदद माँगना।

उन समस्याओं को सुलझाने पर ध्यान केंद्रित करना, जो आपके नियंत्रण के भीतर हैं।

अन्य पर नियंत्रण के बजाय उन्हें प्रभावित करने पर ज़ोर।

इस बारे में संतुलित विचार सोचना कि आपके नियंत्रण के भीतर क्या है और क्या नहीं है।

पूरे परिणाम के लिए ख़ुद पर निर्भर न होना।

लिखित योजना बनाने के लिए इन क़दमों पर चले, जो ग़लतियाँ दोहराने से बचने में आपकी मदद करेंगे :

पुराने व्यवहार की जगह पर कोई नया व्यवहार शुरू करें: अगरा इंसान को तनाव से जूझना है, तो शराब पीने के लिए बैठने के बजाए वह वैकल्पिक रणनीतियाँ खोज सकता है, जैसे टहलने जाना या किसी मित्र को फ़ोन करना। निर्णय लें कि कौन सा स्वस्थ-व्यवहार अस्वस्थ व्यवहार दोहराने से बचा सकता है।

आप दोबारा ग़लत मार्ग पर चल रहे हैं, इसकी चेतावनी के संकेतों को पहचानें : पुराने व्यवहार के तौर-तरीक़ों की ताक में रहना महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वे

दोबारा लौट सकते है। अगर आप क्रेडिट कार्ड पर फिर से ख़रीदारी करने लगते हैं, तो आप समझ सकते हैं कि आपके ख़र्च की आदतें एक बार फिर नियंत्रण से बाहर हो रहा हैं।

ख़ुद को जवाबदेह ठहराने का तरीक़ा खोजें : अपनी ग़लतियाँ छिपाना या उन्हें नज़रअंदाज़ करना तब मुश्किलहोगा, जब आपको उनके लिए जवाबदेह ठहराया जाएगा। किसी विश्वसनीय मित्र या रिश्तेदार से बात करने से मदद मिल सकती है, जो आपको जवाबदेह ठहराए या आपकी ग़लतियाँ बताए। ख़ुद को जवाबदेह रखने के लिए आप एक जर्नल भी रख सकते हैं या अपनी प्रगति की निगरानी के लिए कैंलेंडर का इस्तेमाल भी कर सकते हैं।

आत्म-अनुशासन का अभ्यास करें

आत्म-अनुशासन कोई ऐसी चीज़ नहीं है, जो आपमें या तो होता है या फिर नहीं होता। इसके बजाय हर व्यक्ति में आत्म-अनुशासन को बढ़ाने की योग्यता होती है। चिप्स या कुकीज़ के पैकेट को नहीं कहने के लिए आत्म-नियंत्रण की ज़रूरत होती है और व्यायाम करने के लिए भी, जब आपकी इच्छा न हो। जो ग़लतियाँ आपकी प्रगति को तहस-नहस कर सकती हैं,उनसे बचने के लिए सतत सतर्कता और कठोर मेहनत की ज़रूरत होती है।

अपने आत्म-नियंत्रण को बढ़ाने के लिए काम करते समय कुछ चीज़ें दिमाग़ में रखें :

असुविधा को सहन करने का अभ्यास करें: जब आप अकेलापन महसूस कर रहे हों और आपके मन में अपनी पूर्व प्रेमिका को मैसेज भेजने का प्रलोभन जागे, जो आपके लिए अच्छा नहीं है या आप कोई मिठाई खाने के लिए ललचा रहे हों, जो आपके डाइट प्लान को चौपट कर देगी, तब असुविधा को सहन करने का अभ्यास करें। हालांकि लोग अक्सर ख़ुद को विश्वास दिलाते हैं कि अगर वे ''बस एक बार यह कर लेंगे, '' तो इससे मदद मिलेगी, लेकिन शोध इसके विपरीत दर्शाता है। जब भी आप हार मानते हैं, तो हर बार आपका आत्म-नियंत्रण घट जाता है।

सकारात्मक आत्म-चर्चा का इस्तेमाल करें : यथार्थवादी दृढ़ कथन कमज़ोरी

के पलों में प्रलोभन का प्रतिरोध करने में सहायक होते हैं। ''मैं यह कर सकता हूँ, '' या ''मैं अपने लक्ष्यों की दिशा में बेहतरीन काम कर रहा हूँ'' जैसी बातें बोलने से आपको पटरी पर बने रहने में मदद मिलती है।

अपने लक्ष्यों को दिमाग़ में रखें : अपने लक्ष्यों के महत्त्व पर ध्यान क्रेंदित करने से प्रलोभन कम आते हैं। इसलिए अगर आप इस बात पर ध्यान केंद्रित करते हैं कि कार का पूरा कर्ज़ चुकाने पर आपको कितना अच्छा महसूस होगा, तो आप किसी ऐसी चीज़ की खरीददारी करने के लिए कम ललचाएँगे, जो महीने के बजट को तबाह कर सकती है।

खुद पर बंदिशें लगाएँः यदि आप जानते हैं कि दोस्तों के साथ बाहर जाने पर आप बहुत ज़्यादा ख़र्च कर सकते हैं, तो अपने साथ ज़्यादा पैसे लेकर न जाएँ। ऐसे क़दम उठाएँ, जिनसे प्रलोभन के सामने आने पर उससे हार मानना असंभव नहीं, तो मुश्किल ज़रूरी हो जाए।

उन सभी कारणों की सूची बनाएँ कि आप अपनी ग़लती क्यों नहीं दोहराना चाहतेः इस सूची को अपने साथ रखें। अब भी पुराने व्यवहार की आदतों पर लौटने का प्रलोभन आए, तो यह सूची पढ़ लें। यह पुरानी आदतों को दोहराने का प्रतिरोध करने में आपकी प्रेरणा को बढ़ा सकती है। मिसाल के तौर पर, कारणों की सूची बनाएँ कि आपको डिनर के बाद टहलने क्यों जाना चाहिए। जब आपका मन व्यायाम करने के बजाय टीवी देखने को ललचाए, तो यह सूची पढ़ ले। इससे आगे बढ़ने की आपकी प्रेरणा बढ़ सकती है।

जज की गंभीर टिप्पणी

भ्रष्ट अफसरों और लोकसेवकों को देशद्रोही घोषित किया जाए

मद्रास हाईकोर्ट ने राय दी कि सभी भ्रष्ट न्यायिक अधिकारियों, लोकसेवकों को देशद्रोही घोषित कर दिया जाना चाहिए। मद्रास हाईकोर्ट के जस्टिस सुब्रमण्यम गुरुवार को तमिलनाड़ में एक गांव के प्रशासनिक भ्रष्टाचार के मामलें में लंबे समय तक निलंबित रहने की चुनौती याचिका पर शुक्रवार को सुनवाई कर रहे थे। याचिका

खारिज करते हुए जस्टिस एसएम सुब्रमण्यम ने गुरुवार को कहा कि न्यायपालिका में भ्रष्टाचार होना, संविधान का सबसे बड़ा दुश्मन है। न्यायपालिका को अलग-अलग प्रारूप में फैले भ्रष्टाचार को नियंत्रित करने के लिए कई क़दम उठाने होंगे। व्यवस्था का आकलन करते हुए उन्होंने कहा कि लोकसेवकों का रिश्वत लेना-देना गर्भस्थ भ्रूण के दूर से ही चलता है। यहां तक सरकारी योजनाओं का लाभ लेने के लिए भी लोकसेवकों को घूस दी जाती है। जस्टिस सुब्रमण्यम ने कहा कि ऐसे लोग देश विरोधी हैं, क्योंकि ये इस महान् देश के विकास को बाधित कर रहे हैं। उन्होंने कहा, जिस प्रकार आतंकी देशद्रोही होते है, ठीक उसी प्रकार भ्रष्ट लोकसेवकों को भी देशद्रोही करार दिया जाए।

मैं हूं अकाजकारी गृहणी

(गृहणी की आत्मकथा एवं आत्मव्यथा)

(तर्ज :- (ओठों पे सच्चाई...)

मैं हूँ अकाजकारी, गृहणी, घर के काम से फुरसत नहीं।
खाना बनाती, बच्चे पालती, तो भी कहें कुछ काम नहीं...2(टेक)
मैं न जाती ऑफिस क्लब, मिटिंग व किट्टी पार्टी में,
सद्गृहणी के कर्त्तव्य पालने से, अवकाश नहीं दिनरात में।...2
ब्रह्ममुर्हूर्त में उठकर मैं, नित्यकर्म सदा ही करती हूँ,
प्रभुस्मरण, शौच, स्नान, पुजा-पाठ भी करती हूँ।।...मैं...(1)

शुद्धतापूर्वक आहार बनाके, आहारदान मैं करती हूँ
परिवारजन के सास ससुर को, भोजन कराकर खाती हूँ...2
गृह-पालित गाय भैंस का, भरण पोषण भी करती हूँ,
दूध दुहना, दही जमाना, घी भी मैं बनाती हूँ।।...2 मैं...(2)

घर की सफाई, रोगी की सेवा, अतिथि सत्कार मैं करती हूँ,
बाग-बगीचा खेता का काम, आटा भी पीसा करती हूँ...2
वस्त्र धोना, घर पोतना, बर्तन मांजना सदा काम है,
पानी लाना, सब्जी लाना, घर संभालना काम है।..2 मैं...(3)

मध्यान्ह बेला में मन्दिर जाकर, साधु से पढ़ना कर्त्तव्य है,
प्रवचन सुनना, समाधान करना, धर्म को जानना कर्त्तव्य है...2
सन्ध्या से पूर्व खाना बनाकर, खिलाना-पिलाना काम है,
बर्तन मांजकर घर सम्हारकर, मन्दिर जाना काम है।।...2 मैं...(4)

आरती, वन्दना, प्रार्थना, प्रवचन, प्रशनमंच में भाग लेती हूँ,
आर्यिका आदि की वैयावृत्तकर, घर जा शयन करती हूँ...2
दिन-रात में सोलह घंटे भी, मैं हाडतोड़ काम करती हूँ,
माता,प्रबन्धक, दासी तक, समसस्त काम सदा मैं करती हूँ।।...2 मैं...(5)

तो भी मुझे वेतन में, एक भी पैसा नहीं मिलता है।
चतुर्थ श्रेणी के नौकर सम, मुझे न सन्मान मिलता है...2
भारत में तो वह ही महती जो, फर्जी भी डिग्री धारी होती,
फैशन करती, व्यसन करती, नौकरी, पार्टी में जाती है।।...2 मैं...(6)

गोगल्स पहनती, लिपिस्टिक लगाती, हिंगिलिस भाषा बोलती है,
हाइ हिल सेण्डल पहनकर फर्राटे में गाड़ी चलाती है...2
भले घर में खाना न बनाती, होटल में खाना खाती हैं,
धाई के द्वारा बच्चों को पालती, बोतल का दूध पिलाती हैं।।...2 मैं...(7)

सास-ससुर की आज्ञा न पालती, पति से स्वकाम कराती है,
क्लब पार्टी से देररात आती, सिनेमा व घूमने जाती है...2
तीर्थंकर साधु-साधवी के बदले, नट-नटी को आदर्श मानती है,
उन्हीं का गाना, पहनना उनका, उनका स्टाइल जो करती है।।...2 मैं...(8)

ब्राह्मी, सुन्दरी, गार्गी, सीता, आउट ऑफ डेटहो गई,
अश्लील, हुल्लड, नृत्यगानवाली, हीरोइन अप टू डेट हो गई...2
माता, मातृभूमि, मातृभाषा रहित, भारतीय-संस्कृति से दूर हुये।।...मैं...(9)

जीजाबाई, तीर्थंकर माता, भक्तमीरा क्या कामकाजी थी,
तो भी क्या वे महती न हुई, मेरी अभी क्या कसर हुई...2

अभी हे! भारत नौकरवृत्ति छोड़ो, आत्मगौरव को स्मरण करो,
''कनकनन्दी' के माध्यम से अभी, मेरे महत्त्व को पहिचानो...2 मैं...(10)

एक गृहणी माँ पाँच नौकरानी से अधिक कामकाज

एक माँ का वेतन रु. 92,000 प्रतिमाह से अधिक

(चालः हौठों से छू लो तुम....(माता तू दया करके), ओ रात के मुसाफिर...,मधुवन के मंदिरों में...) - आचार्य कनकनन्दी

माँ त्याग की है मूरत...उसका न मोल होता...
तप-त्याग व सेवा/(धर्म) का ...मोल/(तोल) कभी न होता...(ध्रुव)...
भौतिक विनिमय तो...संकीर्ण-स्वार्थ होता...
स्वार्थ जहाँ भी होता...वह व्यापार ही होता...
तप-त्याग-सेवा-धर्म...ये सभी है स्वार्थ परे...
निःस्वार्थ व परमार्थ...होते भौतिक परे...(1)

माता न नौकरानी...न होती भौतिक स्वार्थी...
तो भी माँ से कृतघ्नता...करते है भौतिक स्वार्थी...
भौतिक दृष्टि से भी...योगदान माँ का महान्...
अवकाश लिए बिना...जो काम करती हरदम...(2)...

शेफ[1] लॉण्ड्री[2] एडमिन[3] व ...चाइल्ड[4] केयर काम...
करती है सदा माता...योग्य अकांउटेंट[5] (का) काम...
एक होती योग्य माता...अनेक काम की नायिका...(3)

पाँचों ही काम हेतु...भारत के हिसाब से वेतन...
बयानवे (92) हजार रुपये...मासिक योग्य वेतन...
अन्य-अन्य (शेष) कार्य हेतु...और भी अधिक वेतन...
पाने योग्य है भारत में...विदेशों में अधिक वेतन...(4)

पूरे जीवन में तो अरबों...रुपयों के काम करती...
तो भी न होती कामकाजी...वेतन जो न लाती...

अभी क्या हुआ भारत को...सब धन से ही तौलते...
शिक्षा-संस्कृति-धर्म को भी...जो धन से ही तौलते...(5)

अतः माता-पिता-गुरु...वर्द्ध रोगी की भी सेवा...
न होती है उसी प्रकार...यथा होती धन की सेवा...
अतः विश्वगुरु भारत...बना है भ्रष्टों का देश...
धन हेतु करते शोषण...व मिलावट विशेष...(6)

महान् बनने हेतु...करो तप-त्याग-दान...
अतएव 'कनकनन्दी'...करते तुम्हें आह्वान...(7)...

राजस्थान की 73% महिला आबादी की यही पहचान करती हैं 5 प्रोफेशनल्स का काम फिर भी बेरोजगार

73% ...ये है राजस्थान में महिलाओं को आबादी का वो हिस्सा जिसे सरकार और समाज बेरोजगार मानता है। अधिकरिक परिभाषा के मुताबिक जो कोई काम नहीं करती, जिनका अर्थव्यवस्था में कोई योगदान नहीं है। ये हैं राजस्थान की गृहणियाँ...। गृहणियाँ जो एक साथ 5 प्रोफेशनल्स के बराबर काम करती हैं। उनकी ड्यूटी साल के 365 दिन और दिन के 24 घंटे की होती है। न कोई छुट्टी, न कोई भत्ता...और इतने काम के बाद कोई तनख्वाह तक नहीं मिलती हैं। हमने इन गृहणियों की तुलना उन प्राफेशनल्स से की, जिन्हें अर्थव्यवस्था का सक्रिय भागीदार माना जाता है। पाया कि एक गृहणी औसतन 92000 रुपये मासिक वेतन की हकदार है। कैसे ? ये गणित कुछ यू समझिए...

कितने किरदार जीती है हाउसवाइफ...और हर किरदार की सैलरी

शेफ : पूरे परिवार के लिए खाना-गृहणी पूरे परिवार के लिए औसतन दिन में तीन बार खाना पकाती है। इस मेन्यू में नाश्ते को चीज़ों से लेकर पकवान तक सब कुछ शामिल होता है। 28000 रुपये एक साधारण होटल में शेफ की औसत मासिक तनख्वाह। बड़े होटलों में सैलरी 1.5 से 5 लाख के बीच होती है।

लान्ड्री : कपड़े बर्तन साफ करना- एक गृहणी पूरे परिवार के सारे कपड़े धोती है और बर्तन भी साफ करती है। प्रोफेशनली ये काम परंपरागत तौर पर धोबी करते रहे हैं, जबकि होटलों में लॉन्ड्री व क्लीनिंग के लिए अलग स्टाफ होता है। 8000 रुपये है एक साधारण होटल में लान्ड़ी व क्लीनिंग स्टाफ की औसत तनख्वाह। निजी लॉन्ड्रीज में ये तनख्वाह और ज्यादा है।

एडमिन :परिवार की जरूरतें पूरी करना- एक गृहणी परिवार के लिए राशन, दवाइयाँ व अन्य सामान की खरीदारी करती हैं। साथ ही घर का कौनसा काम कितना जरूरी है एक प्रशासक की तरह इसका क्रम तय करती है। 20000 रुपये है मिड लेवल कंपनी में एडमिन स्टाफ की औसत मासिक सैलरी। कंपनी बड़ी हो तो तनख्वाह भी बढ़ जाता है।

चाइल्ड केयरः बच्चों की देखभाल- एक गृहणी बच्चों की पूरी देखभाल करती है। उनके खाने-पीने और सेहत की देखभाल के साथ-साथ स्कूल के शुरुआती सालों में पढ़ाई में भी वहीं हाथ बँटाती है। 8000 रुपये है एक आया को मिलने वाला औसत मासिक वेतन। आया बच्चों से जुड़े सारे काम भी नहीं करती।

एकांउटेंट : घर का बजट बनाना- एक गृहणी अपने पति के वेतन के मुताबिक घर का बजट तय करती है और कम से कम खर्च में घर की सारी जरूरतें पूरी करने की कोशिश करती हैं। 28000 रुपये है किसी मिड लेवल कंपनी में एकाउंटेंट को मिलने वाला औसत मासिक वेतन।

92000 रुपये होनी चाहिए एक गृहणी की औसत तनख्वाह, यदि हम उसके सारे कामों के लिए प्रोफेशनल्स की सैलरी जोड़े तो।

21408216- ये है राजस्थान की आबादी में बेरोजगार कहलाने वाली महिलाओं की कुल संख्या।

30% 20-39 वर्ष आयुवर्ग की महिलाओं की आबादी की 30% ऐसी है जो अपना परिवार खुद पाल रही है।

1100000 महिलाएँ राज्य में नौकरी माँग रही है, मगर सामाजिक या व्यावसायिक कारणों से नहीं मिल पा रहा है।

''अच्छी माँ का यथार्थ मूल्यांकन''

(अच्छी माँ का विश्वरूप)

(राग:-1. छोटु मेरा नाम है...2. पूछा मेरा क्या नाम रे...3. जीना यहाँ मरना यहाँ...)

अच्छी मेरी माँ है...सच्चा उसका काम/(नाम) है।
बिना रुपये रोज करती...अच्छे अच्छे काम हैं।। धु.।।
बिना बोले ही हमें पढ़ाती...अनुभव का ज्ञान है।
वात्सल्य सेवा परोपकार...ममता मृदुल ज्ञान है।।(1)
बिना डिग्री से उसे आते...धाय/(नर्स) डॉक्टर काम हैं।
तन-मन से रोग होने पर...करती चिकित्सा काम है।।(2)
मेरी माँ सम बावर्ची क्या होगा?...फाइवस्टार होटल का ?
मधुर ताजा भोजन खिलाये...वात्सल्य प्रेम कोमल का।।(3)
मेरी माँ है सफाईकर्मी...सफाई करती सभी की।
बर्तन वस्त्र घर आंगन...भाई-बहन पशु की।।(4)
यशोदा माँ ग्वालिनी सम...दूध दोहती गायों का।
दही-मट्ठा-मक्खन-घी...बनाती मिठाई मावा की।।(5)
मालिनी/(माल्यानी) सम मेरी माँ...शाक सब्जी उगाती।
खेत में जाकर कृषक सम...धान्य सदस्य उगाती।।(6)
घर की सभी सार-सम्भाल,...व्यवस्था शोभा करती।
वेतन बिना मैनेजर का...हर काम करती।।(7)
नहाना धोना हमें सजाना...रोज-रोज करती।
ब्यूटिशियन से अधिक ध्यान...हमारा सदा करती।।(8)
धरती सम सहन करती...हमें क्षमा करती।
हितोपदेश हमें देकर...गुरु का काम करती।।(9)
भाई-बहनों में झगड़ा होने पर...उसे शान्त करती।
हमें प्यार से दण्ड देकर...न्यायाधीश भी बनती।।(10)
गर्भ धारण व जन्म देकर...ब्रह्मा का काम करती।

हमारा पालन पोषण करके...विष्णु का काम करती।।(11)
हमारे दोष दूर करने में...रूद्र का काम करती।
कल्पवृक्ष कामधेनु व...चिन्तामणि सम बनती।।(12)
इसीलिये तो मेरी माँ...स्वर्ग से भी महान् है।
मातृभाषा मातृभूमि...होती अन्य से महान् है।।(13)
माँ का दूध तो अमृत सम...शरीर मन की औषधि।
रोगहर बुद्धिकर...वात्सल्य सेवा की औषधि।।(14)
माँ का संस्कार जीवन आधार...वृक्ष हेतु यथा पानी है।
सदाबहार जीवन होता...आदर्श माँ की कहानी है।।(15)
मेरी माँ न डिग्रीधारी...नहीं कामकाजी है।
तो भी उनसे अधिक श्रेष्ठ...नहीं वह नौकरानी है।।(16)
माँ से ही जन्म लेते...तीर्थेश गणेश चक्रेश है।
साधु सन्त महापुरुष...राम कृष्ण कवीश है।।(17)
माँ का न मूल्य करो...चमड़ी-दमड़ी पढ़ाई से।
अमूल्य है माँ का मूल्य...दाम न लगाओ नौकरानी से(कामकाजी से)।।(18)
भौतिक युग में माँ का मूल्य...हो रहा है धन से।
इसीलिये ही 'कनकनन्दी'...रची है कविता मन से।।(19)

दावोस में सालाना शुरू होने से पहले 20 चैरिटेबल संस्थाओं के संगठन ऑक्सफैम ने असमानता रिपोर्ट जारी की

दुनिया में महिलाएं सालाना 700 लाख करोड़ रु. के ऐसे काम करती हैं जिनके उन्हें पैसे नहीं मिलते, भारत में आकंड़ा 6 लाख करोड़ का है।

भारत में शहरी महिलाएं रोजाना 312 मिनट अवैतनिक काम करती हैं, पुरुष सिर्फ 29 मिनट

भेदभाव : फीस के पैसे नहीं होने पर लड़कों की तुलना में लड़कियों

को पहले स्कूल से निकाला जाता है

महिलाएं घर संभालने से लेकर बच्चों की देखभाल तक, ऐसे अनेक काम करती हैं जिनके उन्हें पैसे नहीं मिलते

दुनियाभर में महिलाएं घर संभालने से लेकर बच्चों की देखभाल करने तक, ऐसे अनेक काम करती है जिनके बदले उन्हें पैसे नहीं मिलते। पैसे में देखा जाए तो उनके काम की कीमत 700 लाख करोड़ रुपए होती है। यह एपल के सालाना रेवेन्यू का 43 गुना है। ऑक्सफैम ने सोमवार को जारी स्टडी रिपोर्ट में यह जानकारी दी। भारत के बारे में इसने कहा है कि शहरी महिलाएं रोजाना 312 मिनट और गांवों में 291 मिनट अवैतनिक काम करती हैं। शहरों में पुरुष 29 मिनट और गांवों में 32 मिनट ऐसे काम करते हैं जिनके उन्हें पैसे नहीं मिलते। महिलाओं का अवैतनिक काम 6 लाख करोड़ रुपए यानी जीडीपी के 3.1% के बराबर है। यह अंतर अमीरों में भी दिखता है। भारत के 119 अरबपतियों में सिर्फ 9 महिलाएं हैं।

ऑक्सफैम ने वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम की पिछले साल की रिपोर्ट के हवाले से बताया है कि भारत में महिला-पुरुष के वेतन में 34% अंतर है। जेंडर गैप इंडेक्स में भारत 108वें नंबर पर है। 2006 की तुलना में भारत 10 पायदान नीचे आया है। घर-परिवार की देखभाल करना महिलाओं का मुख्य काम माना जाता है। पैसे कमाना प्राथमिकता में नहीं है।

महिलाओं का डांटना-पीटना कितना उचित

बच्चे की देखभाल नहीं करने पर

53% ने डांटने और 33% ने पीटने को उचित ठहराया।

घर में खाना नहीं बनाने पर भी यह हाल

68% ने महिलाओं को डांटने और 41% ने पीटने को सही ठहराया।

बिना पूछे बाहर जाने पर और बुरी स्थिति

86% ने कहा कि डांटना और 54% ने कहा कि पीटना जायज है।

महिलाओं के खिलाफ हिंसा रोकने के कानून तो है, पर अमल नहीं

आक्सफैम के अनुसार भारत में महिलाओं के खिलाफ हिंसा रोकने के

अनेक कानून हैं। लेकिन उन पर अमल चुनौती है। वकीलों के एक समूह के 17 साल के संघर्ष के बाद 2013 में ऑफिस में यौन प्रताड़ना के खिलाफ कानून बना। लेकिन हाल के मी-टू आंदोलन के बाद ही महिलाओं के लिए रास्ता खुला। ज्यादातर महिलाएं अनौपचारिक क्षेत्र में है। उनके सामने शोषण सहने या नौकरी छोड़ने के ही विकल्प होते हैं।

टैक्स में कटौती का ज्यादा फायदा पुरुषों को मिलता है

दुनियाभर में महिलाओं की तुलना में पुरुषों के पास 50% ज्यादा संपत्ति है।

86% लोग राजनीतिक दलों से ज्यादा कंपनियों पर भरोसा करते हैं

दुनिया में ज्यादातर लोग राजनीतिक दलों से ज़्यादा उन कंपनियों पर भरोसा करते है जिनमें वे काम करते हैं। दावोस समिट से पहले जारी एडेलमैन ट्रस्ट बेरोमीटर के अनुसार 5 में से सिर्फ एक व्यक्ति मानता है कि राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था उसके लिए काम करती है। समस्याओं के समाधान के लिए 75% लोगों ने अपनी कंपनियों और 48% ने सरकार पर भरोसा जताया 60% का मानना है कि देशों के बीच टकराव से उनकी नौकरी खतरे में है। भविष्य को लेकर लोगों में डर चरम पर है।

सुप्रीम कोर्ट: एक और याचिका दाखिल, कहा

'आदिवासियों से अन्याय भारत के इतिहास का काला अध्याय'

छग की महिला ने की अदालत से गुहार

आदिवासियों के अधिकारी के संरक्षण की मांग को लेकर सुप्रीम कोर्ट में एक नई याचिका दायर की गई है। इसमें उन्हें वनभूमि से बेदखल करने से रोकने, अधिकारियों को उनकी सुरक्षा के निर्देश देने और जबरन भूमि अधिग्रहण के आरोपों की जांच के लिए एसआइटी गठित करने की मांग की गई है।

छत्तीसगड़ की तारिका तरंगिनी लार्का ने अपपनी याचिका में मौलिक अधिकारी

का हवाला देते हुए कहा कि आदिवासियों के साथ अन्याय हमारे देश के इतिहास का एक काला अध्याय है। कद्दावर राजनेताओं आक्रमणकारियों और उद्योगपतियों ने बड़ी संख्या में आदिवासियों की हत्याएं की। शेष लोगों की वंशज की जमीनें छीनकर उन्हें जंगलों और पहाड़ों की ओर धकेल दिया गया था।

याचिका में ये हैं सवाल

क्या वन/आदिवासी क्षेत्रों से संबंधित सभी लोग संविधान की अनुसूची 5-6 के तहत है या नहीं।

क्या अनुसूची पांच-छह के तहत संरक्षित आदिवासियों को उनके संवैधानिक अधिकारों के विपरीत बेदखल किया जा सकता है।

क्या किसी कानून के तहत आदिवासियों की भूमि को हड़पने और हस्तांतरण की अनुमति है।

स्पेन दुनिया का सबसे स्वस्थ देश, भारत 120वें स्थान पर

दुनिया के सबसे स्वस्थ देशों की सूची में स्पेन शीर्ष पर है। ब्लूमबर्ग हेल्थएस्ट कंट्री इंडेक्स 2019 में 169 देशों पर किए गए सर्वे में स्पेन ने इटली की पीछे छोड़ दिया है। इस सूची में ब्रिटेन 19वें और अमरीका 35वें स्थान पर है।

ऑस्ट्रेलिया (सातवां स्थान) एक मात्र अंग्रेजी बोलने वाला देश है जिसने शीर्ष 10 में अपनी जगह बनाई है। रिपोर्ट के मुताबिक अमरीका प्रति नागरिक सबसे ज्यादा खर्च करता है। स्पेन के लोग भूमध्यसागरीय आहार का इस्तेमाल अधिक करते हैं इसलिए वहां के लोग अन्य देशों की तुलना में अधिक स्वस्थ है। ब्लूमबर्ग हेल्थएस्ट कंट्री इंडेक्स 2019 में सभी देशें की जीवनशैली,धुमपान की दर और मोटापा, जल की स्वच्छता आदि मापदंडों को ध्यान में रखा गया। पिछली रिपोर्ट 2017 में पेश हुई थी।

एक अंक का नुकसान भारत 120वें स्थान पर

ताजा सूची में 2017 की तुलना में भारत एक अंक के नुकसान के साथ सूची में 120वें स्थान पर आ गया है। सूची में अन्य देश पाकिस्तान (124वें)म्यामार (129) और अफगानिस्तान (153वें) स्थान पर हैं। वहीं श्रीलंका (66), बांग्लादेश

(91), नेपाल (110) में लोगों का स्वास्थ्य भारत की तुलना मे बेहतर है।

शीर्ष 10 देश

स्पेन इटली आइसलैंड जापान स्विट्जरलैंड सूडान ऑस्ट्रेलिया सिंगापुर नॉर्वे इजरायल

इन देशों के पायदान में हुआ है सुधार

2017 की तुलना में दक्षिण कोरिया 7 अंकों की छलांग लगाकर 7 अंकों की छलांग लगाकर 17वें स्थान पर पहुंच गया है। एस्टोनिया (32) को भी एक साल में 6 स्थान का सुधार हुआ है, वहीं साल 2017 में 50वें स्थान पर रहने वाला अल्बानिया 7 स्थल ऊपर अब 43 पर पहुंच गया है। दूसरी तरफ मैसेडोनिया को 12 स्थान का नुकसान हुआ है अब वह 44वें से 56वें स्थान पर पहुंच गया है। एक अन्य अध्ययन में लेगाटम इंस्टीट्यूट ने अपने सर्वे में स्पेन को 22वें स्थान पर रखा है।

खानपान का पड़ता है ज्यादा प्रभाव

शोधकर्ताओं के मुताबिक खाने पीने की आदतों का स्वास्थ्य पर सबसे ज्यादा प्रभाव पड़ता है। चूंकि स्पेन के लोग भूमध्यसागरीय आहार (फल और सब्जियां, फलियां, जड़ी- बूटियों से बने मसाले)का इस्तेमाल अधिक करते हैं, इसलिए वहां के लोग अन्य देशाों की तुलना में अधिक स्वस्थ हैं। अमरीका में ड्रग्स ओवरडोज से कई मौतें हुई हैं, ऐसे में सूची में उसे नुकसान हुआ है। जंक फूड, का ज्यादा इस्तेमाल करने वाले देश सूची में नीचे हैं।

खान-पान से ही नहीं प्रदूषण से भी मधुमेह का खतरा

मधुमेह का खतरा केवल खानपान से ही नहीं बल्कि अरसे तक प्रदूषित हवा में सांस लेने से भी बढ़ता है। चीन में 88 हजार लोगों पर एक सर्वे हुआ। इसमें पाया गया कि जिन स्थानों पर लोग अधिक समय तक वायु प्रदूषण के मानक पीएम 2.5 के संपर्क में रहते हैं, वहां लोगों के मधुमेह के स्तर में बढ़ोतरी हुई है। चीन में एक दशक

के दौरान किए गए अध्ययन में पाया गया कि प्रदूषण 10 माइक्रोग्राम प्रतिमन मीटर तक बढ़ने से मधुमेह का खतरा 15.7% बढ़ जाता है। इसका असर युवा व महिलाओं पर भी होता है।

देश के एक अस्पताल के मधुमेह संकाय के डॉक्टर के मुताबिक हाल के वर्षों में भारत में भी प्रदूषण में तेजी से बढ़ोतरी हुई है, ऐसे में माना जा सकता है चीन और भारत की परिस्थितियों के बीच कोई खास अंतर नहीं है।

भारत में मधुमेह के बढ़ने के संकेत

(मधुमेह से सबसे ज्यादा पीड़ित वयस्कों वाले देश

साल 2017

चीन 11.44 करोड़

भारत 7.29 करोड़

अमरीका 3.02 करोड़

ब्राजील 1.25 करोड़

मैक्सिको 1.2 करोड़

साल 2045

भारत 13.43 करोड़

चीन 11.98 करोड़

अमरीका 3.56 करोड़

मैक्सिको 2.18

ब्राजील 2.03 करोड़

श्रावक के 12 व्रत व अन्त में संक्लेखना (समाधिमरण)

(44 दोष रहित 77 गुण सहित व 53 क्रियाओं से युक्त श्रावक)

(पंचमगुणस्थानवर्ती (वर्ती) होते हैं श्रावक व वे पालन करते हैं

अतिचार रहित 12 व्रत व अन्त में समाधि-मरण

(चाल :- आत्मशक्ति...)

सुनो! हे! श्रावक तुम्हारे व्रत (धर्म) जैसा कि सर्वज्ञ ने कहा है।
उसका संक्षेप वर्णन करूँ जैसा कि छहढालादि में कहा है।।
तत्त्वार्थ-श्रद्धान व आत्मश्रद्धान हेतु देव शास्त्र गुरु श्रद्धान है।
इसके अनन्तर व्रत बारह पाले अन्त में करे समाधिमरण।।
अणुव्रत रूप में पालन करे अहिंसा सत्य अचौर्य अपरिग्रह।
सप्त व्यसन अष्ट मद अनिवार्य रूप से त्याग करे सो श्रावक।
पंचमगुणस्थानवर्ती होते हैं श्रावक जो श्रद्धा-विवेक-क्रिया युक्त।
गुरु से व्रत धारण करते बारह व्रत से ले ग्यारह प्रतिमा तक।।
श्रद्धा से जो गुरु से श्रवण करे आगम आत्मविकास के कारण।
उसे भी श्रावक कहते हैं जो श्रमण बनने हेतु, धारण करें शुभ परिणाम
चवालीस (44) दोष से रहित होते हैं पालते हैं सतत्तर (77) भी गुण।
त्रेपन (53) क्रियाओं से सहित होते तब ही श्रावक होते उत्तम।।
मयमूढमणायदणं संकाईवसण भयमईयारं।
जेसिंचउदालदोष ण संति ते होतिं सद्दिट्ठी।। (17) रयण.
उहयगुण वसण भय मल वेरग्गाइचार भत्ति विग्घंवा।
एदे सत्ततरिया दंसण सावय गुणा भणिया।।(18)
देवगुरु समयभत्ता संसार सरीर भोग परिचित्ता।
रयणत्तय संजुत्ता ते मागुवा सिवसुहं पत्ता।।(19)
गुणवय तव सम पडिमा दाणं जल गालणं अणत्थमिदं।
दंसण णाण चरित्रं किरिया तेवण्ण सावया भणिया।।(49)
पुण्य-पाप-फलमाहिं, हरख बिलखौ मत भाई।
यह पुद्गल परजाय, उपजि विनसै फिर थाई।।
लाख बात की बात यही, निश्चय उर लाओ।
तोरि सकल जग दंद-फंद, नित आतम ध्याओ।।(छह)
सम्यग्ज्ञानी होय, बहुरि दिढ़ चारित लीजै।

एकदेश अरु सकलदेश, तसुभेद कहीजै।।
त्रस हिंसा को त्याग, वृथा थावर न सँहारे।
पर-वधकार कठोर निंघ नहिं वयन उचारै।।(10)
जल-मृतिका विन और नाहिं कछु गहै अदत्ता।
निज वनिता विन सकल नारिसौं रहे विरत्ता।।
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै।।
दश दिश गमन प्रमाण ठान तसु सीम न नाखै।।(11)
ताहू में फिर ग्राम वली, गृह बाग बजारा।
गमनागमन प्रमाण ठान अन, सकल निवारा।।
काहू की धनहानि, किसी जय-हार न चिन्तै।
देय न सो उपदेश, होय अघ वनीज कृषि तैं।।(12)
कर प्रमाद जल भूमि वृक्ष पावक न विराधै।
असि धनु हल हिंसोपकरण नहिं दे यश लाधै।।
राग-द्वेष-करतार, कथा कबहूँ न सुनीजै
और हू अनरथ दंड, हेतु अघ तिन्हें न कीजै।।(13)
धर उर समातभाव, सदा सामायिक करिये।
पर्व चतुष्टयमहिं, पाप तज प्रोषध धरिये।।
भोग और उपभोग, नियमकरि ममत निवारै।
मुनि को भोजन देय फेर, निज करहि अहारै।।(14)
बारह व्रत के अतीचार, पन-पन न लगावै।
मरण-समय सन्यास धारि तसु दोष नशावै।।
यों श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावै।
तहँते चय नरजन्म पाय, मुनि है शिव जावै।।(15)
शक्ति है तो बनते श्रमण नहीं तो अन्त में करते समाधिमरण।
श्रावक योग्य समाधिमरण से भी बनते महार्द्धिक वैमानिक देव।।
उत्कृष्ट से दो तीन भव में व जघन्य से सप्त अष्ट में पाते निर्वाण।
सुमनुष्य देव बनकर व श्रमण होकर आत्म साधना से पाते निर्वाण।।

अन्य प्रकार से श्रावक की होती हैं म्यारह प्रतिमा क्षुल्लक ऐल्लक तक।
साधु बनने हेतु साधना करते ज्ञान-वैराग्य को करते उत्कृष्ट।।
श्रावक व्रतों में होते उत्कृष्ट सामाजिक नियम कानून संविधान व्यवस्था।
ये सब अन्तरंग शुद्धि से पालते नहीं होती इस में कोई बाह्य बाध्यता।।
उपासकाध्ययन या श्रावकाचार में वर्णन इसका हुआ है सविस्तार।
अति संक्षेप में संकलन रूप से काव्य रचा 'कनक सूरी' शिष्य हेतु उपकार।।

भीलूड़ा :- 03.02.2019 रात्रि :- 8.21

खोटा-छौटा सोच परे बड़ा-अच्छा सोचूँ

(चालः- बता मेरे यार सुदामा रे!...(2) तुम दिल की...)

क्यों खोटा-छोटा सोचता रे! बड़ा -अच्छा सोचा तो कर...
सोचने हेतु न लगे धन-साधन! सबसे सस्ता व सच्चा रे।।
अच्छा सोचना सबसे अच्छा! इससे होता सब ही अच्छा।
मन-वच-काय-कृत-कारित-अनुमत! अच्छा सोचने से होते प्रभावित।।(1)
खोटा सोचना सबसे नीच! इससे होते सब ही बुरे।
मन-वच-काय-कृत-कारित-अनुमत! खोटा सोचने से प्रभावित।।
चेतन मन से जो सोचते रे! जब चेतन मन उसे मानता रे।
उसकेअनुसार हर काम होते! खोटा से खोटा तो अच्छा से अच्छा।।(2)
जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि! जैसी मति वैसी ही गति।
जैसे सोचेगे वैसे बनोगे! जैसे बोओगे वैसे पाओगे।।
भाव कर्म से द्रव्य कर्म! दोनों से भावी निर्माण।
अच्छे भाव से पुण्य कर्म! खोटे भाव से पाप कर्म।।(3)
खोटा भाव है दीन व हीन! अहंकार ममकार मिथ्या भाव।
ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा व द्वेष! पर निन्दा से ले पर अहितभाव।।
दिखावा आडम्बर लन्द-फन्द! वाद-विवाद से ले तनाव-द्वंन्द्व।
अन्ध श्रद्धा से ले अन्धानुकरण! समय-शक्ति-बुद्धि का दुरुपयोग।।(4)
अच्छा सोचना है इससे परे! उदार-पावन-दया से पूरे।

स्व-पर-विश्व कल्याणकर भाव! सेवा-दान-परोपकार के भाव।।
दबाब प्रलोभन-भय रहित! निर्मल-शान्त-समता सहित।
विनम्र-सत्यग्राही-गुणानुरागी। हठाग्रह दुराग्रह रहित ज्ञान पिपासु।।(5)
पर प्रतिस्र्द्धा रहित प्रगतिशील! महान् लक्ष्य प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील।
आत्मविशुद्धि(आत्म) शान्ति हो लक्ष्य! 'कनक' का ऐसा ही बड़ा लक्ष्य।।(6)

भीलूड़ा दि. 07.03.2019 रात्रि 08:25

आप अद्भूत आध्यात्मिक मशीन हैं,इस समय आपके शरीर में करीब 500 खरब कोशिकाएँ मौजूद हैं, वे सभी एक साथ मिलकर काम कर रही है, वे आपको इस वाक्य को पढ़ने के योग्य बना रही हैं। आपको कोशिकाएँ आपस में बहस नहीं करती, वे कभी यह प्रश्न नहीं करती कि चीजें किस प्रकार से होंगी और वे कभी इस विवाद में भी नहीं उलझती कि कौन अधिक बुद्धिमान् अथवा कौन अधिक सक्षम है। वे सभी एक साथ मिलकर खूबसूरत लय में काम करती हैं, जिससे कि उसको (शरीर रूपी इस मशीन) उस क्षण में सबसे उच्चतम संभावित स्तर पर कार्य करने की शक्ति मिल सके। कितना अद्भुत चमत्कार है! ठीक इसी प्रकार की खूबसूरत लय का पारस्परिक प्रभाव हमारी बाहरी संसार पर भी पड़ता है। प्रतिदिन हमारे विचारों, शब्दों, क्रियाओं व भावनाओं की सृजनात्मक मुद्राएँ हमारे जीवन का निर्माण करने के लिए ब्रह्मांड की ऊर्जा के साथ बहुत सुंदर तालमेल रखते हुए कार्य करती हैं। अपनी ऊर्जा को सकारात्मक दिशा में केंद्रित कर हम बहुत सारे अच्छे अनुभव प्राप्त कर सकते है। सचमुच! यह बहुत ही सरल है।

इस सृजनात्मक शक्ति का दावा करना और व्यापक तौर पर अपनी ऊर्जा का उपयोग करने का कार्य पहले-पहल तो चुनौतीपूर्ण हो सकता है। आखिरकार, हम सीाी को भय के साए में जीवन जीने, उसी स्थिति में अपनी सोच को विकसित करने और बच-बचकर कार्य करने के लिए प्रशिक्षित किया जाताहै- हमें हर पल यह सोचना होता हैं कि कौन सा कार्य नहीं हो पाएगा, ऐसा क्या है, जो गलत है अथवा ऐसा क्या है, जो हमारे जीवन के बारे में अच्छा नहीं है। आपको समाचार देखने, अथवा अखबार में छपे समाचारों को पढ़ने के लिए अथवा वेबसाइट को देखने के

लिए केवल कुछ क्षणों की ही आवश्यकता होती है कि उनका सामूहिक केंद्र बिंदु कहाँ पर हैं। अपने पीने के पानी में कौन से खतरनाक तत्त्व छूपे हैं, अर्थव्यवस्था एक अन्य गोता लगाती है, अपने बच्चों पर पूरी निगरानी रखने के दस कारण...यह अविराम, भय को बढ़ाने वाले संदेश आपको उस प्रकार से भी प्रभावित कर सकते हैं जिससे आप परिचित भी न हों। और समय के साथ, आप अपने आपको वास्तव में नकारात्मक कहानियों, निरर्थक नाटकीय बातचीत और बार-बार दोहराए जाने वाले नुकसानदायक विचारों के बिच घिरा हुआ पाते हैं। एकबार जब यहचक्र आरंभ हो जाता है तो यह अपने आप नहीं रुकता। आपको इसके लिए अच्छे विकल्पों और अच्छे विचारों को सोचने, प्रत्येक राह के प्रत्येक मोड़ पर बुरे को अच्छे में बदलने के प्रति सतर्क रहना होता है। अपने आपको इस डरावने, निराशाजनक, नकारात्मकता को बनाए रखने वाली ऊर्जा में तल्लीन करने से बचाना होगा। उदाहरण के लिए, संभव है कि आप किसी नवीनतम वास्तविकता को दिखाने वाले कार्यक्रम से प्रभावित हो रहे हैं, जो कि लोगों को उनकी सबसे बुरी स्थिति में दिखाता है। कुछ समयबाद, आप स्वयं को ऐसे व्यक्तियों से घिरा हुआ पाना आरंभ कर देते हैं, जो सदैव किसी-न-किसी प्रकार की समस्या से घिरे रहते हैं अथवा संभवतः आप अपने कार्यस्थल पर नाटकीयता को बढ़ावा दें, उसका हिस्सा बन जाएँ अथवा गपशप में आप समस्याओं को बढ़ाने में अपना योगदान देना आरंभ कर दें अथवा आपके अपने जीवन में क्या अच्छा नहीं हो रहा, उसके बारे में शिकायत करना आरंभ कर दें।

यह सब करते समय आपको यह अहसास नहीं हो पाता कि इस प्रकार आप उन विचारों के स्वरूप और व्यवहार को विकसित कर रहे हाते हैं, जो खोज के लिए प्रयोग होने वाले हमारे रेडियों ट्रांसमीटर को निर्देश देता है और नकारात्मक संकेतों को मिटा देता है। इस प्रकार केवल नकारात्मकता का और अधिक प्रसार व जीवन में और अधिक कठिन अनुभवों का संसार होता है और यह स्वरूप समय के साथ अत्यधिक व्यक्तिगत होते जाते हैं। आप जब प्रत्येक दिन समाप्त होता है तो स्वयं को एक नकारात्मक फंदे में फँसा हुआ पाते हैं, स्वयं पर लगातार दोषपूर्ण बुरा अथवा अयोग्य होने का तमगा लगा हुआ देखते हैं।

कीड़े, मकोड़ो की घटती संख्या से सबके जीवन को खतरा

धरती पर कुछ दशकों में 40% प्रजातियां खत्म हो जाएंगी

पिछले कुछ वर्षो के दौरान कई वैज्ञानिक अध्ययनों में कीट-पतंगों की संख्या में लगातार गिरावट सामने आई है। जर्मनी, अमेरिका और बोर्नियो जैसे इलाकों में तो यह गिरावट 50 से 80 प्रतिशत है। इन नतीजों से पर्यावरण विद चिंतित हैं। संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन की नई स्टडी के अनुसार जानवर और मुख्य रूप से कीड़े 87% फूल वाले पौधों का परागण करते हैं। कीड़ों के बिना अधिकतर पौधे फलों और फूलों की पैदावार नहीं कर पायेंगे। कीड़ों से पौधे की फोटो सिंथेसिस के लिए जरूरी पोषक तत्त्व पैदा होते हैं। सभी पक्षियों, चमगादड़ों के लिए भोजन उपलब्ध कराते हैं। अमेरिकी जीव वैज्ञानिक ई ओ विलसन 'कीड़ों को धरती पर जीवन का दिल कहते हैं।

एक स्टडी में अगले कुछ दशकों में विश्व की 40% कीट प्रजातियों के लुप्त होने की चेतावनी दी गई है। वैज्ञानिकों ने कीड़ों की दस लाख प्रजातियों की पहचान की है। इसकी तुलना में स्तनपायी जीवों को केवल 6000 और पक्षियों की 18000 प्रजातियां हैं। 1976 और 2014 के बीच ब्रिटेन की 56 से 32 तितलियों की संख्या घट गई। जर्मनी के पश्चिमी इलाके क्रेफील्ड में 1929 से 2016 के बीच 75% उड़ने वाले कीड़े नष्ट हो गए। स्थिति का दूसरा पहलू भी है। कीट-पतंगों की संख्या में गिरावट की ज्यादातर स्टडी यूरोप, अमेरिका की हैं। चीन, भारत, मध्यपूर्व, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अमेरिका, दक्षिण पूर्व एशिया और अफ्रीकी में जंगली कीड़ों की संख्या के कोई अध्ययन नहीं हुए हैं। फिर भी, कीड़ों की घटती संख्या विनाशकारी साबित हो सकती है। विलसन का कहना है, यदि समूची मानवजाति खत्म हो जाए तब भी दुनिया फिर से खड़ी हो जाएगी। लेकिन, अगर कीड़े समाप्त हो गए तो पर्यावरण धाराशायी हो जाएगा।

विश्व के सर्वोच्च साम्यवाद का सूत्र

(शुद्ध दृष्टि से विश्व के सभी जीव एक सामन शुद्ध)

(अन्त्योदय से सर्वोदय के सूत्र)

(चालः- 1. छोटी छोटी गैया...(2) आत्मशक्ति...

'सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया', महान् सूत्र सर्वज्ञों ने कहा।
शुद्धनय से सभी जीव शुद्ध हैं, शक्ति व अभिव्यक्ति से कहा।।
यथा बीज में विशाल वृक्ष, शक्तिरूप से उपस्थित होता।
बाह्य सभी निमित्तों को पाकर, व्यक्त रूप से विशाल वृक्ष होता।।(1)

तथाहि सभी आत्मा में परमात्मा, शक्ति रूप में उपस्थित होता।
बाह्य सभी निमित्तों को पाकर, व्यक्त रूप से परमात्मा होता।।
यथा सभी स्कन्ध के परमाणु, शुद्ध रूप से एक समान है।
मृदा-जल-वायु से ले सूर्यकिरण के, परमाणु शुद्ध रूप से समान है।(2)

विज्ञान के सभी एलिमेंट हो या मूल मूत्र से ले सोना-चांदी।
सभी के शुद्ध परमाणु एक समान, इलेक्ट्रोन से ले क्वांटम प्रभृति।।
तथाहि सूक्ष्म निगोद से देव तक, चौरासी लक्ष्य योनियों के जीव।
हर धर्म-पंथ-मत-जाति के लोग शुद्धनय से होते हैं शुद्ध जीव।।(3)

विश्व में अनन्तानन्त जीव हैं, हर के हर दिशा में आकाश अनन्त।
सभी जीव अनादि शाश्वत हैं, सभी जीव में गुण पर्याय अनन्त।।।
कर्म के कारण संसारी जीवों के, होते हैं नाना भाव व काम।
तथापि आत्मद्रव्य दृष्टि से, होते हैं सभी एक समान।।(4)

मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ भाव, यथायोग्य करणीय सभी जीवों में।
स्व-पर-विश्वकल्याण हेतु, नवकोटि से यथायोग्य करणीय।।
ये ही परम समता भाव है, अहिंसा विश्वमैत्री उदार भाव है।
इससे संभव अन्त्योदय-सर्वोदय, कनक का लक्ष्य है सर्वोदय।।(5)

भीलूड़ा दि. 08.03.2019 मध्याह्न 12:56

सन्दर्भ-

जैन सिद्धांत के अनुसार हृदय कमल में आठ पाँखुडी के आकार का द्रव्यमन होता है और उस द्रव्यमन से शिक्षा,उपदेश,वचनादि का ग्राहक भाव मन होता है। वैसे तो एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक में भी कुमति ज्ञान, कुश्रुत ज्ञान तथा आहार, निद्रा,भय, मैथुन आदि संज्ञाएँ होने के कारण उनमें भी कुछ क्रिया एवं प्रतिक्रिया होती है तथा वे भी सुख-दुःख अनुभव करते हैं तथापि जिस प्रकार संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव उपदेश को ग्रहण करता है शिक्षा को प्राप्त करता है, मनन करता है, चिंतन करता है, सम्यक्त्व को ग्रहण कर सकता है, संयम को धारण कर सकता है, मोक्ष को प्राप्त कर सकता है, उसी तरह अन्य जीव नहीं कर सकते हैं।

1. बादर एकेन्द्रिय, 2. सूक्ष्म एकेन्द्रिय, 3. द्विन्द्रिय, 4. त्रीन्द्रिय 5. चतुरिन्द्रिय, 6. असंज्ञी पंचेन्द्रिय, 7. संज्ञी पंचेन्द्रिय । इन 7 के पर्याप्त एवं अपर्याप्त भेद होते हैं । इस कारण 7×2=14 जीवसमास हो जाते हैं।

आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छास, भाषा मन ये षट् पर्याप्ति हैं, इनमें से जो एकेन्द्रिय जीव है उनको तो केवल आहार, शरीर, एक स्पर्श इन्द्रिय तथा श्वासोच्छास ये चार पर्याप्तियाँ होती हैं। संज्ञी पञ्चेन्द्रियों के चार ये पूर्वोक्त और भाषा तथा मन ये छहों पर्याप्तयाँ होती हैं और शेष जीवों के मन रहित पाँच पर्याप्तियाँ होती है। पर्याप्त अवस्था में संज्ञी पंचेन्द्रियों के 10 प्राण, असंज्ञी पंचेन्द्रियों के मन के बिना 9 प्राण, चौइन्द्रियों के मन और कर्ण के बिना 8 प्राण, तेइन्द्रियों के मन, कर्ण और चक्षु के बिना 7 प्राण, दोइन्द्रियों के मन, कर्ण, चक्षु और घ्राण के बिना 6 प्राण और एकेन्द्रियों के मन, कर्ण, चक्षु, घ्राण, रसना तथा वचनबल के बिना 4 प्राण होते हैं। अपर्याप्त जीवों में संज्ञी तथा असंज्ञी इन दोनों पंचेन्द्रियों के श्वासोच्छास वचन बल और मनोबल के बिना 7 प्राण होते हैं और चौइन्द्रिय आदि एकेन्द्रिय पर्यंत शेष जीवों के क्रमानुसार एक एक प्राण घटता हुआ है।

जीवा का अशुद्ध एवं शुद्ध स्वरूप

मग्गणगुणठाणेहि य चउदसहि हवंति तह असुद्धणया।
विण्णेया संसारी सव्वे सुद्ध हु सुद्धणया।।(13) द्र.स.

Again, according to impure (Vyavahara) Naya[Samsari jivas are of fourteen kinds according to Margana and Gunasthana But according to pure Navya all jivas should be understood to pure.

संसारी जीव अशुद्ध नय से चौदह मार्गणास्थानों से तथा चौदह गुणस्थानों से चौदह-चौदह प्रकार के होते हैं और शुद्धनय से तो सब संसारी जीव शुद्ध ही हैं।

शुद्ध निश्चय द्रव्यार्थिक नय से सिद्ध जीव तो शुद्ध हैं ही परंतु संसारी जीव भी शुद्ध हैं क्योंकि शुद्ध निश्चय द्रव्यार्थिक नय केवल शुद्ध द्रव्य का ही ग्रहण करता है पर मिश्र अवस्थाओं को ग्रहण नहीं करता है क्योंकि इस नय का प्रतिपादित विषय शुद्ध द्रव्य ही होता है। अशुद्ध नय अर्थात् व्यवहार नय से संसारी जीव कर्म से संयुक्त है। इस अवस्था में जीव के अनेक भेद प्रभेद हो जाते है क्योंकि संसारी जीव अनंतानंत हैं और कर्म भी असंख्यात लोक प्रमाण हैं। इस अपेक्षा से संसारी जीव के भी संख्यात, असंख्यात और अनंत भेद हो जाते हैं तथापि समझने के लिए एवं समझाने के लिए एक सुव्यवस्थित प्रणाली को अपनाकर उसमें समस्त भेद प्रभेदों को गर्भित किया जाता है। इस गाथा में आचार्य श्री ने संसारी जीवों के वर्गीकरण को मुख्य दो भेदों में किया है। (1) मार्गणा स्थान, (2) गुणस्थान। मार्गणा स्थान के पुनः 14 अंतर्भेद हो जाते हैं और उस अंतर्भेदों में भी अनेक प्रभेद होते हैं इसी प्रकार गुणस्थान के 14 भेद होते हैं उन 14 भेद के भी अनेक प्रभेद हो जाते हैं।

असहायणाण दंसणसहियो इदि केवली हु जोगेण।
जूत्तो त्ति सजोगि जिणो, अणाइणिहणारिसे उत्तो।।64

जिसका केवलज्ञान रूपी सूर्य की अविभाग प्रतिच्छेद रूप किरणों के समूह से (उत्कृष्ट अनन्तानन्त प्रमाण) अज्ञान अंधकार सर्वथा नष्ट हो गया हो और जिसको नव केवललब्धियों के (क्षायिक-सम्यक्त्व, चारित्र, ज्ञान, दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य) प्रकट होने से परमात्मा यह व्यपदेश (संज्ञा) प्राप्त हो गया है, वह इन्द्रियाँ, आलोक आदि की अपेक्षा न रखने वाले ज्ञान दर्शन से युक्त होने के कारण केवली और योग से युक्त रहने के कारण सयोग तथा घाति कर्मों से रहित होने के कारण जिन कहा जाता है, ऐसा अनादिनिधन आर्ष आगम में कहा है।

चौहदवें अयोग केवली गुणस्थान का वर्णन

सीलेसिं संपत्तोणिरुद्धणिस्सेस आसओ जीवो।
कम्मरयविप्पमुक्को गयजोगो केवली होदि।।65

जो अठारह हजार शील के भेदों के स्वामी हो चुके हैं और जिसके कर्मों के आने का द्वाररूप आस्रव सर्वथा बंद हो गया है तथा सत्त्व और उदयरूप अवस्था को प्राप्त कर्मरूप रज की सर्वथा निर्जरा होने से जो उस कर्म से सर्वथा मुक्त होने के सम्मुख है, उस योग रहित केवली को चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोग केवली कहते है।।

उपयुक्त जो मार्गणा एवं गुणस्थान का वर्णन किया गया है, इसमें संपूर्ण संसारी जीवों का कथन है तथापि दोनों सूक्ष्म भेद है। वह भेद यह है कि मार्गणा स्थान में तो विशेषतः बाह्य गति,शरीर, इन्द्रिय आदि को माध्यम करके प्ररूपणा की गयी है तो गुणस्थान में अंतरंग भावों को प्रधानता दी गयी है।

''**सव्वे सुद्धा हू सुद्धणया**'' यह सिद्धांत बहुत ही व्यापक एवं रहस्यपूर्ण है। इस सिद्धांत से सिद्ध होता है कि आध्यात्मिक दृष्टि से कोई भी जीव न छोटा है और न बड़ा है। भले ही बाह्यशरीर, गति इन्द्रिय आदि से या गुणस्थान की अपेक्षा छोटे-बड़े हो सकते हैं। विशेष जिज्ञासु को प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, समयसार आदि का अवलोकन करना चाहिए। यह जैन धर्म का सार्वभौम/साम्यभाव/समताभाव/समानाधिकार सिद्धांत है। इस सिद्धांत से ही राजनीति में समाजवाद, लोकतंत्र, साम्यवाद की सही स्थापना हो सकती है। इसी से ही विश्व मैत्री, विश्वप्रेम, विश्वसमाज, विश्वबंधुत्व निरस्त्रीकरण (अस्त्ररहित राष्ट्र निर्माण) विश्वशांति आदि महान् उदात्त भावना की संपूर्ति हो सकती है। सिद्धांततः शुद्ध निश्चय नय से संसारी जीव भी अनंत ज्ञान, दर्शन, सुख संपन्न भगवान् के समान होते हुए भी व्यवहारतः अशुद्धनय से संसारी जीव सिद्ध स्वरूप नहीं है। क्योंकि संसारी जीव कर्म परतंत्रता के कारण संसार अवस्था में अनंत शारीरिक, मानसिक दुःखों को भोगता रहता है। यदि व्यवहार नय से भी शुद्ध मानेंगे तो अनुभव रूप में उपलब्ध रूप जो दुःख है कर्म परतंत्रता है उसका अभाव होने का प्रसंग आएगा परंतु वस्तुतः ऐसा नहीं है और एक अनर्थ यह

हो जाएगा कि संसारी जीव मुक्त जीव की तरह अनंत सुखी होगा तो मोक्ष के लिए जो भगवान् का उपदेश एवं सिद्धि की साधना की जाती है वह भी निष्फल हो जाएगी7 यदि शुद्ध निश्चयनय को मानते हुए व्यवहार नय को नहीं मानेंगे तो सिद्ध भगवान तथा संसार में स्थित अभव्य मिथ्यादृष्टि कीड़े-मकोड़े, कुत्ता, सियार, सुअर, नारकी, पापी कामी आदि जीवों में किसी में भी किसी प्रकार अंतर नहीं होगा। अभव्य तो सम्यग्दृष्टि तक कभी भी नहीं हो सकता तो वह सिद्ध कैसे हो सकता है ? इतना ही नहीं, संसार मोक्ष, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मुनि व्रत, श्रावक व्रत, धर्म ध्यान शुक्लध्यान आदि का भी लोप हो जाएगा।

द्रव्य संग्रह एक संक्षिप्त सूत्रबद्ध आध्यात्मिक ग्रंथ होने के कारण इसमें संक्षिप्त रूप से संसारी जीवों का वर्णन किया गया है। ऐसे तो जैन धर्म सर्वज्ञ प्रणीत, अनादि, अनिधन, अनेकांतात्मक वस्तु स्वरूप एवं अहिंसा प्रधान होने के कारण इस धर्म में जीवों का जितना सांगोपांग, व्यापक-सूक्ष्म वर्णन पाया जाता है ऐसा वर्णन अन्यत्र नहीं पाया जाता है। विशेष जिज्ञासु विस्तृत अध्ययन के लिए गोम्मटसार जीवकांड, स्वतंत्रता के सूत्र (तत्वार्थ सूत्र) धवला आदि का आलंबन लें।

यहां पर जिन-जिन मुख्य प्रणालियों के माध्यम से जीवों का अन्वेषण शोध-बोध किया गया है। उसका कुछ दिग्दर्शन मैं यहां कर रहा हूं। यथा-

गुण जीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणाओ य।
उवओगो विय कमसो वीसं तु परूवणा भणिदा।।2 गो.जी.

यहाँ चौदह गुणस्थान, अठानवें जीवसमास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चार संज्ञा, चार गति मार्गणा, पाँच इन्द्रिय-मार्गणा, छह काय-मार्गणा पन्द्रह योग मार्गणा, तीन वेद-मार्गणा, चार दर्शन-मार्गणा, आठ ज्ञान-मार्गणा, सात संयम मार्गणा, चार दर्शन-मार्गणा, दो संज्ञी-मार्गणा, दो आहार-मार्गणा, दो उपयोग इस प्रकार ये जीव प्ररूपणा बीस कही है। प्रत्येक प्ररूपणा की निरुक्ति कहते हैं- ''गुण्यते अर्थात जिसके द्वारा द्रव्य से द्रव्यांतर को जाना जाता है वह गुण है। कर्म की उपाधि की अपेक्षा सहित ज्ञान, दर्शन, उपयोगरूप चैतन्य प्राणों से जो जीता है वह जीव है। वे जीव जिनमें सम्यक्रूप से ''आसते'' रहते हैं वे जीवसमास हैं। ''परि'' अर्थात् समंतरूप से आप्ति अर्थात्

प्राप्ति पर्याप्ति है, जिसका अर्थ है शक्ति की निष्पत्ति। जिनसे जीव ''प्राणन्ति जीते हैं अर्थात् जीवित व्यवहार के योग्य होते हैं वे प्राण हैं। आगम प्रसिद्ध वांछा या अभिलाषा को संज्ञा कहते हैं। जिनके द्वारा या जिनमें जीव ''मृग्यन्ते'' खोजे जाते हैं वे मार्गणा है। मार्गयिता खोजने वाला तत्वार्थ का श्रद्धालु भव्यजीव है। ''मृग्य'' अर्थात् खोजने योग्य चौदह मार्गणा वाले जीव हैं मृग्यपने के कारणपने या अधिकरणपने को प्राप्त गति आदि मार्गणाओं में उन-उन मार्गणावले जीवों को खोजा जाता है। ज्ञान सामान्य और दर्शन सामान्य रूप उपयोग मार्गणा का उपाय है। इस प्रकार इन प्ररूपणाओं के सामान्य अर्थ का कथन किया।

जीव के सिद्ध स्वरूप एवं उर्ध्वगमन स्वभाव

णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूण चरमदेहदो सिद्धा।
लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवएहि संजुत्ता।।14

The Siddhas (or libreated jivas) are void of karmas, possessed of eight qualities slighty less then the final body, etennal, possessed of Utpada (rise) and Vyaya (fall) and existent at the summit of Loka.

जो जीव ज्ञानावरणादि आठ कर्मों से रहित है,सम्यक्त्व आदि आठगुणों के धारक हैं तथा अंतिम शरीर से कुछ कम हैं वे सिद्ध हैं और ऊर्ध्वगमन स्वभाव से लोक के अग्रभाग में स्थित है, नित्य हैं तथा उत्पाद और व्यय इन दोनों से युक्त हैं।

इस गाथा में आचार्य श्री ने जीव के सिद्धत्व एवं उर्ध्वगमन का वर्णन किया है। तेरहवीं गाथा के पूर्वार्ध में चौदहवें गुणस्थान तक का वर्णन किया गया है। सूक्ष्म आध्यात्मिक दृष्टि से 14वें गुणस्थान तक संसार अवस्था हैं क्योंकि इस गुणस्थान में भी चार अघाति कर्म की सत्ता है। भले ही इस गुणस्थान में चार घाति कर्म न होने के कारण अनंत चतुष्टय प्रगट हो गया है एवं भाव मोक्ष भी हो गया है तथापि द्रव्य-मोक्ष एवं संपूर्ण मोक्ष नहीं हुआ है। 14वें गुणस्थान के अंतिम समय में संपूर्ण कर्मों के क्षय से जीव पूर्ण मुक्त हो जाता है। समस्त विरोधात्मक कर्म के अभाव से जीव के अनंत गुण प्रगट हो जाते हैं तथापि सिद्ध के आठ कर्म के अभाव से आठ विशेष गुण प्रगट होते हैं। यथा-

सम्मत्तणाणदंसंणवीरियसुहुमं तहेव अवगहणं।

अगुरुलहुमव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं।।

1. सम्यक्तव 2. अनंत ज्ञान 3. अनंत दर्शन 4. अनंत वीर्य 5. सूक्ष्मत्व 6. अवगाहनत्व 7.अगुरुलघुत्व 8. अव्याबाधत्व।

सिद्ध भगवान के जो आठ गुण प्रगट होते हैं वे आठ कर्मों के संपूर्ण क्षय से प्रगट होते हैं। यथा-

कर्म का अभाव	**गुण प्रगट**
1. ज्ञानावरणीय कर्म	अनंत ज्ञान गुण
2. दर्शनावरणीय कर्म	अनंत दर्शन गुण
3. मोहनीय कर्म	अनंत वीर्य गुण
4. अंतराय कर्म	सम्यक्त्व गुण
5. वेदनीय कर्म	अव्याबाध गुण
6. आयु कर्म	अवगाहनत्व गुण
7. नाम कर्म	सूक्ष्मत्व गुण
8. गोत्र कर्म	अगुरुलघुत्व गुण

सिद्ध भगवान् संपूर्ण कर्म से रहित होने के कारण, अमूर्तिक है, इसलिए उनका मूर्तिक आकार नहीं है तथापि अनंत गुणों का अखंड पिण्ड होने के कारण एवं प्रदेशत्व गुण होने के कारण उनका बहुत ही सुंदर आकार होता है। वह आकार अंतिम शरीर के किंचित न्यून (कुछ छोटा) है। भले संसारी जीवों के शरीर में यहाँ तक कि अर्हंत् भगवान् के शरीर में भी छेद है, पोल है परंतु सिद्ध भगवान् के आत्म प्रदेश में (सिद्धाकार में) किसी प्रकार छेद या पोल नहीं होता है इसलिए सिद्ध भगवान् की प्रतिमा सुंदर, सुरुचिपूर्ण, समचतुरस्त्र संस्थान युक्त घनाकार होती है अरिहंत की प्रतिमा अष्ट प्रतिहार्य, लांछन एवं केश आदि से युक्त होती है किंतु सिद्ध प्रतिमा इन अष्ट प्रतिहार्यादि से रहित होती है। अनेक अकृत्रिम सिद्ध प्रतिमायें होती है। नवदेवता में सिद्ध भगवान् की प्रतिमा होती है और अलग से भी सिद्ध भगवान् की प्रतिमा होती है।

कर्नाटक के शेडबाल में रत्नत्रय मंदिर में एक विशाल सिद्ध भगवान् की प्रतिमा

है। होसदुर्ग में भी सिद्ध भगवान् की प्रतिमा है। वर्तमान में जो सिद्ध भगवान् की खोखली प्रतिमा बनाते हैं कि वह आगमोक्त नहीं है। खंडित प्रतिमा अपूज्यनीय है, तो खोखली सिद्ध भगवान् की प्रतिमा में तो और भी अधिक आंगोपांग की कमी है तो वह प्रतिमा कैसे पूज्यनीय है?

अष्ट कर्म से रहित होते ही सिद्ध जीव 1 समय में 7 राजू दूरी को पार करके लोकाग्र में जाकर स्थिर हो जाते हैं।

ऊर्ध्वगमन करना जीव का स्वभाविक गुण है तथापि कर्म परतंत्रता के कारण जीव विभिन्न गति में गमन करता है परंतु कर्म से रहित होने से स्वाभाविक ऊर्ध्वगति से ऋजुगति से गमन करता है कहा भी है-

पयडि ट्ठिदि अणुभागप्पदेस बंधेहि सव्वदो मुक्को।
उड्ठं गच्छदि सेसा विदिसा वज्जं गदिं जंति।।

प्रकृति बंध, स्थिति बंध, अनुभाग बंध, प्रदेश बंध से सम्पूर्ण रूप से मुक्त होने के बाद परिशुद्ध, स्वतंत्र, शुद्धात्मा तिर्यक् आदि गतियों को छोड़ कर ऊर्ध्वगमन करता है। स्वतंत्रता के सूत्र/मोक्षशास्त्र में मुक्त जीव के ऊर्ध्वगमन के विभिन्न कारण बताए हुए कहा है-

पूर्वप्रयोगादसंगत्वाद् बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च। 6

पूर्व प्रयोग से, संग का अभाव होने से, बंधन के टूटने से, वैसा गमन करना स्वभाव होने से मुक्त जीवन ऊर्ध्वगमन करता है।

संसारी जीव ने मुक्त होने से पहले कितनी बार मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयत्न किया है अतः पूर्व का संस्कार होने से जीव ऊर्ध्वगमन करता है जीव जब तक कर्मभार सहित रहता है तब तक संसार में बिना किसी नियम के गमन करता है और कर्मभार से रहित हो जाने पर ऊपर को ही गमन करता है। अन्य जन्म के कारणभूत गति, जाति आदि समस्त कर्मबंध के अच्छेद हो जाने से मुक्त जीव ऊर्ध्वगमन करता है। आगम में जीव का स्वभाव ऊर्ध्वगमन करने वाला बताया है। अतः कर्म नष्टहो जाने पर अपने स्वाभाविक अवस्था के कारण मुक्तात्मा का एक समय तक ऊर्ध्वगमन होता है।

तं सो बंधणमुक्को उड्ढंजीवो पओगदो जादि।
जह एरण्डयबीयं बंधणमुक्कं समुप्पगदि।।212। भ.भा.

इस प्रकार बंधन से मुक्त हुआ वह जीव वेग से ऊपर को जाता है जैसे बंधन से मुक्त हुआ एरण्डका बीज ऊपर हो जाता है।

संगउ विजहणेण य लहुदयाए उड्ढं पयादि सो जीवो।
जध आलाउ अलेओ उप्पददि जले णिबुड्ढो वि।।2122

समस्त कर्म नो कर्मरूप भार से मुक्त होने के कारण हल्का हो जाने से वह जीव ऊपर को जाता है। जैसे मिट्टी के लेप रहित तूम्बी जल में डूबने पर भी ऊपर ही जाती है।

झाणेण य तह अप्पा पओगदो जेण जादि सो उड्ढं।
वेगेण पूरिदो जह ठाइदुकामो विय ण ठादि।।2123

जैसे वेग से पूर्ण व्यक्ति ठहरना चाहते हुए भी नहीं ठहर पाता है वैसे ही ध्यान के प्रयोग से आत्मा ऊपर को जाता है।

जह वा अग्गिस्स सिहा सहावदो चेव होदि उड्ढं गदी।
जीवस्स तह सभावो उड्ढगमणमप्पवसियस्स।। 2124

अथवा जैसे आग की लपट स्वभाव से ही ऊपर जाती है वैसे ही कर्म रहित स्वाधीन आत्मा का स्वभाव अर्ध्वगमन है।

तो सो अविग्गहाए गदीए समए अणंतरे चेव।
पावदि लोयस्स सिहरं खित्तं कालेण य फुसंतो।।2125

कर्मों का क्षय होते ही वह मुक्त जीव एक समय वाली मोड़े रहित गति से सात राजू प्रमाण आकाश के प्रदेशों का स्पर्श न करते अर्थात् अत्यंत तीव्र वेग से लोक के शिखर पर विराजमान हो जाता है।

क्या धर्म धर्म करता रे! ?

(धर्म की संस्कृति एवं विकृति)

(चालः- बता मरे यार सुदामा रे!...)

क्या धर्म धर्म करता रे! धर्म को तू जाना ही नहीं।

धर्म तो है वस्तु स्वरूप! रत्नत्रयमय आत्मस्वरूप।।
राग-द्वेष-मोह-रहित भाव, समता-शान्ति शुचि सहित।
स्व-पर-विश्वहित हेतु, अन्तोदय से सर्वोदय सहित।।(1)
नवकोटि से होता धर्म, मन-वच-काय-कृत-कारित-अनुमत।
पावन मन से (होता) धर्म प्रारम्भ, तदनुकूल वचनादि में प्रवृत्त।।
भाव अपावन से सभी है अधर्म, भले बाह्य धर्म में हो प्रवृत्त।
पावन भाव है राग-द्वेष-मोह रहित, अन्यथा होता भाव अपावन।।(2)
सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि निमित्त, ख्याति-पूजा-लाभ इच्छा सहित।
पर निन्दा अपमान अहित युक्त, हठाग्रह-दुराग्रह-दंभ सहित।।
दिखावा-आडम्बर-संक्लेश युक्त, अपेक्षा-उपेक्षा प्रतिक्षा सहित।
वर्चस्व-प्रतिस्पर्द्धा-दबाव सहित, होता कुधर्म असत्य युक्त।।(3)
हिंसा-झूठ-चोरी-कुशील-संग्रह, फैशन-व्यसन-प्रमाद-सहित।
दया-दान-सेवा-परोपकार रहित, अन्याय-अत्याचार-शोषण सहित।।
क्रोध-मान-माया-लोभ सहित, ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा-विद्वेष सहित।
संकीर्ण-कट्टर-क्रूरता युक्त, होता अधर्म स्व-पर दुःख दायक।।(4)
ऐसा अधर्म युक्त पूजा-पाठ, तीर्थयात्रा-प्रार्थना-पर्व-उत्सव।
समस्त धार्मिक क्रियाकाण्ड, केवल व्यापार-राजनीति सम।।
होते सांसारिक कार्य सम, संक्लेश द्वन्द-विषमता उत्पन्न।
इससे रहित होता सुधर्म, 'कनक लक्ष्य आत्म धर्म।।(5)

भीलूड़ा दि. 09.03.2019 मध्याह्न 12:48

इदं फलमियं क्रिया करणमेतदेषक्रमो,
व्ययोऽयमनुषङ्गजं फलमिदं दशैषा मम।
अयं सुहृदयं द्विषत्प्रयतदेशकालाविमा
विति प्रतिवितर्कयन् प्रयतते बुधो नेतरः।

यह इस कार्य का फल है, वह इसकी क्रिया है, यह इसका साधन है, यह क्रम है, इतना इसमें खर्च है, यह इस कार्य से होने वाला लाभ है, यह मेरी अवस्था

है, यह मेरा मित्र है, यह मेरा शत्रु है और यह देश है, क्षेत्र है, यह काल है, इस प्रकार का विचार करके कार्य में प्रवृत्ति विद्वान् ही करते हैं, मूर्ख लोग नहीं कर सकते। अर्थात् हेयोपदेय का विचार ज्ञानी को ही होता है।

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत नरश्चरितमात्मनः।
किन्नुमे पशुभिस्तुल्यं किन्नु सत्पुरुषैरिति।।

मनुष्यों को हमेशा अपने आचरित कार्यों को अवलोकन करना चाहिये और फिर विचार करना चाहिये कि आज मैंने कौन-कौन से कार्य तो पशु के समान किये और कौन-कौन से कार्य मनुष्य के समान किये। इस प्रकार हिताहित का विचार करने वाले को प्राज्ञः कहते हैं।

कृतज्ञः दूसरों के द्वारा किये हुये उपकार को मानता है, कृतघ्न नहीं बनता है, उपकार को नहीं भूलता है वह कृतज्ञ कहलाता है। सज्जन पुरुष पहिले तो किसी से उपकार कराते नहीं और यदि कोई उपकार कराते तो उसका उपकार कभी भूलते नहीं है। कृतज्ञता यह महान् गुण है इससे सम्पूर्ण कार्यों की सिद्धि होती है,जगत को वश में करने के लिये यह अमोघमंत्र है।

विधित्सुरेनं तदिहात्मवश्यं, कृतज्ञतायाःसमुपैहि पारं।
गुणैरुपेतोऽप्यखिलैः कृतघ्न, समस्तमुद्वेजयते हि लोकं।।

अर्थ- यदि तुम सम्पूर्ण जगत को अपने वश में करना चाहते हो तो प्रथम अर्थात् कृतज्ञता की सीमा को प्राप्त हो अर्थात् कृतज्ञ बनो। क्योंकि सम्पूर्ण गुणोंसे युक्त होने पर भी कृतघ्नी समस्त जगत को उद्वेजित करता है, पीड़ित करता है। इसलिये कृतज्ञता भी श्रावक धर्म में प्रधान गुण है।

वशी- जो इष्ट पदार्थों में आसक्ति न करता हुआ और विरुद्ध पदार्थों में प्रवृत्ति न करता हुआ, बाह्यमें स्पर्शनादि पंचेन्द्रिय विषयों के विकार का और अंतरंग काम, क्रोध, मद, मोह, लोभादि शत्रुओं का निरोध करते हैं अर्थात् उन पर विजय प्राप्त करते हैं उनको वशी कहते हैं। जो बाह्य में पंचेन्द्रिय के विषयों को रोकने के साथ में काम क्रोधादि अंतरंग विकारों को भी रोकता है वही वस्तुतः वशी कहलाता है, केवल ख्याति, पूजा, लाभादिक सम्बन्धी विषयनिग्रह तथा काम क्रोधादिक का निग्रह करने

वाला ही श्रावकधर्म धारण कर सकता है। इनके वशीभूत होने वाला श्रावकधर्म का पालन नहीं कर सकता है। इसलिये वशी (इन्द्रियों को वश में करना)होना भी श्रावक का गुण है।

धर्मविधि का सुनने वाला-धर्म का कारण धर्मविधि है, अर्थात् मोक्ष और स्वर्गादि सुख के कारण जो धर्मविधि कहते हैं और युक्ति आगम से सिद्ध धर्म के स्वरूप को जो प्रतिदिन सुनता है उसके धर्म की विधि को सुनने वाला कहते हैं। धर्म की विधि सुनने का अधिकारी कौन है? उसका वर्णन आत्मानुशासन में लिखा है।

भव्यः किं कुशलं ममेति विमृशन्दुःखाद्भृशं भीतवान्,
सौख्येषी श्रवणादिबिुद्धिविभवः श्रुत्वा विचार्य स्फुटम्।
धर्म कार्यकरं दयागुणमयं, यक्त्यागमाभ्यां स्थितं,
गृह्णन्धर्मकथाश्रुतावधिकृतः शास्यो निरस्ताग्रहः।।

जो भव्य हो, कौन से कार्य में मेरा कल्याण होगा, इस बात का अर्थात् अपने हित का विचार करने वाला हो, दुःखों से अत्यन्त करने वाला ही सुख को चाहने वाला हो, श्रोतापने के गुणों से युक्त हो, अर्थात् शास्त्रों के सुनने आदि में उत्तम बुद्धि रखने वाला हो, युक्ति तथा आगम से सिद्ध और सुख को करने वाले ऐसे दया गुणमयी धर्म को सुन करके तथा अच्छी तरह से विचार करके उसको ग्रहण करने वाला हो और जो दुराग्रह से रहित हो वही शिष्य हो, पुरुष ही धर्मकथा सुनने का अधिकारी माना गया है।

दयालुः दुःखी प्राणियों के दुःखनाश करने की इच्छा को दया कहते है। और जिनके परिणामों में दया हो, अर्थात् जो दया युक्त हो, उसको दयालु कहते हैं। 'धर्मस्य मूलं दया' ऐसा शास्त्र वचन है। इसलिये दया को अवश्य स्वीकार करना चाहिये। सो ही कहा है-

प्राणा यथाऽऽत्मनोऽभीष्टा भूतानामपि ते तथा।
आत्मौपम्येन भूतानां दयां कुर्वीत मानवः

जिस प्रकार तुमको अपना प्राण प्रिय है उसी प्रकार सम्पूर्ण जीवों को भी अपने-अपने प्राण प्रिय है, इसलिये मनुष्यों को अपने समान हो सम्पूर्ण प्राणियों पर दया करनी चाहिये।

श्रुयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत।।

धर्म के सार को सुनो तथा सुनकर उन पर विचार करो। क्योंकि सम्पूर्ण धर्म का सार यही है कि जो कार्य अपने प्रतिकूल है उन कार्यों को दूसरों के प्रति मत करो अर्थात् दूसरों के द्वारा किये गये जिन कार्यों से तुमको दुःख होता है उन कार्यों को तुम दूसरों के प्रति भी मत करो।

अवृत्तिव्याधिशोकार्तानननुबर्तेत शक्तितः।
आत्मवत्सततं पश्येदपि कीटपिपीलियाः।।

अर्थ-जो आजीविका के अभाव से रोग तथा शोकादिक से दुःखी हैं ऐसे प्राणियों की सदैव अपनी शक्ति के अनुसार सहायता करनी चाहिये। और छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़े चींटी आदि सम्पूर्ण जीवों को भी सदैव अपने समान ही देखना चाहिये। इसलिये दयालु होना भी श्रावकधर्म में एक मुख्य गुण है।

अघमीः- दृष्ट अदृष्ट(प्रत्यक्ष और परोक्ष) अपायस्वरूप फल देने वाल चोरी आदि मदिरापानादि पाप कर्म से भयभीत होने वाले को पापभीरू कहते हैं। अर्थात् अघ=पाप से डरने वाला अघभी कहलाता है। इन गुणों को धारण करने वाला श्रावकधर्म को पालन कर सकता है।

इस प्रकार संक्षेप से इस ग्रन्थ में श्रावक के विशेषणों का वर्णन किया है। विशेष रूप से वर्णन ज्ञानदीपिका नामक धर्मामृत की पंजिका में किया है, उसमें देखना चाहिये।

अब मन्दबुद्धि वाले शिष्यों के सुखस्मृति के लिये गृहस्थधर्म का संग्रह करते हैं।

पूर्ण सागारधर्म

सम्यक्त्वममलममलान्यणुगुणशिक्षाव्रतनि मरणान्ते।
सल्लेखना च विधिना पूर्णः सागारधर्मोऽयम्।।12।।

भावार्थ-शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, मूढ़दृष्टि, अनुपगृहून अस्थिती करण, अवात्सल्य, अप्रभावना येआठ दोष, ज्ञान का मद कुल आदि का गर्व करना आदि

आठ मद, तीन मूढता, छह अनायतन इन पच्चीस दोषों से रहित सम्यग्दर्शन तथा निरतिचार पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत का पालन करना और मरण समय में शास्त्रोक्त विधि से सल्लेखना धारण करना यह श्रावकों का पूर्ण धर्म है। इस श्लोक में च शब्द का प्रयोग है। उससे शेष बाकी बचे देवपूजा, गुरुपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप, दानादि श्रावक के धर्मों का ग्रहण किया है अर्थात् यह सब इसी में अन्तर्भूत हो जाते है। इसलिये दान पूजादि को पृथक् ग्रहण नहीं किया है। मरणान्ते सल्लेखना इस पद से यह अर्थ ग्रहण करना चाहिये।

आवीचिमरण, कषायमरण, तत्भवमरणादि 17 प्रकार के मरण शास्त्रों में कहे गये हैं। जो प्रतिसमय आयु कर्म के निषेक के उदय में आकर नष्ट होते हैं उसको आवीचिमरण कहते हैं। और पूर्ण वर्तमान आयु का नाश होकर दूसरे भव की प्राप्ति होना उसको तद्भवमरण कहते हैं। यहाँ पर मरणान्ते इस शब्द से तद्भवमरण ग्रहण करना चाहिये। क्योंकि आवीचिमरण हर समय प्रत्येक प्राणी के निरन्तर होता है। सल्लेखना=सत् सम्यक् प्रकार से ख्याति, पूजा, लाभादि अपेक्षा रहित लेखना=बाह्याभ्यन्तर तप के द्वारा शरीर और कषायों को कृश करना सल्लेखना कही जाती है।

असंयमी सम्यग्दृष्टि के भी कर्मक्लेष का अपकर्षण अर्थात् नाश होता है यह बताते हैं।

भूरेखादिसदृक्कषायवशगो यो विश्वदृश्वाज्ञया,
हेयं वैषयिकं सुखं निजमुपादेयं त्विति श्रद्धधत्।
चौरो मारयितुं धृतस्तलवरेणेवाऽत्मनिन्दादिमान्,
शर्माक्षं भजते रुजत्यपि परं नोत्तप्यते सोऽप्यघैः।।13

भावार्थ- जिस प्रकार कोतवाल के द्वारा मारने के लिये पकड़ा हुआ चोर-चोरी बुरी समझता है, उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि जीव सर्वज्ञ भगवान की आज्ञा से अर्थात् वीतराग प्रभु ने सांसरिक सुखों को छोड़ने योग्य पाप का कारण बताया है, भगवान् अन्यथा(असत्य)वादी नहीं है, इस प्रकार भगवान् के वचनों पर दृढ़ विश्वास होने से अनुभयमान इष्टकामिन्यादि विषयों से उत्पन्न होने वाले विषय सुख विनाशीक है, दुःख के कारणभूत कर्मबन्ध के कारण है, इसलिये छोड़ने योग्य है, और अविनाशी आत्मीय सुख उपादेय है तथा रत्नत्रय के उपयोग से आत्मा में निज सुख उत्पन्न करने

योग्य है। इस प्रकार श्रद्धान अर्थात् निश्चय से सम्यग्दर्शन धारण करने वाला होता हुआ, हाथ में दीपक रहते हुये भी अन्धकुप में गिरने वाला मुझको धिक्कार है, इस प्रकार अपनी आत्मा की निंदा और ''हे भगवन् उन्मार्ग पर चलने वाला यह प्राणी दुर्गति के दुखों को कैसे भोगेगा'' इस प्रकार गुरु की साक्षी पूर्वक-गुरु के सामने गर्हा करता हुआ अविरत सम्यग्दृष्टिजीव पृथ्वी के रेखादि के समान अप्रत्याख्यानावरणादिक बारह क्रोधादिक कषायों के वश में होकर अर्थात् चारित्र मोहनीय की परतंत्रता से इन्द्रियों से उत्पन्न होने वाले सुखों का सेवन करता है तथा त्रस स्थावर जीवों को पीड़ा देता हैं- उनकी हिंसा करता है तो भी वह अविरतसम्यग्दृष्टि जीव पापों के द्वारा अथवा बहुत से दोषों के द्वारा उत्कृष्ट संक्लेश को प्राप्त नहीं होता है। इसका सारांश यह है कि जैसे कोतवाल के द्वारा मारने के लिये पकडा हुआ तस्कर खरारोहण कृष्णमुख करना आदि अनेक प्रकार की जो-जो विडम्बना कोतवाल कराता है उन सब चेष्टाओं को अयोग्य जानता हुआ भी करता है। उसी प्रकार चारित्र मोह के वशीभूत हुआ अविरतसम्यग्दृष्टि भावहिंसा, द्रव्या हिंसा आदि जीवों जो-जो कार्य चारित्र मोहनीय कराता है उनको अयोग्य जानता हुआ भी, करता है क्योंकि कर्मो को उदयकाल में उनको रोकना दर्निवार है। फिर भी मिथ्यादृष्टि के समान दुःखभाक् नहीं होता है।

न दुःखबीजं शुभदर्शनक्षितौ कदाचन क्षिप्तमपि प्ररोहति।
सदाप्यनुप्तं सुखबीजमुत्तमं कुदर्शनि तद्विपरीतमिष्यते।।

सम्यग्दर्शन भूमि में यदि दुःख के बीज पड़ भी जावे तो भी वे कभी भी शीघ्र अंकुरित नहीं होते है। और सुख के बीज बिना बोये भी हमेशा उत्पन्न होते हैं। परन्तु मिथ्यादर्शन रूपी भूमि में उससे विपरीत फल होता है अर्थात् मिथ्यादर्शनरूपी भूमि में सुख के बीच बोने पर भी उत्पन्न नहीं होते हैं और दुःख के बीज बिना बोये उत्पन्न होते हैं। इस लिये यह निश्चित हुआ कि अविरतसम्यग्दृष्टि जीव भी जिसने पहिले मिथ्वात्व अवस्था में आयु का बंध नहीं किया है तो वह स्वर्ग का देव पद तथा चक्रवर्ती पद, तीर्थंकर पद आदि सुमानुषत्वादि पर्याय को छोड़कर सम्पूर्ण संसार के दुःखमय कर्मों का नाश कर देता है अर्थात् सम्यग्दृष्टि जीव मानव पर्याय वा विमानवासी देवपर्याय को छोड़कर और पर्यायों में जन्म धारण नहीं करता है। परन्तु जो बद्धायुष्क

के अर्थात् जिसने मिथ्यात्व अवस्था में नरक तिर्यंच आयु का बन्ध किया है, पश्चात् सम्यग्दर्शन ग्रहण किया है ऐसे जीव नरक में जायेंगे तो भी प्रथम नरक की जघन्य या मध्यम स्थिति को प्राप्त होंगे, उत्कृष्ट स्थिति को प्राप्त नहीं होंगे। दूसरे तीसरे नरक में सम्यक्त्व सहित जीव उत्पन्न नहीं हो सकता है। और प्रथम नरक में उत्कृष्ट स्थिति वाला नहीं हो सकता है।

दुर्गतावापुषो बंधात्सम्यक्त्वं यस्य जायते।
गतिच्छेदो न तस्यास्ति तथाप्यल्पतरा स्थितिः।।

नरकादि दुर्गति की आयु बन्धन के बाद में जिसको सम्यक्त्व हुआ है यद्यपि उसके गतिच्छेद तो नहीं होता है अर्थात् नरक जाना ही पड़ता है फिर भी स्थिति अल्प हो जाती हैं। जैसे श्रेणिक राजा ने मिथ्यात्व अवस्था में सातवें नरक की उत्कृष्ट तैतीस सागर की आयु का बन्ध किया था परन्तु सम्यक्त्व होने के बाद में तैतीस सागर की आयु का नाश कर प्रथम नरक में 84 हजार वर्ष की आयुवाला नारकी हुआ। सम्यग्दृष्टि तिर्यंच में जायेगा तो भोगभूमि में जायेगा, कर्मभूमि का तिर्यंच नहीं होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि सम्यग्दृष्टि के बहुत से दुःखों का उपरम हो जाता है। अतः जब तक संयम की प्राप्ति न हो तब तक संसार भीरु सम्यग्दृष्टि को निरन्तर सम्यग्दर्शन की आराधना में तत्पर रहना चाहिये अर्थात् सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के लिये सदैव प्रयत्न करना चाहिये

जन्मोन्मार्ज्यं भजतु भवत्: पादपद्मं न लभ्यं,
तच्चैस्त्वैरं चरतु न च दुर्देवतां सेवतां सः।
अश्नात्यन्नं यदिह सुलभं दुर्लभ चेन्मुधाऽस्ते,
क्षुद्व्यावृत्यै कवलयति कः कालकुटं बुभुक्षुः।।

हे देव! भव्य जीवों को जन्म मरण रूपी दुःखों के नष्ट करने वाले आपके चरण कमलों का ही सेवन करना चाहिये। यदि कदाचित्आपके चरणकमल प्राप्त न हो सकें तो फिर वे भले ही स्वच्छन्दतापूर्वक आचरण करे। किन्तु उनको कुदेवों को सेवन नहीं करना चाहिये। क्योंकि संसार में सुलभ जो अन्न है उस अन्न को ही सब लोग खाते हैं। यदि उस अन्न का मिलना दुर्लभ हो जावे तो वे भूखे ही बैठे रहते हैं। कारण कि ऐसा कौन पुरुष होगा जो कि क्षुधा को दूर करने के लिये विष को खावेगा।

भावार्थ-जिनेन्द्र भगवान् के चरण कमल ही सेवन करने के योग्य है। अतः उनका ही सेवन करना चाहिये। यदि वे न मिलेंतो उनकी सेवा के बिना तो रहना-अच्छा है,किन्तु कुदेवों का सेवन करना अच्छा नहीं है क्योंकि सबलोग अन्न को ही खाते हैं। यदि अन्न नहीं मिले तब क्या विष खाना चाहते हैं। इस श्लोक में नौत्तप्यते सोऽत्वद्यैः इससे यह सूचित है कि अविरत सम्यग्दृष्टि जीव भी पापों के द्वारा अधिक सक्लेशित नहीं होता है, फिर जिन्होंने महाव्रत या अणुव्रत धारण किये हैं उनका तो कहना ही क्या, वह तो कभी भी दुःखभाग् नहीं होवेंगे।

इस समय धर्म और सुख के समान यश भी चित्त को प्रसन्न करने वाला है, इसलिये सज्जन पुरुषों को यश भी उपार्जन करना चाहिये ऐसा दिखाते हैं-

धर्म यशः शर्मं च सेवमानाः,
केप्येकशो जन्म विदुः कृतार्थम्।
अन्ये द्विशो विद्म वयं त्वमोघा,
न्यहानि यन्ति त्रयसेवयैव।।14।।

भावार्थ- संसारी प्राणी भिन्न-भिन्न रुचिवाले होते हैं एक-सी रुचि किसी भी नहीं होती है, इसलिये इस संसार में कोई यश और सुख को छोड़कर केवल धर्म के सेवन से ही अपने मानव जन्म की सफलता मानते हैं और कोई पुरुष धर्म तथा सुख को छोड़कर केवल यश की सिद्धि से हो मनुष्य जन्म को सफल मानते हैं। कोई पुरुष धर्म और यश को छोड़कर केवलसुख के सेवन से ही मानव जन्म की कृतार्थता मानते हैं। तथा लोक व्यवहार के अनुसार चलते हुये अपने को शास्त्रों का ज्ञाता मानने वाले कोई पुरुष सुख को छोड़कर केवल धर्म अथवा यश के द्वारा ही अपने को कृतार्थ मानते हैं और कोई पुरुष धर्म को छोड़कर केवल सुख अथवा यश की सिद्धि द्वारा ही अपने मनुष्यजन्म को सफल मानते हैं। किन्तु ग्रन्थकार कहते हैं। कि लौकिक व्यवहार तथा शास्त्रों को जानने वाले पुरुषों को सन्तोषित करने वाले हम लोग तो धर्म, यश और सुख इन तीनों को सेवन करने से व्यतीत होने वाल मनुष्य जन्म सम्बन्धित दिनों को ही सफल मानते हैं। इस श्लोक में त्रयसेवयैव, इसमें जो एव कार शब्द दिया गया है उससे सूचित होता है कि धर्म, यश और सुख इन तीनों के सेवन से ही मनुष्यजन्म की सफलता हो सकती है। एक-एक के या दो के सेवन करने से

नहीं हो सकती है।

विरोधान्नो भयैकात्म्यं स्याद्वादन्यायविद्विषाम्।

अवाच्यतैकान्तेऽप्युक्तिर्नावाच्यमिति युज्यते।।190।। आ. मीमासा

अर्थ- स्याद्वाद न्याय से द्वेष रखने वालों के यहाँ विरोध आने के कारण उभयैकात्म्य नहीं बनता है और अवाच्यतैकान्त में भी अवाच्य शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

अबुद्धि पूर्वापेक्षायामिष्टनिष्टं स्वदैवतः।

बुद्धिपूर्वव्यपेक्षायामिष्टानिष्टं स्वपौरुषात्।।।91

अर्थ :- किसी को अबुद्धि पूर्वक जो इष्ट और अनिष्ट अर्थ को प्राप्ति होती है, वह अपने दैव से होती है। और बुद्धिपूर्वक जो इष्ट और अनिष्ट अर्थ की प्राप्ति होती है वह अपने पौरूष से होती है।

पापं ध्रवुं परे दुःखात् पुण्यं च सुखतो यदि।

अचेतनाकषायौ च बध्येयातां निमित्ततः।।92।।

अर्थ :- यदि दूसरों से दुःख देने से पाप का बंध और सुख देने से पुण्य का बंध होता है। तो दूसरों के सुख और दुःख में निमित्त होने से अचेतन पदार्थ और कषाय से रहित जीवों को भी कर्म बंध होना चाहिये।

पुण्यं ध्रवुं स्वतो दुःखात्पापं च सुखतो यदि।

वीतरागो मुनि र्विद्वांस्ताभ्यां युञ्ज्यनिमित्ततः।।93।।

अर्थ- यदि अपने को दुःख देने से पुण्य का बंध और सुख देने से पाप का बंध होता है, तो वीतराग और विद्वान मुनि को भी कर्मबंध होना चाहिऐ, क्योंकि वे भी अपने सुख और दुःख में निमित्त होते हैं।

विशुद्धि संक्लेशाङ्गं चेत् स्वपरस्थं सुखासुखम्।

पुण्यपापस्रवौ युक्तो न चेद्व्यर्थस्तावार्हतः।।95।।

अर्थः- यदि अपने और दूसरों में होने वाला सुख, दुःख यदि विशुद्धि का अंग है, तो पुण्य का आस्रव होता है,और यदि संक्लेश का अंग है, तो पाप का आस्रव होता है। हे भगवान् आपके मत में अपने और दूसरे में स्थित सुख और दुःख विशुद्धि

और संक्लेश के कारण नहीं है, तो पुण्य और पाप का आस्रव व्यर्थ है।

अज्ञानाच्चेद्ध्रुवो बन्धो ज्ञेयानन्त्यान्न केवली।

ज्ञानस्तोकाद्विमोक्षश्चेदज्ञानद्बहुतोन्यथा।।96।।

अर्थ :- यदि अज्ञान से नियम से बंध होता है, तो ज्ञेय पदार्थ अनंत होने से कोई भी केवली नहीं हो सकता है। यदि अल्प ज्ञान से मोक्ष की प्राप्ति होती है, तो बहुत अज्ञान से बंध की प्राप्ति भी होगी।

अज्ञानान्मोहतो बन्धो नाज्ञानाद्वीतमोहतः।

ज्ञानस्तोकाच्च मोक्षः स्यादमोहान्मोहिनोऽन्यथा।।98।।

अर्थः- मोह सहित ज्ञान से बंध होता है और मोह रहित अज्ञान से बंध नहीं होता है। इसी प्रकार मोह रहित अल्पज्ञान से मोक्ष होता है, किन्तु मोह सहित ज्ञान से मोक्ष नहीं होता है।

कामादिप्रभवश्चित्रः कर्मबन्धानुरूपतः।

तच्च कर्म स्वहेतुभ्यो जीवास्ते शुद्धयशुद्धितः।।99।।

अर्थ :- इच्छा और नाना प्रकार के कार्यों की उत्पत्ति कर्मबंध के अनुसार होती है। और उस कर्म की उत्पत्ति अपने हेतुओं से होती है। जिन्हें कर्मबंध होता है वे जीव शुद्धि और अशुद्धि के भेद से दो प्रकार के होते हैं।

शुद्ध्यशुद्धी पुनःशक्ति ते पाक्यापाक्यशक्तिवत्।

साद्यनादी तयोर्व्यक्ती स्वभावोऽतर्कगोचरः।।100।।

अर्थ :- पाक्य और अपाक्य शक्ति की तरह शुद्धि और अशुद्धि ये दो शक्तियाँ हैं। शुद्धि की व्यक्ति सादि और अशुद्धि की व्यक्ति अनादि है। क्योंकि स्वभाव तर्क का विषय नहीं होता है।

तत्त्वज्ञानं प्रमाणं ते युगपत्सर्वभासनम्।

क्रमभावी च यज्ज्ञानं स्याद्वादनयसंस्कृतम्।।101

अर्थः- हे भगवन् आपके मत में तत्त्वज्ञान को प्रमाण कहा है। वह तत्त्वज्ञान अक्रमभावी और क्रम भावी के भेद से दो प्रकार का है। जो एक साथ संपूर्ण पदार्थों को जानता है, ऐसा केवलज्ञान अक्रमभावी है। तथा जो क्रम से पदार्थों को जानते हैं

ऐसी मति आदि चार ज्ञान क्रमभावी है, अक्रमभावी ज्ञान स्याद्वाद रूप होता है। किन्तु क्रमभावी ज्ञान स्याद्वाद और नय दोनों रूप होता है।

उपेक्षाफलमाद्यस्य शेषस्यादानहानधीः।

पूर्वा वाऽज्ञाननाशो वा सर्वस्यास्य स्वगोचरे।।।102।।

अर्थ :- प्रथम जो केवलज्ञान है, उसका फल उपेक्षा है। अन्य ज्ञानों का फल आदान और हान बुद्धि है। अथवा उपेक्षा भी उनका फल है। वास्तव अपने विषय में अज्ञान का नाश होना सब ज्ञानों का फल है।

वाक्येष्वनेकान्तद्योती गम्यं प्रति विशेषकः।

स्यान्निपातोऽर्थयोगित्वात्तव केवलिनामपि।।103।।

अर्थ :- हे भगवन, आपके स्यात् शब्द का अर्थ के साथ संबंध होने के कारण 'स्यादस्ति पटः' इत्यादि वाक्यों में अनेकांत का द्योतक होता है। और गम्य अर्थ का विशेषण होता है। स्यात् शब्द निपात है,तथा केवलियों और श्रुतकेवलियों को भी अभिमत है।